खण्ड 1

Block 1

इकाई 1: संस्कृत भाषा : एक परिचय

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 विश्व के प्रमुख भाषा परिवार एवं संस्कृत भाषा
1.4 भारत में पाए जानेवाले भाषा परिवार
1.5 संस्कृत भाषा का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक महत्व
1.6 आधुनिक भारतीय भाषा के रुप में संस्कृत
1.7 संस्कृत साहित्य
1.7.1 वैदिक साहित्य एवं लौकिक साहित्य
1.8 सारांश
1.9 अभ्यास प्रश्न
1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.11 संदर्भ एवं सहयोगी ग्रंथ

1.1 प्रस्तावना

देवभाषा के रूप में प्रसिद्ध संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। यह एक शास्त्रीय भाषा है। यह प्राचीन काल में जन समान्य एवं विशिष्ट जन दोनों के संप्रेषण की भाषा थी। यह साहित्य की भी भाषा थी। इस भाषा के साहित्य में भारत वर्ष के सभ्यता एवं संस्कृति की समग्र झलक मिलती है। संस्कृत भाषा का सबसे प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद है जिसकी रचना लगभग ढाई हजार इसवी पूर्व मानी जाती है। इसके दो रूप हैं - वैदिक संस्कृत एवं लौकिक संस्कृत। वैदिक संस्कृत को छांदस भी कहा जाता है और इसकी सीमा चारों वेदों तक है। इसके बाद के संस्कृत को लौकिक संस्कृत कहा जाता है। यद्यपि संस्कृत एक प्राचीन भाषा है एवं प्राचीन काल में इसका अध्ययन-अध्यापन व्यापक स्तर पर होता था। इसका अध्ययन-अध्यापन न सिर्फ ज्ञान की एक शाखा के रुप में किया जाता था बल्कि यह अन्य विषयों के अध्ययन-अध्यापन का माध्यम भी था। कालांतर में राजनैतिक कारणों एवं विदेशी आक्रमण के कारण भारत में अन्य भाषाओं का प्रभुत्व हुआ एवं संस्कृत के महत्व में कमी आने लगी। भारत में अंग्रेजों के आगमन के कारण अंग्रेजी भाषा का बहुत प्रचार-प्रसार हुआ। हिंदी एवं उर्दू का उदभव पहले ही हो चुका था। अंग्रेजी शासकों की भाषा थी। शासकों द्वारा संपोषित होने तथा राजकाज की भाषा होने के कारण इसका प्रभाव व्यापक हो गया तथा संस्कृत का महत्व कम होता गया। कालंतर में इसका लिखित एवं मौखिक प्रयोग न के बराबर हो गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार द्वारा संस्कृत भाषाके उत्थानके

लिए प्रयास किए गए। इसे ज्ञान की एक शाखा के रुप में विद्यालयी शिक्षा में स्थान दिया गया। कालांतर में इसकी प्रस्थिति में फिर परिवर्तन हुआ। इसका स्थान पाठ्यक्रम में वैकल्पिक भाषा का हो गया। अंग्रेजी एवं तकनीकी के बढ़ते प्रभाव के कारण संस्कृत भाषा में रोजगार के अवसर कम हो गए एवं इसकी सामाजिक प्रतिष्ठा में ह्रास हुआ। जन सामान्य में इस भाषा के प्रति अरुचि उत्पन्न हो गई। धीरे-धीरे अरुचि की मात्रा बढ़ती गई और वर्तमान परिवेश में संस्कृत भाषा के प्रति जन सामान्य में व्यापक अरुचि है। पाठ्यक्रम में इसका स्थान वैकल्पिक विषय के रूप में होने के कारण विद्यार्थी चाहे तो इसे पढ़ सकते हैं और चाहे तो नहीं। सिर्फ कुछ पारंपरिक संस्कृत विद्यालयों में ही संस्कृत को अनिवार्य रूप से पढ़ाया जा रहा है। पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान नहीं होने के कारण विद्यार्थियों का इस भाषा के प्रति बचा-खुचा आकर्षण भी समाप्त होता गया। पीछले दो-तीन दशकों में इसके उत्थान के लिए सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थानों द्वारा निरंतर प्रयास किए जा रही हैं। इन प्रयासों को सफलता भी मिली है। लेकिन अभी इस क्षेत्र में और कार्य करने की आवश्यकता है। वर्तमान में इसकी स्थिति द्वितीय भारतीय भाषा की है और यह दैनिक कार्यकलाप की भाषा भी नहीं है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि अधिकांश विद्यार्थियों ने सिर्फ संस्कृत भाषा का नाम ही सुन रखा है। अतः, संस्कृत भाषा के प्रशिक्षु शिक्षकों को संस्कृत भाषा का परिचय कराना आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई की रचना इसी उद्देश्य से की गई है।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी इस योग्य हो जाएँगे कि -

1. संस्कृत साहित्य का परिचय दे सकेंगे।
2. विश्व के विभिन्न भाषा परिवारों का उल्लेख कर सकेंगे।
3. भारत में पाए जानेवाले भाषा परिवार को नामांकित कर सकेंगे।
4. संस्कृत भाषा के महत्व की चर्चा कर सकेंगे।
5. आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में संस्कृत की प्रस्थिति का वर्णन कर सकेंगे।
6. संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त परिचय दे सकेंगे।
7. वैदिक एवं लौकिक साहित्य में अंतर स्थापित कर सकेंगे।

1.3 विश्व के प्रमुख भाषा परिवार एवं संस्कृत भाषा

जिस प्रकार विभिन्न रक्त संबंधित सदस्यों के समूह को परिवार की संज्ञा दी जाती है उसी प्रकार आपस में संबंधित भाषाओं को भाषा परिवार की संज्ञा दी जाती है। प्रत्येक भाषा की अपनी विशेषता होती है और अपनी विशेषताओं के आधार पर वो अन्य भाषाओं से साम्य और वह वैषम्य रखता है। यह साम्य और वैषम्य मुख्यतः दो आधारों पर देखा जाता है। प्रथम आकृति मूलक आधार और द्वितीय अर्थ तत्व संबंधी आधार। आकृति मूलक आधार में शब्दों और वाक्यों की रचना शैली के आधार पर विभिन्न भाषाओं में

समानता एवं असमानता देखी जाती है। अर्थ तत्व संबंधी आधार पर वर्गीकरण करते समय अर्थ के आधार पर विभिन्न भाषाओं में समानता एवं असमानता देखी जाती है। 19 वीं सदी में विद्वानों ने इस क्षेत्र में कार्य करना प्रारंभ किया। उस समय से लेकर आज तक इस क्षेत्र में निरंतर कार्य हो रहे हैं। लेकिन विडंबना यह है कि अभी तक कोई सर्वमान्य वर्गीकरण प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। विद्वानों में बहुत मतभेद है। इस मतभेद का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि एक ओर जहाँ फ्रेड्रिक मूलर ने भाषा परिवारों की संख्या 100 के आसपास बताई है वहीं दूसरी ओर राइस विश्व के समस्त भाषाओं के लिए एक ही भाषा परिवार मानाते हैं। विश्व भर में बोली जाने वाली लगभग 7000 भाषाओं को विद्वानों द्वारा निम्नलिखित भाषा-परिवारों में विभाजित किया गया है। उनमें से कुछ प्रमुख भाषा परिवार निम्नलिखित हैं:

i. भारोपीय भाषा परिवार
ii. चीनी-तिब्बती भाषा परिवार
iii. सामी-हामी भाषा परिवार
iv. द्रविड़ भाषा परिवार
v. युराल-अल्ताई भाषा परिवार
vi. ऑस्ट्रोनेशियन भाषा परिवार
vii. एशियन भाषा परिवार
viii. ऑस्ट्रिक भाषा परिवार
ix. कांगो भाषा परिवार
x. ताइ-कदाई भाषा परिवार
xi. सूडानी भाषा परिवार
xii. बंटू भाषा परिवार
xiii. अत्यंत दुश्मनी भाषा परिवार
xiv. मलय-पामेशियन भाषा परिवार
xv. ऑस्ट्रेलियाई भाषा परिवार
xvi. अमरिकी भाषा परिवार
xvii. दक्षिण पूर्व एशियाई भाषा परिवार

संस्कृत भारोपीय परिवार की के भाषा है जिसके विषय में हम भारत के भाषा परिवार वाले खंड में पढ़ेंगे।

1.4 भारत में पाए जाने वाले भाषा परिवार

भारत विविधताओं का देश है। ये विविधाता बहुपक्षीय है। यहाँ धर्म, जाति, संस्कृति, भाषा सभी स्तरों पर पाई जाती है। यहाँ 100 से भी अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं। इन भाषाओं को यदि भाषा परिवार में

वर्गीकृत किया जाए तो विश्व के प्रमुख भाषा परिवारों में से भारत में 5 भाषा परिवार की भाषाएँ बोली जाती हैं। ये पाँच भाषा परिवार निम्नलिखित हैं:

i. भारोपीय परिवार
ii. द्रविड़ भाषा परिवार
iii. एस्ट्रोएशियाटिक भाषा परिवार
iv. चीनी-तिब्बती भाषा परिवार
v. ताइ-कदाई भाषा परिवार

भारत में बोले जाने वाले इन भाषा परिवारों में सबसे ज्यादा लोगों द्वारा भारोपीय परिवार की भाषाएँ बोली जाती है| संस्कृत भी भारोपीय परिवार की एक भाषा है। भारोपीय परिवार की भाषाओं को दो भागों में बाँटा जाता है। ये दो वर्ग हैं – सतम वर्ग एवं केंटुम वर्ग। निम्नलिखित तालिका में भारतीय परिवार की भाषाओं के वर्गीकरण का स्पष्ट चित्रण किया गया है:

तालिका 1: भारोपीय परिवार की भाषाओं का वर्गीकरण

भारोपीय परिवार	
सतम वर्ग	केंटुम वर्ग
संस्कृत	लैटिन
हिंदी	ग्रीक
अवेस्ता	जर्मनी
फारसी	केल्टिक
स्लाविक	तोखारी
बाल्टिक	आयरिश
लिथुआनियन	अंग्रेजी

संस्कृत भारोपीय परिवार के सतम वर्ग की एक भाषा है। यह विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। संस्कृत शब्द का निर्माण 'कृ' धातु में 'सम' उपसर्ग के योग से हुआ है। इसका मूल अर्थ है संस्कार की हुई भाषा। भाषा विज्ञानी भी इस बात को मानते हैं कि विश्व की समस्त भाषाओं में से केवल दो ही भाषाएँ ऐसी हैं जिनके बोलने वालों ने संस्कृति अथवा सभ्यता के विकास में अपना योगदान दिया है। प्रथम आर्य भाषा तथा द्वितीय सीमेंटिक। आर्य भाषा की दो शाखाएँ मानी जाती है – प्रथम पश्चिमी शाखा एवं द्वितीय पूर्वी शाखा। पश्चिमी शाखा के अंतर्गत यूरोप की सभी प्राचीन तथा आधुनिक भाषाओं को स्थान दिया गया है। पूर्वी शाखा के दो मुख्य भाग है - ईरानी एवं भारतीय। भारतीय शाखा की मुख्य भाषा संस्कृत है। अतः, संस्कृत उन प्राचीन भाषाओं में से एक है जिनके बोलने वालों ने सभ्यता का विकास किया है।

भाषा के अर्थ में 'संस्कृत' शब्द का प्रयोग पहली बार वाल्मीकि कृत 'रामायण' में मिलता है। 'सुंदर कांड' में सीता जी से किस भाषा में वार्तालाप किया जाए , इस प्रश्न पर विचार करते हुए हनुमान जी ने कहा है कि यदि द्विज के समान मैं संस्कृत वाणी बोलूँगा तो सीता मुझे रावण समझकर डर जाएगी।

यास्क और पाणिनि के ग्रंथों में लोक व्यवहार में आने वाली बोली का नाम भाषा है। जब भाषा का सर्वसाधारण में प्रयोग कम होने लगा और पाली तथा प्राकृत भाषाएँ बोल-चाल की भाषा बन गईं तब प्राकृत भाषा से भेद दिखाने के लिए विद्वानों ने इसका नाम संस्कृत दे दिया। दंडी (सप्तम शतक) ने प्राकृत भाषा से भेद दिखाने के अवसर पर संस्कृत का प्रयोग भाषा के लिए किया है -

'संस्कृतनाम देवी वादनव्याख्याता महर्षिभि:' (काव्यादर्श, 133)।

इसके दो रूप थे वैदिक संस्कृत एवं लौकिक संस्कृत। वैदिक-संस्कृत चारों वेदों, वेदांग, पुराण, ब्राह्मण, आदि की भाषा थी। इसके इतर जितने भी ग्रंथ हैं उन सब की भाषा लौकिक संस्कृत है। वैदिक संस्कृत तो पहले ही लुप्त हो चुका था। कालांतर में पाली और प्राकृत के विकास के कारण लौकिक संस्कृत का प्रयोग जन सामान्य की भाषा के रुप में कम हो गया। लौकिक संस्कृत सिर्फ साहित्य की भाषा बनकर रहा गई थी। साहित्यकार भी इसी समाज के सदस्य होते हैं। उनकी साहित्य सर्जन की योग्यता का विकास समाज में ही होता है और समाज के लिए ही वे साहित्य की रचना करते हैं। लौकिक संस्कृत का प्रयोग कम होने का कारण इस भाषा के साहित्यकार भी समाप्त होने लगे और पाठक भी समाप्त होने लगे। धीरे–धीरे यह भाषा ज्ञान की एक शाखा के रुप में विद्यालयी पाठ्यक्रम में अपना स्थान बनाकर सीमित हो गई। कुछ समय तक इसका स्थान विद्यालयी पाठ्यक्रम में द्वितीय अनिवार्य भारतीय भाषा का था। कालांतर में यह ऐच्छिक हो गई। ऐच्छिक होने एक कारण विद्यार्थियों ने इस भाषा का अध्ययन करना बिल्कुल समाप्त कर दिया। आज यह भाषा अपने उत्थान की प्रतिक्षा कर रही है। इसके उत्थान के लिए विगत तीन-चार दशकों से निरंतर प्रयास किए जा रहे हैं। सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों प्रकार के प्रयास इसा भाषा के उत्थान के लिए किए जा रहे हैं। इन प्रयासों को सफलता भी मिल रही है। लेकिन ये प्रयास अभी पर्याप्त नहीं है। अभी और प्रयास की आवश्यकता है।

अभ्यास प्रश्न

1. विश्व में लगभग कितनी भाषाएँ बोली जाती हैं।
2. विश्व के प्रमुख भाषा परिवारों को सूचीबद्ध करें।
3. भारत के प्रमुख भाषा परिवारों को सूचीबद्ध करें।
4. संस्कृत किस भाषा परिवार से संबंध रखती है।
5. विभिन्न भाषाओं में साम्य एवं वैषम्य _______आधार और अर्थ तत्व संबंधी आधार पर देखा जाता है।
6. अर्थ तत्व संबंधी आधार पर वर्गीकरण करते समय _______ के आधार पर विभिन्न भाषाओं में समानता एवं असमानता देखी जाती है।
7. फ्रेड्रिक मूलर ने भाषा परिवारों की संख्या _______ के आसपास बताई है।

8. ______ विश्व के समस्त भाषाओं के लिए एक ही भाषा परिवार की बात की है।
9. भारत में सर्वाधिक लोगों द्वारा ______भाषा परिवार की भाषा बोली जाती है।
10. भारोपीय परिवार की भाषाओं को दो भागों ______एवं ______में बाँटा जाता है।

1.5 संस्कृत भाषा का सामाजिक सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक महत्व

संस्कृत भाषा व्यवहारिक रूप से बहुत कम व्यक्तियों द्वारा प्रयोग में लाई जाती है। लेकिन इसका आशय यह कदापि नहीं है कि यह एक मृत भाषा है। इसे विद्यालयी पाठ्यक्रम में ज्ञान की एक शाखा के रूप में स्थान दिया गया है और इसका शिक्षण कार्य किया जाता है। इस दृष्टि से यह भाषा आज भी महत्वपूर्ण है। इसके महत्व को निन्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से और भी स्पष्ट किया जा सकता है:

i. **प्राचीनतम भाषा-** संस्कृत भाषा विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में से एक है। सभ्यता के आरंभ में अन्य देशों में जब लोगों का आचरण पशुवत था और वे संप्रेषण के लिए सांकेतिक भाषा का प्रयोग करते थे तब भारतीय निवासी एक ऐसी सम्मृद्ध भाषा का प्रयोग कर रहे थे जो अत्यंत ही वैज्ञानिक थी और जिसका साहित्य अद्वितीय था। इतना प्राचीन साहित्य अन्य किसी भी भाषा में उपलब्ध नहीं है। इसकी प्राचीनता इसके महत्व को स्थापित करती है।

ii. **शास्त्रों की भाषा -** संस्कृत शास्त्रों की भाषा है। प्राचीन भारतीय वांगमय की भाषा संस्कृत ही है। इस वांगमय का क्षेत्र अत्यंत ही व्यापक है। इसमें मानव जीवन के चारों पुरषार्थ- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से संबंधित साहित्य शामिल हैं। समस्त प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान संस्कृत में ही लिखे गए हैं। आर्यभट्ट के समस्त कार्य संस्कृत में ही है। ब्रह्मगुप्त ने गणित विषय की अपनी पुस्तक 'लीलावती' की रचना संस्कृत में ही की थी। यहाँ तक कि 20 वीं सदी में संगीत शास्त्र के प्राचीन विद्वान भातखंडे ने संगीत शास्त्र पर आधारित एक ग्रंथ की रचना संस्कृत भाषा में की थी। इस प्रकार संस्कृत ज्ञान-विज्ञान की भाषा है। संस्कृत भाषा के ज्ञान के बिना भारतीय ज्ञान-विज्ञान को समझना संभव नहीं है। अतः, भारतीय ज्ञान-विज्ञान को समझने के लिए या यूँ कहे कि भारतीय संस्कृति को समझने के लिए संस्कृत भाषा महत्वपूर्ण है।

iii. **वैज्ञानिक व्याकरण-** संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यंत ही वैज्ञनिक है। इसके जो नियम प्राचीन काल में पाणिनी जैसे महान वैयाकरण द्वारा प्रतिपादित किया गया था वो आज भी प्रासंगिक है। उनमें कभी किसी प्रकार का कोई भी परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। व्याकरण किसी भी भाषा की आत्मा होती है। इसकी वैज्ञनिकता भाषा के महत्व को प्रमाणित करती है।

iv. **अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं की जननी-** संस्कृत को लगभग सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं की जननी मानी जाती है। इसका कारण यह है कि लगभग सभी भारतीय भाषाओं में संस्कृत भाषा के शब्द पाए जाते हैं। यहाँ तक कि दक्षिण भारतीय भाषाओं या द्रविड़ परिवार की भाषाओं में भी संस्कृत भाषा के शब्द बहुतायत में पाए जाते हैं। अनेक भाषाओं की जननी होने के कारण यह इसका स्थान विभिन्न भारतीय भाषाओं में अग्रणी है।

v. **संस्कारों की भाषा-** भारतीय परंपरा में जन्म से लेकर मृत्यु तक 16 मुख्य संस्कार बताए गए हैं। इसके इतर भी कुछ संस्कार हैं। प्रत्येक संस्कार शास्त्र सम्मत है अर्थात प्रत्येक संस्कार का वर्णन शास्त्रों में हैं और इनके संपादन के लिए शास्त्रों में विधि-विधान का वर्णन भी किया गया है। शास्त्रों की भाषा संस्कृत है। अतः, संस्कारों की भाषा भी संस्कृत है और इस भाषा के ज्ञान के अभाव में हम अपने संस्कारों का समुचित ढंग से ना समझ सकते हैं और न ही उनका निर्वहन कर सकते हैं। अतः संस्कारों की दृष्टि से भी संस्कृत भाषा महत्वपूर्ण है।

vi. **प्राचीन भारतीय इतिहास का ज्ञान स्रोत -** संस्कृत साहित्य से हमें प्राचीन भारतीय इतिहास का पता चलता है। इतिहास के अध्ययन के लिए वैदिक कालीन ग्रंथों, पुराणों, स्मृतियों एवं अन्य ग्रंथों को प्रामाणिक स्रोत माना जाता है। इन ग्रंथों के अध्ययन से हमें उस समय के भारत का पता चलता है। तत्कालीन भारतीय सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन की जानकारी हमें इन साहित्य के माध्यम से मिलती है। यथा, मत्स्य पुराण से गुप्त वंश के समय का इतिहास जानने को मिलता है। इस प्रकार, संस्कृत भाषा भारतीय इतिहास की जानकारी के लिए भी महत्वपूर्ण है। इसके साथ ही साथ भारत की सांस्कृतिक विरासत को जानने के लिए भी यह महत्वपूर्ण है।

vii. **कंप्यूटर प्रोग्रामिंग हेतु -** विश्व के लगभग सभी विद्वानों ने इस बात को स्वीकार किया है कि कंप्यूटर प्रोग्रामिंग हेतु सर्वश्रेष्ठ भाषा संस्कृत है और आगामी 20-25 वर्षो के बाद संस्कृत ही कम्प्युटर की भाषा होगी। कंप्यूटर के कार्य करने हेतु एल्गोरिदम की आवश्यकता पड़ती है। विश्व के सर्वश्रेष्ठ एल्गोरिदम का निर्माण संस्कृत भाषा में हुआ है। कम्प्युटर प्रोग्रामिंग के लिए संस्कृत भाषा इस लिए सर्वश्रेष्ठ है कि इसका व्याकरण अत्यंत ही वैज्ञानिक है। इस प्रकार संस्कृत भाषा का ज्ञान कंप्यूटर के लिए भी महत्वपूर्ण है

viii. **आधुनिक यूरोपीय भाषाओं के ज्ञान हेतु -** संस्कृत ऐसी भाषा है जिससे न सिर्फ विभिन्न भारतीय भाषाओं का जन्म हुआ है बल्कि विभिन्न यूरोपीय भाषाओं का भी जन्म हुआ है। उदाहरणार्थ, फ्रेंच भाषा को ही ले लीजिए। इस भाषा का विकास संस्कृत पर आधारित है। जिस प्रकार संस्कृत में शब्द रुप एवं धातु रुप होते हैं उसी प्रकार फ्रेंच भाषा में भी शब्द रूप एवं धातु रूप हैं। लगभग 50 यूरोपीय भाषाएँ ऐसी हैं जिनका जन्म संस्कृत से हुआ है। संस्कृत भाषा का ज्ञान इन भाषाओं को सीखने में उपयोगी सिद्ध होता है।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत अत्यंत महत्वपूर्ण भाषा है। यह अत्यंत ही प्राचीन भाषा है औरा इसका साहित्य भी अत्यंत प्राचीन है। इस भाषा का साहित्य अत्यंत ही व्यापक है। इसमें मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष से संबंधित साहित्य उपलब्ध हैं। इसमें आचार शास्त्र, व्याकरण, राजनीति शास्त्र, समाज शास्त्र, नाट्य शास्त्र, चिकित्सा, गणित आदि का विपुल भंडार प्राप्त होता है। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि इस भाषा का साहित्य हमारे समाज एवं संस्कृति का दर्पण है। यह भाषा एवं साहित्य दार्शनिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। हमारा पूरा दर्शन तो संस्कृत भाषा में ही है। राजनीतिक दृष्टि से भी यह भाषा महत्वपूर्ण है। प्राचीन काल में राजकाज की भाषा भी संस्कृत थी। इस भाषा के साहित्य में राष्ट्रीय एकता को भी महत्वपूर्ण में

स्थान दिया गया है। यह विश्व के अनेक प्राचीन एवं आधुनिक भाषाओं की जननी है और सम्पर्क भाषा के रुप में भी यह महत्वपूर्ण है। दूसरे शब्दों में यदि यह कहा जाए कि संस्कृत एक भाषा नहीं है बल्कि यह एक समग्र जीवन पद्धति है, व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का माध्यम है तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी।

1.6 आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में संस्कृत

आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में संस्कृत की प्रस्थिति पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो निम्नलिखित तथ्य उभरकर सामने आते हैं:

i. भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में भारत की विभिन्न भाषाओं को अनुसूचित किया गया है। वर्तमान में इस अनुसूची में 22 भाषाएँ हैं। लेकिन संविधान के लागू होने के समय यह स्थिति नहीं थी। मूल संविधान में इस सूची में 14 भाषाओं को ही स्थान दिया गया था। कालांतरा में इसा सूची में कई संशोधन हुए और इसमें शामिल भाषाओं की संख्या बढ़कर 22 हो गई। संस्कृत को भारतीय संविधान की इस अनुसूची में स्थान प्राप्त है। संस्कृत का यह स्थान किसी संविधान संशोधन का परिणाम नहीं है अपितु यह मूल संविधान में ही था। ।

ii. यह उत्तराखंड राज्य की द्वितीय राजभाषा है।

iii. विद्यालयी शिक्षा में इसका स्थान द्वितीय भारतीय भाषा का है। पहले यह अनिवर्य द्वितीय भारतीय भाषा थी अर्थात इस भाषा को विद्यार्थियों को अवश्य पढ़ना पढ़ता था। कालंतर में इस भाषा का पाठ्यक्रम में स्थान वैकल्पिक भाषा का हो गया अर्थात इस भाषा को पढ़ना विद्यार्थियों के लिए अनिवार्य नहीं रह गया। विद्यार्थी चाहे तो इसका अध्ययन कर भी सकते हैं एवं चाहे तो नहीं भी कर सकते हैं। लेकिन इस भाषा की पाठ्यक्रम में स्थिति अनिवार्य द्वितीय भारतीय भाषा के रुप में होनी चाहिए।

iv. इस भाषा को बोलने वाले व्यक्तियों की संख्या बहुत कम है। हाँलाकि इस संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है और इस वृद्धि की दर भी तीव्र है। 2001 की जनगणना के अनुसार -

- संस्कृत भाषा को प्रथम भाषा के रूप में बोलने वाले व्यक्तियों की संख्या 14,135 व्यक्ति
- संस्कृत भाषा को द्वितीय भारतीय भाषा के रूप में बोलने वाले व्यक्तियों की संख्या 12,34,931 व्यक्ति
- संस्कृत भाषा को तृतीय भारतीय भाषा के रूप में बोलने वाले व्यक्तियों की संख्या 35,42,223 व्यक्ति

v. यह एक बहुत ही सशक्त भाषा है। ज्ञान के किसी भी शाखा का अध्ययन- अध्यापन इस भाषा के माध्यम से किया जा सकता है।

vi. कंप्यूटर विज्ञान के लिए संस्कृत सर्वश्रेष्ठ भाषा के रुप में समस्त विश्व के कम्प्युटर विज्ञानियों द्वारा इसे मान्यता प्राप्त है।

vii. नासा में प्रशिक्षु वैज्ञानिकों को एक अल्पकालीन पाठ्यक्रम के माध्यम से संस्कृत भाषा सिखाई जाती है ताकि वो संस्कृत साहित्य में वर्णित अंतरिक्ष संबंधी ज्ञान का अध्ययन कर अपने व्यावसायिक जीवन में उसका लाभा उठा सके।

viii. संस्कृत भाषा के उत्थान के लिए विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थानों द्वारा प्रयास किए जा रहे हैं। संस्कृत भारती जैसे कई संस्थान कार्यरत है जो अल्पकालीन पाठ्यक्रमों की सहायता से संस्कृत का प्रशिक्षण दे रहे हैं। इंडियन ऑयल कार्पोरेशन जैसी संस्थाएँ संस्कृत भाषा में उच्च अध्ययन हेतु छात्रवृति प्रदान कर संस्कृत भाषा के अध्ययन को प्रोत्साहित कर रही है।

ix. वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने संस्कृत भाषा को अनिवार्य बनाने की जो घोषणा की है वह इस दिशा में सराहनीय प्रयास है।

x. विश्व के विभिन्न देशों में संस्कृत का अध्ययन-अध्यापन किया जा रहा है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि संस्कृत भाषा जो कि अपना महत्व खो चुकी थी और लगभग मृत हो चुकी थी ने अपनी प्रतिष्ठा पुनः प्राप्त कर ली है। इसका अध्यन-अध्यापन का पुनः आरंभ हो चुका है। जन सामान्य में इस भाषा के प्रति रुचि का विकास होने लगा है। देश में ही नहीं विदेशों में भी लोग इस भाषा का अध्ययन-अध्यापन कर रहे हैं। हालाँकि इतना पर्याप्त नहीं है। इस दिशा में अभी और कार्य करने की आवश्यकता है। लेकिन संस्कृत भाषा के महत्व एवं जन सामान्य में इस भाषा के प्रति रुचि में वृद्धि संबंधी जो आँकड़े प्राप्त हो रहे हैं उनका विश्लेषण करने पर यह बात प्रतीत होती है कि वृद्धि हो रही है और वृद्धि की दर में तीव्रता है। अगर यूँ ही यह वृद्धि होती रही तो संस्कृत भाषा शीघ्र ही प्राचीन समय की भाँति ही प्रतिष्ठित हो जाएगी। देश में बोली जानेवाली समस्त भाषाओं में इसका स्थान अग्रणी होगा। रोज्गार के अवसरों में भी पर्याप्त वृद्धि होगी। सूचना एवं संचार तकनीकी के क्षेत्र में इस भाषा को जानने वाले व्यक्तियों की व्यापक माँग बढ़ेगी। विदेशों में इस भाषा के शिक्षक ढूँढे जाएँगे। इतना ही नहीं रोजगार के अन्य क्षेत्र में भी इस भाषा को जानने वाले लोगों की आवश्यकता बढ़ेगी। अनुवाद के क्षेत्र में भी रोजगार के अवसर सृजित होंगे। इस प्रकार हम यह भी कह सकते है कि संस्कृत का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के लिए रोजगार के क्षेत्र का विस्तार सिर्फ कर्मकांड तक न रहकर मानव जीवन के समस्त आयामों को छूएगा। संस्कृत का अध्ययन करा हम एक बार फिर से गौरवान्वित होंगे।

अभ्यास प्रश्न

11. संस्कृत एक मृत भाषा है। (सत्य/असत्य)
12. संस्कृत शास्त्रों की एक भाषा है। (सत्य/असत्य)
13. हिंदू संस्कृति में वर्णित चार पुरुषार्थ – धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष हैं। (सत्य/असत्य)
14. 'लीलावती' आर्यभट्ट द्वारा रचित एक पुस्तक है। (सत्य/असत्य)
15. संस्कृत कम्प्युटर प्रोग्रामिंग हेतु सर्वश्रेष्ठ भाषा है। (सत्य/असत्य)।
16. ______ ने 20 वीं सदी में संगीत शास्त्र पर आधारित एका ग्रंथा की रचना संस्कृत में की थी।

17. लगभग______यूरोपीय भाषाएँ ऐसी हैं जिनका जन्म संस्कृत से हुआ है।
18. संस्कृत ______राज्य की द्वितीय राजभाषा है।
19. 2001 की जनगणना के अनुसार, संस्कृत का प्रथम भाषा के रुप में बोलने वाले व्यक्तियों की संख्या______है।
20. संस्कृत भारती______पाठ्यक्रमों की सहायता से संस्कृत का प्रशिक्षण दे रही है।

1.7 संस्कृत साहित्य

साहित्य किसी भी भाषा का हो वह समाज को प्रतिबिम्बित करता है एवं संस्कृति का वहन करता है। संस्कृत भाषा में रचित साहित्य भी भारतीय सामाजिक जीवन का चित्रण करते हैं। भारतीय सामाजिक जीवन का मुख्य तत्व है गृहस्थ आश्रम इसलिए संस्कृत साहित्य में गृहस्थ आश्रम एवं ग्राहस्थ्य धर्म का चित्रण सांगोपांग मिलता है। संस्कृत साहित्य का विषय सिर्फ सामाजिक जीवन एवं सांस्कृतिक जीवन ही नहीं है अपितु धर्म, दर्शन, ज्ञान एवं विज्ञान आदि को भी इसमें स्थान प्राप्त है। यदि यह कहा जाए कि संस्कृत साहित्य सर्वांगीण है तो यह अतिशयोक्ति नहीं होगी। मानव जीवन के लिए वर्णित चार पुरुषार्थ हैं – धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। संस्कृत साहित्य में इनका पर्याप्त समावेश पाया जाता है। इस प्रकार संस्कृत साहित्य में मानव जीवन का समग्र निहित है। यह अति प्राचीन है। संस्कृत साहित्य का प्रथम लिखित ग्रंथ ऋग्वेद माना जाता है। संस्कृत साहित्य के प्रथम काल को स्रोत काल कहा जाता है। इस काल के साहित्य में वैदिक संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद आदि की रचना हुई। दूसरा काल स्मृति काल कहा जाता है। इस काल में रामायण, महाभारत, पुराण, तथा वेदांगों की रचना हुई। तीसरा काल लौकिक संस्कृत का काल है। इस काल में पाणिनी द्वारा व्याकरण के नियमों का प्रतिपादन किया गया तथा भाषा व्याकरण के नियमों के प्रयोग द्वारा एकदम परिनिष्ठित हो गई। इस काल में काव्य नाटकों की रचना शुरू हो गई थी। काल विभाजन के आधार पर संस्कृत साहित्य के वर्गीकरण के अतिरिक्त विषय, भाव, भाषा शैली आदि के आधार पर भी संस्कृत साहित्य का वर्गीकरण किया गया है। इस आधार पर संस्कृत साहित्य को दो वर्गों में बाँटा गया है - वैदिक साहित्य एवं लौकिक साहित्य।

1.7.1 वैदिक साहित्य एवं लौकिक साहित्य

वैदिक साहित्य के अंतर्गत मुख्यतः ऋगवेद, सामवेद, यजुर्वेद एवं अथर्ववेद को शामिल किया जाता है। इसके इतर वेदांग, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, गृह्यसूत्र, शुल्व सूत्र, स्रौत सूत्र, पुराण आदि भी वैदिक साहित्य के अंग है। वैदिक साहित्य का प्रतिपाद्य विषय मुख्यतः धर्म है। वैदिक साहित्य में वेद पद्यात्मक है। सिर्फ यजुर्वेद का एक भाग शुक्ल यजुर्वेद गद्यात्मक है। पुराणों की रचना भी पद्य में की गई है। वेद एवं पुराण के इतर अधिकांश वैदिक साहित्य गद्य रूप में लिखा गया है। तैत्तरीय संहिता से वैदिक साहित्य में गद्य साहित्य की शुरुआत मानी जाती है। ब्राह्मण ग्रंथ तो गद्य रूप में ही लिखे गए हैं। वैदिक साहित्य की भाषा व्याकरण के नियमों से प्रति परिनिष्ठित नहीं थी तथा इसमें रूपक की प्रधानता थी।

लौकिक साहित्य का प्रतिपाद्य विषय मुख्यतः लोकजीवन था। यह पद्यात्मक एवं गद्यात्मक दोनों शैली में रचे गए थे। लौकिक साहित्य की भाषा व्याकरण के नियमों से परिनिष्ठित थी और अतिशयोक्ति का भरपूर प्रयोग हुआ था। इस प्रकार वैदिक और लौकिक साहित्य एक दूसरे से सर्वथा भिन्न है।

समय-समय के साथ-साथ लौकिक साहित्य बहुत पल्लवित-पुष्पित हुआ लेकिन कालंतर में जब संस्कृत सिर्फ साहित्य की भाषा बनकर रह गई और पाली एवं प्राकृत ने जन सामान्य की भाषा का स्थान ले लिया तब संस्कृत भाषा का प्रचार-प्रसार कम हो गया। इस भाषा के सर्जक एवं पाठक दोनों कम हो गए और धीरे-धीरे साहित्य की रचना संस्कृत भाषा में कम होने लगी। वर्तमान में संस्कृत सहित्य की रचना लगभग न के बराबर हो गई है।

अभ्यास प्रश्न

21. संस्कृत साहित्य के प्रथम लिखित ग्रंथ का क्या नाम है?
22. स्रोत काल के साहित्य में किन-किन चीजों की रचना हुई?
23. स्मृति काल के साहित्य में किन-किन चीजों की रचना हुई?
24. पाणिनी द्वारा व्याकरण के नियमों का प्रतिपादन किस काल में किया गया?
25. विषय, भाव एवं भाषा शैली के आधार पर संस्कृत साहित्य को कितने वर्गों में बाँटा गया? उनके नाम लिखें।
26. यजुर्वेद का एक भाग _________यजुर्वेद गद्यात्मक है।
27. वैदिक साहित्य में_________की प्रधानता थी।
28. _________ साहित्य में अतिशयोक्ति का भरपूर प्रयोगा हुआ था।
29. पुराणों की रचना_________ में की गई।
30. लौकिक साहित्य _________ एवं _________ दोनों शैली में रचे गए थे।
31. संस्कृत साहित्य में मानव जीवन का समग्र निहित है। (सत्य/असत्य)
32. अष्टाध्यायी वैदिक साहित्य की रचना है। (सत्य/असत्य)
33. लौकिक साहित्य का प्रतिपाद्य विषय लोक जीवन था। (सत्य/असत्य)

1.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में संस्कृत भाषा एवं साहित्य का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया गया है। संस्कृत भाषा का विश्व के भाषा परिवारों में स्थान की चर्चा से संस्कृत भाषा के परिचय को और सुंदर बनाया गया है। संस्कृत भाषा के महत्व से भी विद्यार्थियों को अवगत कराया गया है। एक आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में इसकी प्रकृति की जानकारी भी विद्यार्थियों को प्रदान की गई है। इकाई के अंत में संस्कृत साहित्य का भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है। किसी भी भाषा के शिक्षण विधि का ज्ञान प्रदान करने से पहले उस भाषा एवं

साहित्य की जानकारी प्रदान करना श्रेयस्कर होता है। प्रस्तुत इकाई के अंत में इसीलिए संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया है। इस प्रकार यह इकाई संस्कृत भाषा शिक्षण कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए बहुत उपयोगी है।

1.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. 7000
2. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस इकाईका खंड 1.3 देखे।
3. इस प्रश्न के उत्तर के लिए इस इकाई का खंड 1.4 देखें।
4. भारोपीय परिवार
5. आकृति मूलक
6. अर्थ
7. 100
8. राइस
9. भारोपीय
10. सतम एवं केंटुम
11. असत्य
12. सत्य
13. सत्य
14. असत्य
15. सत्य
16. भातखण्डे
17. 50
18. उत्तराखंड
19. 14,135
20. अल्पकालीन
21. ऋग्वेद
22. वैदिक संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद की रचना हुई।
23. रामायण, महाभारत, पुराण, तथा वेदांगों की रचना हुई।
24. लौकिक साहित्य काल
25. दो वर्गों में विभाजित किया गया। ये दो वर्ग वैदिक साहित्य एवं लौकिक साहित्य है।
26. शुक्ल
27. रुपक

28. लौकिक
29. पद्य
30. गद्यात्मक, पद्यात्मक
31. सत्य
32. असत्य
33. सत्य

1.9 संदर्भ एवं सहयोगी ग्रंथ

1. आप्टे, डी० जी० (1960). टीचिंग ऑफा संस्कृत इन सेकेण्ड्री स्कूल्स, आचार्य बुक डिपो, बड़ोदा।
2. चौबे, नारायाण विजय, (1985). संस्कृत शिक्षण विधि, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
3. त्रिपाठी, राधाबल्लभ (1999). संस्कृत साहित्य, 20वीं शताब्दी, राष्ट्रीय-संस्कृत-संस्थानम्, नई दिल्ली।
4. बोकिल, वी० पी० (1956). ए न्यू एप्रोच टू संस्कृत, चित्रशाला प्रकाशन, पूना।
5. मित्तल, संतोष (2000). संस्कृत शिक्षण, आर० लाल० बुक डिपो, मेरठ।
6. शर्मा, देवीदत्त (n.d.) संस्कृत का ऐतिहासिक एवं संरचनात्मक परिचय, हरियाणा ग्रंथ अकादमी।
7. उपाध्याय, बलदेव (2009). संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा निकेतन, वाराणसी।
8. सक्सेना, बाबूराम (2015). संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका, रामनारायण लाल प्रह्लाददास, इलाहाबाद।
9. तिवारी, भोलानाथ (2002). भाषा विज्ञान, किताब महल, इलाहाबाद।

1.10 निबंधात्मक

1. अपने संज्ञान के आधार पर पाँच संस्कृत ग्रंथों के नाम लिखें एवं उनमें किस राज वंश के समय के इतिहास की जानकारी मिलती है, बताएँ।
2. 'संस्कृत भाषा का महत्व विषय' पर एक निबंध लिखें।
3. आधुनिक भारतीय भाषा के रूप में संस्कृत भाषा की प्रकृति का वर्णन करें।
4. वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में अंतर स्थापित करें।
5. भाषा परिवार के संदर्भ में वैदिक साहित्य की प्रस्थिति का वर्णन करें।
6. "संस्कृत साहित्य वर्तमान समय में भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि वह पहले था"। इस कथन की विवेचना करें।

इकाई-2 संस्कृत भाषा शिक्षण के सैद्धान्तिक पक्ष

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 संस्कृत भाषा शिक्षण एक परिचय

2.3.1 संस्कृत भाषा-परिचय

2.3.2 संस्कृत भाषा शिक्षण की अवधारणा

2.4 संस्कृत भाषा शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य

2.4.1 प्राथमिक स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

2.4.2 माध्यमिक स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

2.4.3 उच्च स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

2.4.4 संस्कृत-शिक्षण एवं मातृभाषा शिक्षण के उद्देश्य

2.4.5 संस्कृत-शिक्षण एवं अंग्रेजी शिक्षण के उद्देश्य

2.4.6 संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का विश्लेषण

2.5 भाषा विज्ञान तथा संस्कृत शिक्षण

2.5.1 भाषा विज्ञान के विभिन्न तत्त्व

2.5.2 संस्कृत भाषा शिक्षक के लिए भाषा विज्ञान की आवश्यकता

2.6 भारत में संस्कृत शिक्षण का महत्व

2.6.1 प्राचीनतम भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

2.6.2 सांस्कृतिक भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

2.6.3 राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता की भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

2.7 समस्याएं एवं चुनौतियाँ

2.7.1 संस्कृत शिक्षण के प्रसार में समस्याएँ एवं चुनौतियाँ

2.7.2 संस्कृत शिक्षण के चुनौतियों के उपाय

2.8 सारांश

2.9 शब्दावली

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.11 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भाषा विचारों, भावों एवं अनुभवों को साझा करने का माध्यम है। भाषा का प्रयोग केवल मानव जाति ही नहीं अपितु जीव-जन्तु एवं पशु- पक्षियों के द्वारा भी किया जाता है। भाषा में भावाभिव्यक्ति के लिए न केवल शब्दों बल्कि उसके साथ-साथ विभिन्न सांकेतिक प्रयोग भी किए जाते हैं परन्तु स्पष्ट कर दें कि भाषा विज्ञान में जिस भाषा को ग्रहण किया जाता है वह पशु- पक्षियों एवं सांकेतिक भाषा से भिन्न मानव द्वारा व्यक्त वाणी है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई क अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. संस्कृत भाषा शिक्षण से परिचित हो सकेंगे।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्यों को जान सकेंगे।
3. संस्कृत शिक्षण में भाषा – विज्ञान के महत्व को समझ सकेंगे।
4. भारत में संस्कृत शिक्षण के महत्त्व, समस्या, चुनौतियाँ एवं उनके समाधान को समझ सकेंगे।

2.3 संस्कृत भाषा शिक्षण एक परिचय

भाषा शब्द संस्कृत के ‘भाष्’ धातु से निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ है - ‘भाष् व्यक्तयां वाचि’ प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी आचार्य भर्तृहरि का कथन है कि ‘भाषा ही ज्ञान को प्रकाशित करती है उसके बिना सविकल्प ज्ञान सम्भव नहीं है’। वान्द्रिए के अनुसार ‘‘भाषा एक प्रकार का चिन्ह है। चिन्ह से तात्पर्य उन प्रतीकों से है जिसके द्वारा मनुष्य अपना विचार दूसरों को प्रकट करता है। ये प्रतीक भी कई प्रकार के होते हैं। जैसे - नेत्रग्राह्य, श्रोतग्राह्य एवं स्पर्शग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोतग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है। भाषा एक सांस्कृतिक वस्तु है, जिसे हम परम्परा से प्राप्त करते हैं। किसी भी सांस्कृतिक उपलब्धि के समान मातृभाषा अथवा जातीय भाषा का संरक्षण करना, हम सब का कर्तव्य है। सांस्कृतिक उपलब्धि होने के कारण हमारी संस्कृति में यदा-कदा बदलाव होते रहते हैं। उसी प्रकार भाषा भी परिवर्तित होती रहती है। अतः कह सकते हैं कि भाषा कोई स्थिर वस्तु नहीं अपितु संस्कृति के समान गतिशील तत्व है।

भाष्यते व्यक्तवाग्-रुपेण अभिव्यंज्यते इति भाषा अर्थात् व्यक्त वाणी के रूप में जिसकी अभिव्यक्ति की जाती है उसे भाषा कहते हैं।

भाषा के सन्दर्भ में कहा गया है कि - ‘‘भाषा में निरन्तर संशोधन और परिष्करण की प्रक्रिया चलती रहती है, अतएव भाषा पुरानी होने पर भी नवीन, कालातीत होने पर भी अद्यततनीन (up-to-date) और वृद्ध होने पर भी नवयुवती बनी रहती है।

महान भाषा शास्त्री पतंजलि ने कहा है - प्रतीत पदार्थ लोके ध्वनिः शब्दः जिस ध्वनि से पदों के अर्थ प्रतीत हों वह सार्थक ध्वनि शब्द और भाषा है।

मानव को देवताओं के द्वारा प्राप्त सबसे बड़ा वरदान भाषा है ऋग्वेद ने इसे अमृत की नाभि (केन्द्र) और देवों ने जिह्वा कहा है- " जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः।" ऋग्वेद (4-58-1)

2.3.1 संस्कृत भाषा-परिचय

साहित्य ही समाज का दर्पण है यदि हम किसी देश या समाज से परिचित होना चाहते हैं तो हमें उस देश के साहित्य से परिचित होना पड़ेगा । भारतीय समाज की जड़ें बहुत गहरी हैं। इसे समझने के लिए हमें संस्कृत साहित्य का अध्ययन करना होगा । यह जानना अतिआवश्यक है कि संस्कृत केवल कर्मकाण्ड या पूजा-पाठ की भाषा नही हैं अपितु इसमें संपूर्ण विश्व ज्ञान समाहित है संस्कृत में वेद, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद, दर्शन, न्याय, एवं विज्ञान भी सम्मिलित है।

i. **दर्शन-** दर्शन की दृष्टि से संस्कृत का स्थान सर्वोपरि है। पाश्चात्य दार्शनिक सहस्रों वर्षों के प्रत्यत्नस्वरूप आज जिस आध्यात्मिकता की ओर मुड़ रहे हैं, भारतीय महर्षियों ने उसका साक्षात्कार ईसा से कई हजार वर्ष पूर्व ही कर लिया था। पाश्चात्य दर्शन में ऐसे बहुत से उदाहरण मिल जाएंगे जिसे भारतीय दर्शन का प्रकारान्तर कर लिखा गया है।

   ऋग्वेद में 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' के द्वारा अनुमान लगाया जा सकता है कि पूर्व वैदिक काल में ही भारत में एक देव की प्रतिष्ठा हो चुकी थी। पुरुष सूक्त में पुरुष से सृष्टि के विकास की योजना प्रस्तुत है। आरण्यक उपनिषद् में जहाँ दर्शन की उच्चता विद्यमान है वहीं षड्दर्शन भारत को गौरवान्वित करता है। जैन, बौद्ध दर्शन के भी अनेक ग्रंथ संस्कृत में रचे गये हैं।

   श्रीमद्भगवत्-गीता को नीति एवं आचार का सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ कहा जाता है। न्याय एवं तर्क में भी संस्कृत शास्त्र के महत्व को कम नहीं आँका जा सकता।

ii. **भूगोल एवं खगोल -** भूगोल एवं खगोल शास्त्र में सूर्य एवं मय का संवाद है जिसे आज भी नास के वैज्ञानिक अध्ययन करते हैं वहीं आर्यभट्ट का आर्यभट्टीयम् एक प्रमाणिक ग्रन्थ है। कापरनिकस और गैलेलियो के पूर्व 1150 में भास्कराचार्य के ग्रन्थ सिद्धान्त शिरोमणी में पृथ्वी के गोल होने एवं सूर्य के चारों ओर चक्कर लगाने की चर्चा की है।

   भपंजरः स्थिरो भूदेवावृत्यानृत्योदयास्तमयो कल्पयति नक्षत्र-ग्रहाणाम्।

iii. **चिकित्सा विज्ञान-** अश्विनी कुमार, वरूण, भारद्वाज, चरक इत्यादि ऋषियों को चिकित्सा के क्षेत्र में महारथ हासिल थी।

इसी प्रकार रसायन विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, जीव विज्ञान, यन्त्र विज्ञान, भाषा विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कामशास्त्र इत्यादि विभिन्न ज्ञान का भंडार है संस्कृत शास्त्र। अतः संस्कृत का अध्ययन संस्कतानुरागियों के लिए अमृत-तुल्य है।

2.3.2 संस्कृत भाषा शिक्षण की अवधारणा

प्राचीन-काल में भारत में शिक्षा गुरुकुलों में दी जाती थी तभी शिक्षा का स्वरूप सम्पूर्ण रूप से संस्कृत में ही समाहित था। परन्तु वर्तमान में स्थिति भिन्न है। अभी हम वैश्विक स्तर पर विभिन्न विधावों का अध्ययन

कर रहे है अतःसंस्कृत का व्यापक शिक्षण अर्थात वेद, वेदांग, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, एवं उनके तमाम उपांगों का अध्ययन न कर अन्य विषयों की ही भांति कक्षावार अध्ययन करते हैं। अभी भारत के अत्यधिक राज्यों में संस्कृत को द्वितीय अथवा तृतीय भाषा के रूप में पढ़ा जाता है। एवं कहीं-कहीं इसकी पारम्परिक विधा भी विद्यमान है जिसमे छात्र विभिन्न विषयों का अध्ययन संस्कृत भाषा में करता है। जिसमें प्रथमा, प्रवेशिका(10वीं), मध्यमा(उपाध्याय), शास्त्री(B.A.), आचार्य(M.A.) परीक्षाओं को उत्तीर्ण करता है।

2.4 संस्कृत भाषा शिक्षण के लक्ष्य एवं उद्देश्य

संस्कृत भाषा शिक्षण के लक्ष्य

संस्कृत भाषा के लक्ष्य एवं उद्देश्य एक समान ही प्रतीत होते है। इन्हें समझना जटिल कार्य है। उनमें से कुछ लक्ष्य ज्ञानात्मक हैं तो कुछ कौशलात्मक, कुछ रसात्मक एवं सृजनात्मक हैं तो कुछ का सम्बन्ध अभिवृत्तियों से है। इस प्रकार इन लक्ष्यों को निम्नलिखित पाँच वर्गों में रख सकते हैं।

क. ज्ञानात्मक
ख. कौशलात्मक
ग. रसात्मक
घ. सृजनात्मक
ङ. अभिवृत्यात्मक

1. **ज्ञानात्मक लक्ष्य-** ज्ञानात्मक लक्ष्य का तात्पर्य है छात्रों को भाषा एवं साहित्य की कुछ बातों का ज्ञान देना। प्रायः निम्नलिखित बातों की जानकारी देना ज्ञानात्मक लक्ष्य के अन्तर्गत है।
   - i. ध्वनि, शब्द एवं वाक्य-रचना का ज्ञान देना।
   - ii. उच्च माध्यमिक स्तर पर निबन्ध, कहानी, उपन्यास, नाटक, काव्यगीत, गद्यगीत आदि साहित्यिक विधाओं का ज्ञान देना।
   - iii. सांस्कृतिक, पौराणिक, व्यावहारिक एवं जीवनगत अनुभूतियों, गाथाओं, तथ्यों, घटनाओं आदि का ज्ञान देना तथा लेखक की जीवनगत, रचनागत विशेषताओं एवं समीक्षा-सिद्धान्तों का उच्च माध्यमिक स्तर पर ज्ञान देना। यह विषय-वस्तु से सम्बन्धित है।
   - iv. रचना-कार्य के मौखिक एवं लिखित रूपों का ज्ञान देना, जिनमें वार्तालाप, सस्वरवाचन, अन्त्याक्षरी, भाषण, वाद-विवाद, संवाद, साक्षात्कार, निबन्ध, सारांशीकरण, कहानी, आत्मकथा, पत्र आदि सम्मिलित हैं।
2. **कौशलात्मक लक्ष्य-** इन उद्देश्यों का सम्बन्ध भाषा के कौशलों से है जिनमें पढ़ना-लिखना, सुनना, अर्थ ग्रहण करना आदि सम्मिलित है। कौशलात्मक उद्देश्यों के अन्तर्गत प्रायः निम्नलिखित बातें आती हैं- सुनकर अर्थ ग्रहण करना, शुद्ध एवं स्पष्ट वाचन करना, गद्य-पद्य पढ़कर अर्थ ग्रहण करना, बोलकर भावाभिव्यक्ति करना, लिखकर भावाभिव्यक्ति करना, इत्यादि।

3. **रसात्मक एवं समीक्षात्मक लक्ष्य-** इन लक्ष्य में दो वस्तुएं समाहित हैं – साहित्य का रसास्वादन, साहित्य की सामान्य समालोचना।
4. **सृजनात्मक लक्ष्य-** सृजनात्मक लक्ष्य का तात्पर्य है छात्रों को साहित्य-सृजन की प्रेरणा देना। उन्हें रचना में मौलिकता लाने की योग्यता का विकास करने के लिए प्रेरित करना। कार्य के लिए निबन्ध, कहानी, संवाद, पत्र, उपन्यास एवं कविता को माध्यम बनाया जा सकता है। इसके शिक्षण के समय छात्रों की मौलिकता लाने की प्रेरणा दी जा सकती है।
5. **अभिवृत्यात्मक लक्ष्य-** इस लक्ष्य का तात्पर्य यह है कि छात्रों में उपयुक्त दृष्टिकोण एवं अभिवृत्तियों का विकास किया जाए । संस्कृत-शिक्षण के माध्यम से इस सम्बन्ध में भाषा और साहित्य में रुचि, सद्-वृत्तियों का विकास होना चाहिए।

संस्कृत भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

संस्कृत-शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों की चर्चा करते समय इसके प्राचीन भाषा रूप को ही वहाँ पर विशेष ध्यान रखा जा रहा है। संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. शुद्ध, सरल, स्पष्ट एवं प्रभावशाली भाषा में छात्र अपने भावों, विचारों, अनुभूतियों की अभिव्यक्ति कर सकें।
2. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे उचित भाव-भंगिमाओं के साथ वाचन का काव्य-कला एवं अभिनय-कला का आनन्द प्राप्त कर सकें और साथ ही, अपने मानसिक सुख-दुखात्मक भावनाओं के प्रति सन्तुष्टि प्राप्त कर सकें।
3. ज्ञान प्राप्त करने और मनोरंजन के लिए पढ़ना-लिखना, सिखाना, गद्य-पद्य में निहित आनन्द से परिचय हो पाना, पुस्तकों में निहित ज्ञान-भंडार का अवलोकन कराना तथा बालक की स्वाध्यायशीलता के प्रति रुचि उत्पन्न करना आदि भाषा शिक्षण के महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं।
4. क्रमबद्ध विचार-प्रणाली और भावाभिव्यंजन में दक्ष बनाना।
5. बालकों के शब्दों, वाक्यांशों तथा लोकोक्तियों आदि के में कोष में वृद्धि करना।
6. उनको शुद्धता एवं गति का निरन्तर विकास करते हुए वाचन का अभ्यास कराना।
7. ज्ञान-क्षेत्र तथा विवेक का निरन्तर विकास करते हुए चरित्र-निर्माण कराना।
8. विभिन्न शैलियों का परिचय कराकर अपनी उपयुक्त शैली के विकास में सहायता करना।
9. उन्हें सहित्य के सृजन की प्रेरणा देना, जिससे वे अपने अवकाश के समय के सदुपयोग द्वारा अपने व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन को सुसंस्कृत कर सकें।
10. बालकों को मानव-स्वभाव एवं चरित्र के अध्ययन का अवसर प्रदान करना।
11. उन्हें भावानुकूल, भाषा-प्रयोग, स्वर-निर्माण एवं अंग-संचालन की कला का अभ्यास कराना।

भाषा शिक्षण का लक्ष्य एवं उद्देश्य उस समाज एवं विद्यालय के प्रकृति पर निर्भर करता है, जहाँ पर शिक्षण कराया जाता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य की बात करें तो यहाँ पर संस्कृत शिक्षण के लिए दो प्रकार के विद्यालयों की व्यवस्था है।

a. **परम्परागत (Traditional) -** इस व्यवस्था में मातृभाषा शिक्षण के पश्चात् छात्र विभिन्न विषयों का अध्ययन संस्कृत भाषा में करता है। जिसमें प्रथमा, प्रवेशिका (10वीं), मध्यमा(उपाध्याय), शास्त्री (B.A.), आचार्य (M.A.) परीक्षाओं को उत्तीर्ण करता है।
b. **आधुनिक (Modern) -** इस व्यवस्था में छात्र एक वैकल्पिक भाषा के रूप में संस्कृत का चयन करता है और दशवीं, बारहवीं, स्नातक एवं परास्नातक कक्षाओं को उत्तीर्ण करता है।
उपरोक्त दोनों विधाएँ समकक्ष ही होती हैं परन्तु संस्कृत के ज्ञान की दृष्टि से पारम्परिक छात्रों में अत्यधिक दक्षता होती है।

2.4.1 प्राथमिक स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

संस्कृत शिक्षण के तीन स्तर

आधुनिक विद्यालयों में संस्कृत-शिक्षण की दृष्टि से शैक्षिक-स्तरों को तीन वर्गों में रख सकते हैं -

i. प्रारम्भिक स्तर
ii. मध्य स्तर
iii. उच्च स्तर

प्रारम्भिक स्तर का तात्पर्य संस्कृत-शिक्षण के प्रारम्भिक स्तर से है जिसमें सामान्यतः 6, 7 और 8 कक्षाओं को रख सकते हैं।

मध्य स्तर में माध्यमिक कक्षाएँ अर्थात् 9, 10, 11, 12 आ सकतीं है। तथा उसके पश्चात् उच्च स्तर आता है और इस स्तर पर विश्वविद्यालय की अन्तिम परीक्षा तक हो सकती है। उपर्युक्त तीनों स्तरों पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य अलग-अलग होंगे जिनका वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

प्रारम्भिक स्तर अर्थात् कक्षा 6, 7 और 8 के छात्र बाल्यावस्था के अन्तिम भाग या किशोरावस्था में पर्दापण करने की तैयारी में रहते हैं। जहां पर मानसिक दृष्टि से उसके मन में बड़ी उथल-पुथल मची रहती है, जहां पर उन्हें उपयुक्त आदर्शों की आवश्यकता भी पड़ती है। संस्कृत साहित्य ऐसे आदर्शों से भरा पड़ा है। अतः यदि छात्रों को उचित प्रेरणा प्रदान कर दी जाए तो संस्कृत भाषा को वे रुचिपूर्ण ढ़ंग से पढ़ सकेंगें, किंतु यहां पर यह ध्यान रखने की बात है कि छात्र इस समय संस्कृत को प्रारम्भ करते हैं, अतः उनसे बहुत अधिक आशा नहीं करनी चाहिए। इस स्तर पर तो इतने से ही सन्तुष्ट हो जाना चाहिए कि छात्र सरल संस्कृत को पढ़ सकें व उसे समझ सकें। इस स्तर पर संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य संक्षेप में इस प्रकार हैं -

1. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे संस्कृत भाषा में लिखे हुए सरल गद्य-खण्डों को शुद्ध-शुद्ध पढ़ सकें।
2. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे सरल संस्कृत श्लोकों का शुद्ध उच्चारण करते हुए पाठ कर सकें।
3. उन्हें कुछ महत्वपूर्ण श्लोकों को कंठस्थ करने की प्रेरणा देना।
4. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे संस्कृत के गद्य-खण्डों एवं श्लोकों के मुद्रित रूप को देखकर उन्हें ठीक-ठीक अपनी पुस्तिकाओं में लिख सकें।
5. छात्रों में यह योग्यता भी उत्पन्न करना कि वे कण्ठस्थ किए हुए श्लोकों को उनके मुद्रित रूप के शुद्ध-शुद्ध लिख सकें।
6. उन्हें श्रुतिलेख लिखने का अभ्यास कराना।
7. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे मातृभाषा के सरल वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद कर सकें।
8. संस्कृत के सरल गद्य-खण्डों एवं सरल श्लोकों को समझने की योग्यता प्रदान करना।
9. छात्रों को यह योग्यता प्रदान करना कि वे आवश्यकतानुसार सरल संस्कृत वाक्यों एवं श्लोकों का मातृभाषा में अनुवाद कर सकें।

2.4.2 माध्यमिक स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

मध्य स्तर पर आने वाले छात्र प्रारम्भिक स्तर पर कक्षा 6, 7 व 8 में संस्कृत को पढ़ चुके होते हैं। उनमें यह योग्यता आ जाती है कि वे संस्कृत के सरल गद्य-खण्डों एवं श्लोकों को शुद्ध-शुद्ध पढ़ सकें। इस स्तर पर छात्रों को संस्कृत साहित्य का भी परिचय देना चाहिए, किन्तु भाषा की शिक्षा इस स्तर पर भी महत्वपूर्ण रहेगी। इस स्तर पर संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य इस प्रकार हैं -

1. संस्कृत के सरल ही नहीं, कठिन गद्य-खण्डों को उचित विराम एवं शुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ने की क्षमता प्रदान करना जिससे छात्र संस्कृत भाषा में लिखे हुए बड़े-से बड़े वाक्यों को भी उचित अन्वितियों में विभक्त करके पढ़ सकें।
2. संस्कृत श्लोकों को उचित लय, मात्रा एवं विराम का ध्यान रखकर पढ़ने की योग्यता प्रदान करना जिससे वे मालिनी, शिखरिणी, द्रुत-विलम्बित, इन्द्रवज्रा, भुजंगप्रयात आदि छन्दों के पाठ में अन्तर कर सकें।
3. संस्कृत के सरल साहित्य से छात्रों को परिचित कराया जाए जिससे वे संस्कृत साहित्य के आनन्द की अनुभूति कर सकें।
4. संस्कृत के महत्वपूर्ण श्लोकों को कण्ठस्थ करने की प्रेरणा इस स्तर पर भी दी जाए , ताकि मातृभाषा के माध्यम से अपने वार्तालाप में आवश्यकता पड़ने पर अपनी बात की सम्पुष्टि में वाणी को प्रभावोत्पादक बनाने की दृष्टि से संस्कृत के श्लोकों का उद्धरण दे सकें।
5. संस्कृत साहित्य के सरल अंशों को मातृभाषा में अनूदित करने की क्षमता प्रदान करना जिससे वे जन-समुदाय को संस्कृत-साहित्य के अमृत का पान कर सकें।

6. मातृभाषा के सरल अनुच्छेदों एवं सामान्य वाक्यों की संस्कृत में अनूदित करने की योग्यता प्रदान करना।
7. सरल विषयों पर संस्कृत भाषा में संक्षिप्त निबन्ध के रूप में कुछ वाक्य लिखने की क्षमता प्रदान करना।
8. यदि संभव हो तो संस्कृत में कुछ सरल वाक्यों में बोलने की क्षमता प्रदान करना जिससे वे अभीष्ट अवसरों पर सरल रीति से संस्कृत भाषा में कुछ वाक्य शुद्ध रूप में बोल सकें।

यहां पर यह ध्यान देने की बात है कि संस्कृत में बोलने की क्षमता प्रदान करना संस्कृत-शिक्षण का मध्य स्तर पर उद्देश्य नहीं बनाया गया। वर्तमान परिस्थितियों में यह सम्भव भी नहीं है। अनेकानेक विषयों के जाल में फँसे हुए छात्र से यह आशा करना कि वह संस्कृत में 'शुद्ध, प्रभावोत्पादक, मधुर एवं रमणीय ढंग से बोल सकेगा ठीक नहीं है। इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं है। आज संस्कृत जन-साधारण की बोलचाल की भाषा नहीं है और किसी को भी समाज में प्रत्येक अवसर पर संस्कृत बोलने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। तीसरे तथा पाँचवें उद्देश्यों में संस्कृत के सरल, साहित्य का उल्लेख किया गया है। इस दृष्टि से पंचतंत्र, हितोपदेश, वाल्मीकि रामायण, महाभारत तथा कालिदास की रचनाएँ अधिक महत्वपूर्ण समझ पड़ती हैं। भारवि, माघ आदि को तो इस स्तर पर समझना भी कठिन है।

2.4.3 उच्च स्तर पर संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

उच्च स्तर पर संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्य निम्नलिखित होने चाहिए-

1. सरल एवं कठिन सभी प्रकार के गद्य खण्डों को उचित विराम एवं उच्चारण सहित पढ़ने की योग्यता उत्पन्न करना।
2. सभी प्रकार के श्लोकों का अभीष्ट लय के अनुसार पाठ करने की योग्यता उत्पन्न करना।
3. संस्कृत के अगाध साहित्य का अवगाहन करने की क्षमता प्रदान करना।
4. भाषा एवं साहित्य के प्रति अनुसन्धानात्मक दृष्टिकोण प्रदान करना।
5. संस्कृत साहित्य का मातृभाषा में अनुवाद करने की क्षमता प्रदान करना।
6. मातृभाषा के सभी प्रकार के वाक्य-सांचों को संस्कृत में अनुदित करने की योग्यता उत्पन्न करना।
7. आवश्यकतानुसार उचित अवसरों पर संस्कृत भाषा में बोलने की क्षमता प्रदान करना।
8. संस्कृत भाषा में पत्र-लेखन, निबन्ध-लेखन, संवाद-प्रेषण आदि की योग्यता उत्पन्न करना।

उपर्युक्त विवरण को ध्यान से देखने पर पता लगता है कि संस्कृत भाषा को पढ़ाने के उद्देश्य निम्न स्तरों पर भिन्न अवश्य हैं, किन्तु मूल रूप में सभी भाषा के कौशलों और साहित्य के आनन्द से सम्बन्धित हैं। किसी भी भाषा को पढ़ाने के निम्नलिखित मूल उद्देश्य होते हैं -

a. बोलना
b. पढ़ना

c. सुनना
d. लिखना

वस्तुतः हम किसी भी भाषा को इसलिए पढ़ते हैं जिससे कि हम अपने भावों को दूसरों तक पहुँचा सकें और दूसरों के भावों को ग्रहण कर सकें। इस दृष्टि से भाषा के मूल रूप में केवल दो उद्देश्य हैं -

i. विचारों की अभिव्यक्ति
ii. विचारों को समझना

भावाभिव्यक्ति दो प्रकार से हो सकती है -

i. बोलकर
ii. लिखकर

इसी प्रकार विचार-ग्रहण भी दो प्रकार से हो सकता है -

i. मौखिक रूप से व्यक्त विचारों को सुनकर।
ii. लिखित रूप से व्यक्त विचारों को पढ़कर।

इसलिए ऊपर भाषा के चार उद्देश्यों का उल्लेख किया गया हैं इन चारों उद्देश्यों के अंतर्गत भाषा संबंधी अनेक क्रियाओं का ज्ञान कराना आवश्यक हो जाता है। इनमें कुछ क्रियाएँ पहले आनी चाहिए कुछ बाद में। इसलिए विभिन्न स्तरों पर संस्कृत-शिक्षा के उद्देश्य भिन्न बनाये गये हैं। इन चारों मूल उद्देश्यों को भाषा सम्बन्धी चार कौशल भी कहा जाता है।

भाषा-शिक्षण के उद्देश्यों पर विचार करते समय आधुनिक विद्वान इन उद्देश्यों को ज्ञानपरक, कौशलपरक और अभिवृत्तिपरक रूपों में वर्गीकृत करते हैं। संस्कृत शिक्षक के उद्देश्यों से भी निम्नलिखित रूपों में वर्गीकृत किया जा रहा है-

(क) ज्ञानपरक

1. छात्राध्यापकों को संस्कृत भाषा के महत्त्व तथा भाषा शिक्षण के उद्देश्यों से अवगत कराना।
2. अद्यतन देवनागरी लिपि और संस्कृत वर्तनी के मानक रूप से अवगत कराना तथा उनकी त्रुटियों से सम्बन्धित समस्याओं एवं समाधान के उपायों की जानकारी देना।
3. संस्कृत शिक्षण के लक्ष्यों की सम्प्राप्ति के लिए प्रभावी साधनों, विधियों एवं उद्देश्य मूलक उपागमों से अवगत कराना।
4. संस्कृत शिक्षण के स्तर को समुन्नत करने की दृष्टि से छात्राध्यापकों की भाषा तथा साहित्य सम्बन्धी योग्यताओं का समुन्नयन करना।
5. कक्षा नौ से बारह तक के संस्कृत पाठ्य विवरण तथा पाठों का विश्लेषण करना सिखाना और तदनुसार शिक्षण बिन्दुओं के चयन की योग्यता विकसित करना।
6. संस्कृत साहित्य की अधुनातन प्रवृत्तियों से अवगत कराना।

(ख) कौशलपरक

1. संस्कृत के प्रभावी शिक्षण के लिए भाषा कौशलों एवं विभिन्न साहित्यिक विधाओं की शिक्षण विधियों एवं तकनीकों के प्रयोग की क्षमता विकसित करना।
2. छात्राध्यापकों में स्वाध्याय एवं अध्ययन कुशलताओं को विकसित करना।
3. भाषा शिक्षण से सम्बद्ध सह-शैक्षणिक क्रियाओं के आयोजन की क्षमता विकसित करना।
4. भाषा शिक्षण के लिए अल्पव्ययी श्रव्य-दृश्य शैक्षणिक उपकरणों का निर्माण करने और जन संचार माध्यमों तथा आधुनिक शैक्षिक उपकरणों का अपने शिक्षण में उपयोग करने की योग्यता विकसित करना।
5. मूल्यांकन तकनीकों के प्रयोग की योग्यता विकसित करना ताकि मूल्यांकन के निष्कर्षों के आधार पर छात्राध्यापक अपनी शिक्षण प्रणाली को सुधार सकें।
6. छात्राध्यापकों में छात्रों की भाषिक त्रुटियों के निदान तथा उपचारात्मक शिक्षण की क्षमता विकसित करना

(ग) अभिव्यक्तिपरक

1. संस्कृत शिक्षण सम्बन्धी चुनौतियों के प्रति जागरूकता विकसित करना।
2. संस्कृत शिक्षण व अधिगम से सम्बन्धित ज्ञान और कौशलों को अद्यतन बनाये रखना और उनके समुन्नयन की मनोवृत्ति को विकसित करना।
3. केंद्रिक पाठ्यचर्या के कुछ प्रमुख तत्वों से सम्बन्धित मूल्यों एवं सद्वृत्तियों के प्रति चेतना विकसित करना ताकि पाठों को पढ़ाते समय वे अपने छात्रों में उन्हें विकसित कर सकें।

संस्कृत शिक्षण की दृष्टि से आरम्भ में भाषा के चारों उद्देश्यों के अन्तर्गत सरल क्रियाएँ रखी गयी हैं। बाद में कुछ कठिन क्रियाओं का समावेश किया गया है। इस स्थल पर संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों एवं मात्रभाषा तथा विदेशी भाषा के उद्देश्यों में अन्तर भी देख लेना उचित होगा।

2.4.4 संस्कृत-शिक्षण एवं मातृभाषा शिक्षण के उद्देश्य

जिस भाषा को बालक अपने माता-पिता से सुनता है और जिसे वह अनायास ही सीख लेता है, उसे मातृभाषा कहा जाता है। उदहारणस्वरूप उत्तर प्रदेश में बालक अपने माँ-बाप से ब्रज, अवधी आदि जनपदीय भाषाएँ सीखता है, किन्तु अब इन भाषाओं में साहित्य-सृजन की धारा मन्द व रूद्ध हो गयी है। उत्तर भारत की सर्वमान्य, साहित्य एवं सर्वप्रयुक्त भाषा अब हिन्दी हो चुकी है। अतः उपर्युक्त बोलियों की उसे शिक्षा न देकर हिन्दी की शिक्षा दी जाती है और हिन्दी ही उसकी मातृभाषा कही जाती है। जनपदीय भाषाओं ने हिन्दी को समृद्ध किया है। इस प्रकार हरियाणा, दिल्ली, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं बिहार की जनता की मातृभाषा हिन्दी है और इन प्रदेशों को हिन्दी-भाषी प्रदेश कहा जाता है।

मातृभाषा को बालक घर पर सीखता है और जब वह कक्षा 1 में प्रविष्ट होता है तब तक उसे मातृभाषा का पर्याप्त ज्ञान हो जाता है। प्रारम्भिक विद्यालय में वह पाँच वर्ष तक मातृभाषा का अध्ययन करता है और माध्यमिक विद्यालय तक आते-आते वह मातृभाषा का बहुत ज्ञान प्राप्त कर लेता है, किन्तु संस्कृत के विषय में यह नहीं कहा जा सकता है। संस्कृत-शिक्षण की दृष्टि से जूनियर हाईस्कूल की कक्षाएँ प्रारम्भिक स्तर की ही कक्षाएँ हैं और छात्र को इस स्तर पर संस्कृत को दूसरी भाषा के रूप में सीखना होता है।

माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम मातृभाषा है, अतः बालक को मातृभाषा का जितना ज्ञान हो सकेगा, उतना ही ज्ञान संस्कृत विषय में नहीं हो पायेगा। इस प्रकार की आशा भी नहीं करनी चाहिए। इसलिए तो संस्कृत के बोलने एवं लिखने को संस्कृत-शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य मध्य स्तर पर नहीं माना गया है।

मातृभाषा एवं संस्कृत - दोनों के शिक्षण में पठन की योग्यता महत्वपूर्ण है। पठन के कौशल का विकास दोनों भाषाओं के शिक्षण से होगा। मातृभाषा-शिक्षण में व्यापक अध्ययन या द्रुत पठन का जितना महत्व होगा, उतना महत्व संस्कृत शिक्षण में नहीं होगा, किन्तु गहन अध्ययन के लिए पठन का महत्व संस्कृत-शिक्षण में अपेक्षाकृत अधिक होगा।

संस्कृत शिक्षण में बोध का विशेष महत्व है। पढ़कर अर्थग्रहण करना दोनों भाषाओं में महत्वपूर्ण है, किन्तु मातृभाषा में केवल अर्थग्रहण को ही महत्व नहीं दिया जा सकता। उसमें अभिव्यक्ति या भावप्रकाशन का भी विशेष महत्व है। लिखकर या बोलकर आत्मप्रकाशन की क्षमता प्रदान करना मातृभाषा-शिक्षण का महत्वपूर्ण उद्देश्य है, जबकि संस्कृत-शिक्षण में अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना अर्थग्रहण की योग्यता का विकास।

बालक के जीवन में मातृभाषा का अधिक महत्व है और संस्कृत के शिक्षण से उसका मातृभाषा-विषयक ज्ञान सम्पुष्ट होगा, अतः संस्कृत-शिक्षण के उद्देश्यों में अनुवाद को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

2.4.5 संस्कृत-शिक्षण एवं अंग्रेजी शिक्षण के उद्देश्य

प्रारम्भिक विद्यालयों में बालकों को आजकल अंग्रेजी अनिवार्य रूप से पढ़नी पड़ती है। अंग्रेजी भारतवर्ष में अनेक कारणों से अभी भी विद्यमान है। इसीलिए किसी अन्य विदेशी भाषा को यहाँ प्रोत्साहन नहीं मिल पाता है।

अंग्रेजी एवं संस्कृत, दोनों को माध्यमिक विद्यालयों में बालक दूसरी भाषा के रूप में पढ़ता है किन्तु अंग्रेजी विदेशी भाषा है, अतः इसके उद्देश्यों की तुलना संस्कृत के उद्देश्यों से नहीं की जा सकती है। अंग्रेजी की प्रकृति ही भिन्न है। इसमें कर्ता के पश्चात तुरन्त ही क्रिया आ जाती है और कर्म बाद में रखा जाता है तथा क्रम में अन्तर आने पर अर्थ का अनर्थ हो जाता है, जबकि संस्कृत के विषय में ऐसी बात नहीं। संस्कृत में प्रत्येक पद विभक्तियुक्त होता है। अतः क्रम-भेद से अनर्थ हो सकता है। अंग्रेजी विश्लेषणात्मक भाषा है, जबकि संस्कृत संश्लेषणात्मक।

विश्लेषण भाषा में प्रत्यय तथा विभक्ति शब्द के साथ संयुक्त न होकर पृथक् लिखे जाते हैं। उदाहरणार्थ अंग्रेजी में हम लिखते हैं "There was a tall Shalmali tree on the bank of Godavari" इस वाक्य में tall Shalmali, tree, bank, Godavari मुख्य शब्द हैं। और a, on, the क्रियात्मक शब्द हैं। मुख्य शब्द का स्वतन्त्र अस्तित्व होता है और उनका स्वतन्त्ररूपेण कुछ अर्थ हो सकता है, किन्तु क्रियात्मक शब्दों का न तो स्वतन्त्र अस्तित्व होता है और न ही उनका स्वतन्त्ररूपेण कोई अर्थ होता है। इन शब्दों का अर्थ मुख्य शब्दों के सन्दर्भ में होता है। Of का अर्थ, जैसा प्रायः बताया जाता है 'का, की, के.' सब जगह नहीं हो सकता। He died of cholera में of का अर्थ 'से हो गया है। To का अर्थ प्रायः 'को बताया जाता है, किन्तु Friend to me या P.A. to Minister में to शब्द 'का' का अर्थ दे रहा है। तो 10 to 15 O' Clockमें (पाँच बजने में दस मिनट बाकी हैं) कम या शेष का अर्थ दे रहा है और From Agra to Delhi में 'तक' का अर्थ दे रहा है। वे क्रियात्मक शब्द अंग्रेजी में पृथक् रूप से लिखे जाते हैं और जिस स्थिति में होते हैं वैसा ही अर्थ देते हैं। ऊपर के वाक्य में यदि हम किंचिन्मात्र हेर-फेर करें तो अर्थ का अनर्थ हो जायेगा।

संस्कृत में इस प्रकार के अनर्थ की गुंजाइश नहीं है। यह संश्लेषणात्मक भाषा होने के कारण अपने क्रियात्मक विकारों को साथ ही रखती है। प्रत्येक मुख्य शब्द क्रियात्मक शब्द को अपने अभिव्यक्त रूप के लिए रहता है। क्रियात्मक शब्द एवं मुख्य शब्द मिलकर एक नया रूप ले लेते हैं और उस नये रूप को 'पद' कहा जाता है। पद को वाक्य में इधर-उधर रखने पर अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता है। उदाहरण के लिए निम्न वाक्य देखिए -

'अस्ति गोदावरी तीरे विशालः शाल्मली तरूः'

उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों भाषाओं की प्रकृति भिन्न है। दोनों की प्रकृति का ध्यान रखते हुए अध्यापक को आगे बढ़ना है। एक में आदरसूचक शब्द अनेक मिल सकते हैं (यथा - भवान, अत्रभवान, तत्रभवान, भगवन आदि) तो दूसरे में इनकी कमी हो सकती है। यथा - अंग्रेजी में सबके लिए You से ही काम चलाना पड़ेगा। एक में शब्द-शक्ति अधिक हो सकती है, यथा - आचार्य शब्द तो दूसरे में (यथा – Teacher) शब्द।

अंग्रेजी विदेशी भाषा होने के कारण हमारी संस्कृति से सम्बन्ध नहीं रखती, जबकि संस्कृत में हमारी संस्कृति ही निहित है। अंग्रेजी के अध्ययन से क्षेत्रीय भाषाओं की उन्नति तो दूर रही, उनकी प्रगति में बाधा और पड़ती है, जबकि संस्कृत से क्षेत्रीय भाषाओं की उन्नति होती है। अंग्रेजी हमारी परतन्त्रता की द्योतक है, संस्कृत-स्वतंत्रता की। अतः संस्कृत शिक्षण के उद्देश्य अंग्रेजी शिक्षा के उद्देश्यों से भिन्न हो जाते हैं। अंग्रेजी मातृभाषा से पृथक् एवं नवीन भाषा के रूप में आती है, जबकि संस्कृत बालक की परिचित भाषा के रूप में उसके समक्ष आती है और इसके अनेक शब्दों से वह पहले से ही परिचित रहता है।

आजकल विद्यालयों में अंग्रेजी का स्थान वैकल्पिक विषय के रूप में होना चाहिए। संस्कृत की भी यही स्थिति होगी, किन्तु इसका कुछ भाग अनिवार्य भी होना चाहिए।

2.4.6 संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का विश्लेषण

राष्ट्र के पुनर्निर्माण के कार्य में भाषा की शिक्षा का विशेष महत्व है। भाषा के माध्यम से छात्र ज्ञान-विज्ञान के अनेकानेक विषयों का अध्ययन करता है। यदि छात्र का अधिकार भाषा पर नहीं होता तो वह ज्ञान के अन्य क्षेत्रों में भी प्रगति नहीं कर पाता। भाषा ही हमारे चिन्तन का आधार है। किसी भी जनतंत्र की सफलता उसके नागरिकों के चिंतन पर निर्भर करती है और इस चिंतन में भाषा की सबल भूमिका रहती है।

अन्य किसी भी विषय के पढ़ाने की तुलना में संस्कृत का पढ़ाना बहुत अधिक जटिल कार्य है। इसकी शिक्षा में इतने विभिन्न प्रकार की योग्यताओं का समावेश रहता है कि उन्हें विश्लेषित करके अलग-अलग देख पाना सम्भव नहीं है। वास्तव में संस्कृत की शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट रूप में सामने रख सकना बहुत कठिन है। नीचे संस्कृत-शिक्षण के कुछ ऐसे सामान्य सूत्र दिए गए हैं जिनको ध्यान में रखने से हमें संस्कृत के प्रति छात्रों की रूचि के विकास में सहायता मिल सकेगी।

i. भाषा मानव जीवन की एक बहुत ही सहज प्रक्रिया है। इसे बच्चा अनायास खेल-खेल में सीखने लगता है और समय व परिस्थिति के अनुसार उसकी भाषा का विकास होता चला जाता है। सीखने वाले पर कोई भाषा थोपी नही जा सकती। इसका विकास उसके अन्दर से स्वयं होना चाहिए। अध्यापक उस विकास में सहायता पहुँचा सकते हैं।

ii. भाषा का शिक्षण यथा सम्भव अनौपचारिक होना चाहिए। पढ़ाने में बहुत अधिक औपचारिकता आ जाने से पढ़ाई जाने वाली भाषा का स्वरूप कृत्रिम हो जाने की सम्भावना रहती है। भाषा को सीखते और सिखाते समय छात्र और अध्यापक दोनों को ही आनन्दानुभूति होनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं है तो भाषा विकास में अवश्य ही कहीं कमी है।

iii. बाह्य जगत के प्रति प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न होती है और प्रतिक्रिया की विभिन्नता भाषा के प्रयोग में सहज रूप से अभिव्यक्त होती है। छठी कक्षा के छात्रों में व्यक्तित्व की भिन्नता के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

iv. किसी भी भाषा की सत्ता शून्य में नहीं रहती। इसके माध्यम से जहाँ छात्रों की भाषा सम्बन्धी योग्यता बढ़ेगी वहीं सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, पारिवारिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आदि विषयों में उनकी जानकारी और रूचि बढ़ेगी। भाषा पढ़ते हुए छात्रों को ऐसा लगना चाहिए मानो वे सभी विषय एक साथ पढ़ रहे हैं। वास्तव में भाषा के माध्यम से पढ़ाए जाने वाले विषयों की रुचि जितनी अधिक होगी उनका भाषा ज्ञान उतना ही विकसित होगा।

v. भाषा सम्बन्धी सभी योग्यताओं का वर्गीकरण मोटेतौर पर सुनने बोलने, पदों को लिखने और सोचने की योग्यताओं में किया जा सकता है। भाषा की अच्छी शिक्षा में चारों प्रकार की योग्यताओं का विकास किया जायेगा। इसके लिए आवश्यक होगा कि छात्रों को सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने और विचार करने के अधिक से अधिक अवसर दिए जायें। कक्षा में निष्क्रिय श्रोता बने रहकर छात्र भाषा के अंगों पर अधिकार प्राप्त नहीं कर सकते।

vi. भाषा के विश्लेषण की योग्यता उपरोक्त सभी योग्यताओं का विकास करने में सहायक होती है। इसलिए भाषा के विश्लेषण की क्षमता छात्रों में प्रारम्भ से उत्पन्न करनी चाहिए। भाषा के उपयोगी विश्लेषण को ही व्यावहारिक व्याकरण का नाम दिया जाता है।

2.5 भाषा विज्ञान तथा संस्कृत शिक्षण

भाषा मानव-व्यवहार की आधारशिला है। मानव-जीवन एक अखण्ड धारा है जिस में उस के अगणित व्यवहार निरन्तर प्रवहमान जलराशि में उत्पन्न लहरियाँ कहे जा सकते हैं। मानव-व्यवहार प्रेरणा तथा उत्तर का क्रियात्मक रूप है। प्रत्येक प्रेरणा की कोई न कोई (सकारात्मक/नकारात्मक/उदासीन) प्रतिक्रिया अवश्य होती है। प्रेरणा तथा प्रतिक्रिया प्रत्यक्षतः या परोक्षतः भाषा से सम्बद्ध है। अतः भाषा शिक्षक विशेष रूप से संस्कृत भाषा शिक्षण के परिप्रेक्ष्य में भाषा विज्ञान शिक्षण में सैधान्तिक एवं गुणात्मक परिवर्तन लाता है।

2.5.1 भाषा विज्ञान के विभिन्न तत्त्व

जिस प्रकार आँख, नाक, कान, पैर, सिर, पेट, पीठ आदि अंगों-उपांगों का समन्वित तथा अखण्ड रूप शरीर है। उसी प्रकार ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ आदि का समन्वित तथा अखण्ड रूप भाषा है। जिस प्रकार आँख, कान, नाक, हाथ, पैर आदि को शरीर से काट कर अलग करके न तो शरीर का अस्तित्व रहा पाता है और न कटे हुए अंगो -उपांगों को हम शरीर कह सकते हैं। उसी प्रकार ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ तथा लिपि-चिन्हों का असम्बद्ध अस्तित्व भाषा नहीं कहा जा सकता। भाषा के ये छह तत्व परस्पर सम्बद्ध हैं तथा भाषा-शिक्षण की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। अग्रलिखित आरेख में इन छह तत्वों का सम्बद्ध रूप प्रदर्शित किया जा रहा है।

स्व-तत्वों (अंगों) के परस्पर सम्बद्ध रूप में भाषा

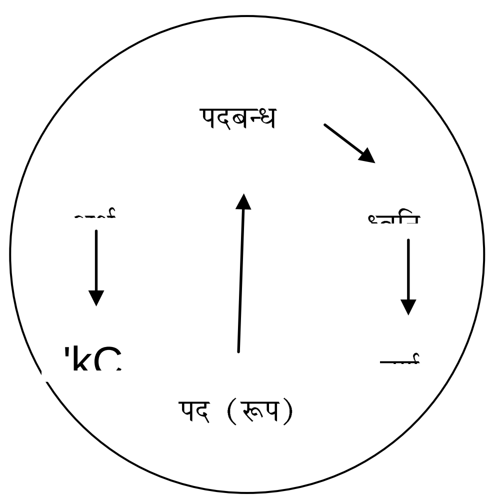

भाषा के इन तत्वों/अंगों का विश्लेषणात्मक तथा सरंचनात्मक ज्ञान प्राप्त किया हुआ भाषा-शिक्षक भाषा-शिक्षण में गहराई तथा सरलता ला सकता है। यद्यपि भाषा$_1$ (हिंदी/अंग्रेजी/अन्य) का शिक्षक भाषा के इन तत्वों के ज्ञान का भाषा-शिक्षण में बहुत अधिक लाभ नहीं उठा पाता, किन्तु विशेष रूप से भाषा$_2$ (हिंदी/संस्कृत) के शिक्षक के लिये तो इन तत्वों की अच्छी जानकारी अपरिहार्य है। भाषा$_2$ के शिक्षण के समय केवल भाषा$_2$ के नहीं वरन् भाषा$_1$ के भी इन तत्वों के ज्ञान की समय-समय पर आवश्यकता आ पड़ती है।

कुछ भारतीय तथा पाश्चात्य मनीषियों ने भाषा के मुख्य दो तत्व/अंग स्वीकार किए हैं-

i. शब्द
ii. अर्थ

शब्द को भाषा का शरीर तथा अर्थ को भाषा की आत्मा कहा जाता है। शब्द तत्व के अन्तर्गत भाषा की बाह्य रचना के तत्वों/अंगों (ध्वनि-योग, शब्द, पद, पदबन्ध, उपवाक्य, वाक्य, छन्द, लिपि-चिन्ह, इन सब का क्रम-नियोजन तथा व्यवस्था) की गणना की जाती है तथा अर्थ तत्व के अन्तर्गत भाषा की आन्तरिक रचना के तत्वों/अंगों (अभिधा, लक्षण, व्यंजना, आसत्ति, योग्यता, आकांक्षा, अभिशासन) की गणना की जाती है। शब्द तथा अर्थ को 'जल-बीचि सम' सम्पृक्त कहा गया है जो अर्धनारीश्वर या प्रकृति-पुरूष की एकरूपता के समान है। भाषा के शब्द प्रतीक मात्र हैं जिन का अर्थ-बोध उन प्रतीकों का बिम्ब-ग्रहण है - अतः भाषा-सम्प्रेषण या विचार-विनिमय की प्रक्रिया एक प्रकार से बिम्ब-ग्रहण की प्रक्रिया का ही दूसरा नाम है। भाषा-सम्प्रेषण की यह प्रक्रिया वक्ता/लेखक तथा श्रोता/पाठक के मध्य परस्पर सम्बद्ध रहती है।

2.5.2 संस्कृत भाषा शिक्षक के लिए भाषा विज्ञान की आवश्यकता

भाषाविज्ञान भाषा-शिक्षक की निम्नलिखित दृष्टि से सहायता करता है-

1. भाषा$_1$ तथा भाषा$_2$ के विश्लेषण के माध्यम से उस के विभिन्न भाषांगों एवं उन की सगंठना का पूर्ण ज्ञान प्रदान करना।
2. भाषा$_1$ तथा भाषा$_2$ के सम तथा विषम तत्वों की तुलना तथा व्यतिरेकी अध्ययन द्वारा व्याघातीय स्थलों का पता लगा कर द्विभाषीयता की समस्या का समाधान खोजना।
3. भाषा$_1$ के सन्दर्भ में भाषा$_2$ के शिक्षण के लिए आवश्यक तथा उपयोगी पाठ्य सामग्री-निर्माण में सहयोग प्रदान करना। यह सहयोग पाठ्य शब्दों, पदबन्धों, वाक्य-संरचनाओं, प्रयोगों आदि की आवृत्ति-गणना, उन के अनुक्रमण तथा अनुस्तरण आदि के माध्यम से मिलता है।
4. मनोभाषाविज्ञान के सिद्धान्तों की सहायता से भाषा$_2$ अधिगम मूल्यांकन के लिए अनुकूल सामग्री-निर्माण में सहयोग मिलना।
5. भाषांगों के विश्लेषण तथा उपयुक्त पाठ्य सामग्री-उपलब्धि के आधार पर भाषा$_2$ -शिक्षण के लिए उपयुक्त विधि के निर्धारण में परोक्षतः सहयोग मिलना।

6. भाषा$_1$ तथा भाषा$_2$ के भाषा-ज्ञान तथा भाषा-व्यवहार में दक्षता प्राप्त कराने के लिए आवश्यक सामग्री-चयन की पृष्ठभूमि तैयार करना।

2.6 भारत में संस्कृत शिक्षण का महत्व

किसी भी राष्ट्र की अखण्डता के लिए सांस्कृतिक भाषा एक आवश्यक वैचारिक अधिष्ठान होती है। संस्कृत सभी भाषाओं की जननी होने के कारण सभी देशवासियों को एकत्र करने की भूमिका बहुत प्रभावी ढंग से निभा सकती है। संस्कृत दर्शन, साहित्य, भौतिक, रसायन, ज्योतिष, वास्तुकला, औषधि विज्ञान, गणित, संगीत आदि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के ज्ञानकोश की चाभी है । यदि इन क्षेत्रों के विशेषज्ञों को संस्कृत भाषा का ज्ञान होगा तो अपने अतीत के संचित ज्ञानकोश का अध्ययन कर उसके प्रकाश में नवीनतम वैज्ञानिक आविष्कार करने में समर्थ हो सकेंगे।

2.6.1 प्राचीनतम भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

संस्कृत भारत की ही नहीं, विश्व की प्राचीनतम भाषा है। विश्व के अन्य देशों में लोग जिस समय सांकेतिक भाषा से काम चला रहे थे। उस समय भारत में संस्कृत भाषा द्वारा ब्रह्म ज्ञान का प्रसार किया जा रहा था। यह धारणा निर्मूल है कि संस्कृत केवल ग्रंथ रचना तक ही सीमित थी अपितु रामायण तथा महाभारत काल में यह जन साधारण की भाषा भी थी। भाषा इस अर्थ में संस्कृत का प्रयोग वाल्मीकि रामायण में सर्वप्रथम मिलता है। वाल्मीकि रामायण के सुन्दरकाण्ड में सीता के साथ किस भाषा में बात करनी चाहिए? यह सोचते हुए हनुमान जी ने कहा था -

यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्।
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।।

इससे संस्कृत के प्रयोग की महत्ता प्रदर्शित होती है अमनुष्य हनुमान भी संस्कृत बोलने में समर्थ थे। ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी में संस्कृत हिमालय व विन्ध्य प्रदेश के बीच में व्यवहार की भाषा थी। ब्राह्मण के अतिरिक्त अन्य वर्णों के लोग भी इनका प्रयोग करते थे। जो बोलने में असमर्थ थे इस भाषा को समझ अवश्य जाते थे। प्राचीन शिलालेखों पर भी संस्कृत भाषा अंकित है। महर्षि यास्क तथा पाणिनी आदि विद्वानों ने भी संस्कृत के लिए भाषा शब्द का प्रयोग किया है। इससे स्पष्ट होता है कि ईसा पूर्व की शताब्दी में भी संस्कृत जनसाधारण की भाषा थी। धीरे-धीरे पालि तथा प्राकृत भाषाएं बोलचाल की भाषाएं बन गयीं तथा विद्वानों ने प्राकृत भाषा में भेद दिखलाने के लिए दूसरा नाम संस्कृत भाषा में दे दिया।

संस्कृत भाषा में लिखित अद्वितीय साहित्य दो रूपों में मिलता है - वैदिक तथा लौकिक। वैदिक साहित्य की दृष्टि से भी संस्कृत भाषा का विशिष्ट महत्व है - वेद का महत्व इस प्रकार वर्णित है।

प्रत्यक्षेणानुमित्या वा यस्तूपायो न बुध्यते।
एतं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता।।

ऋग्वेद संस्कृत भाषा की ही नहीं अपितु विश्व की प्राचीन रचना है।

संस्कृत रिसर्च इन्स्टीट्यूट दरभंगा के शिलान्यास के अवसर पर प्रदत्त भाषण में 21 नवम्बर 1951 को डॉ०राजेन्द्र प्रसाद ने कहा था - ''संस्कृत वाङ्-मय भारत की ही क्यों सारी मनुष्य जाति के लिए अमूल्य निधि है। उसकी प्राचीनता, उसकी व्यापकता, उसकी विशदता, उसकी सौन्दर्य और मधुरता सभी तो ऐसी है जिनसे न केवल मानव की आज तक की संस्कृति का सारा इतिहास ज्योतिर्मय हो उठता है वरन् मानव का हृदय आनन्द विभोर हो जाता है और उसको एक ऐसे नये आदर्श लोक की झाँकी मिल जाती है जिसमें पहुँचने पर ही उसका जीवन सार्थक हो सकता है और उसे भवबाधा से मुक्ति मिल सकती है।''

2.6.2 सांस्कृतिक भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

संस्कृत भाषा भारतीय संस्कृति का आदि स्रोत है। देश की भाषा के माध्यम से भारतीय संस्कृति अमर है। यह भाषा संस्कारित, परिष्कृत तथा परिमार्जित है। जैसा कि इसकी इसकी शाब्दिक उत्पत्ति से भी स्पष्ट होता है। 'संस्कृत' यह शब्द सम् उपसर्ग पूर्वक धातु से बना है जिसका मौलिक अर्थ है 'संस्कार की गई भाषा'। हमारे सोलह संस्कार इस संस्कारित भाषा में ही कराए जाते हैं। जो जन्म से मृत्युपर्यन्त जुड़े है। इन संस्कारों से आत्मा तथा अन्तःकरण की शुद्धि होती है। भारत के उच्च कोटि के सांस्कृतिक विचार, आाध्यात्मिक भाव, उच्च नैतिक मूल्य संस्कृत भाषा में ही सुरक्षित है। 'सर्वे भवन्तु सूखिन', 'उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम', 'कर्मण्यवाधिकारस्ते मा फलेषु कादाचन', जैसे उत्प्रेरणात्मक सुभाषित वाक्य व श्लोक हमें इस भाषा में ही मिलते हैं। भारतीय संस्कृति में निहित उच्च आध्यात्मिक भाव ही हमारे देश को विश्व का गुरू बनाने में समर्थ हो सके। मनुस्मृति में कहा गया है -

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादपजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्र शिक्षरेन पृथिव्यां सर्वमानवा।।

''विश्व के प्रत्येक भूभाग से ज्ञान के जिज्ञासु इस देश में आएँ और यहाँ के प्रतिभाशाली तत्ववेताओं द्वारा नीति की शिक्षा ग्रहण करेंगे।''

2.6.3 राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता की भाषा के रूप में संस्कृत का महत्व

राष्ट्रीय एकता- संस्कृत साहित्य ने सम्पूर्ण भारत को एकता के सूत्र में बांधने का कार्य किया है। बहुभाषाभाषी तथा अनेक प्रान्तों में विभक्त भारत वाह्य भेद अवश्य हैं तथापि उसकी संस्कृति एक ही है।

श्री नरहरि विष्णु गाडगिल के शब्दों में- ''संस्कृत भाषा का लालित्य, सौंदर्य, शैली, शब्दसम्पत्ति, गतिशीलता, संस्कृत वाङ्-मय में प्रतिपादित विचार, ज्ञान और अध्यात्मविद्या जब मन और आँखों में आती है, तब यह सारी सम्पत्ति लोगों के लिए उपयोगी हो, यह इच्छा स्वाभाविक ही है। 19वीं शताब्दी में जितने भी व्यक्ति विकास के लिए आगे बढ़े, उनमें सभी संस्कृत के पण्डित थे। उन्होंने संस्कृत विद्या से ही प्रेरणा प्राप्त की थी, जैसे - राजाराममोहन राय, दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य तिलक और महामना मालवीय जी। भारत में बोली जाने वाली सभी भाषायें संस्कृत रूपी महावृक्ष की लताये हैं, यह कहना अनुचित नहीं होगा। महाभारत और रामायण में जो नीति तत्व हैं, उन्हीं के आश्रय से भारतीयों के

वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन का निर्माण हुआ है। वेदों और उपनिषदों में प्रतिपादित तत्व ज्ञान ही यहाँ के जीवन का मुख्य आधार है। इसी कारण से भारत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए संस्कृत का सामान्य ज्ञान आवश्यक सा हो जाता है।"

अपनत्व तथा आत्मीयता का उदाहरण अथर्थवेद के भूमिसूक्त में मिलता है-''मातृभूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः'' यह भूमि मेरी माँ है, मैं इसका पुत्र हूँ। प्राचीनतम द्योतमान देव दो ही हैं एक- हमारे ऊपर विद्यमान प्रकाशमान आकाश जो पितृरूप है तथा दूसरा-प्राणियों को आश्रय देने वाले पृथ्वी जो मातृरूपा है। इस उदात्त कल्पना का प्रथम दर्शन हमें ऋग्वेद में मिलता है। कुछ मन्त्र प्रस्तुत हैं-

द्यौर्मेपिता जनिता (ऋग्वेद 1/164/33) धौर्नः पिता जनिता (अर्थव. 9/10/12) धौर्मे पिता पिृथिवी मे माता (काठक सं. 7/15/16)।

प्राचीन आचार्य एवं कवि पूरे भारतवर्ष का प्रतिबिम्ब अपने हृदय में तथा सम्पूर्ण भारत में अपना प्रतिबिम्ब देखते हुए ग्रंथों की रचना करते थे।

निम्न श्लोक में तीर्थ स्थानों और पवित्र-नदियों का वर्णन उनके एकात्म भाव का द्योतक है-

अयोध्या-मथुरा-माया-काशी-कांची-अवन्तिका।
पुरी द्वारावती ज्ञेया स्नैते मोक्षदायिकाः।।1।।
गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वती।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन्, सन्निधिं कुरू।।2।।

अन्तर्राष्ट्रीय एकता- संस्कृत भाषा का महत्व केवल राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने तक ही सीमित नहीं है, अपितु इसका भाव अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी स्पष्ट दिखाई देता है। डॉ०रघुवीर तथा राहुल सांकृत्यायन की आधुनिक खोजों द्वारा सिद्ध हो चुका है, कि आज भी एशियाई देशों में संस्कृत साहित्य को आदर और सत्कार की दृष्टि से देखा जाता है। संस्कृत के नाम तथा शब्द आज भी इन देशों में प्रचलित हैं। बाली प्रायद्वीप में सरस्वती पूजा आज भी की जाती है। इनमें से कतिपय देशों में भारतीय कलैण्डर का ही अनुकरण किया जाता है। कुछ देशों में तो वास्तविक रूप में भारतीय रीति-रिवाज प्रचलित हैं। वहाँ संस्कृत साहित्य की आज भी चर्चा होती है। डॉ०रघुवीर के अनुसार मंगोलिया के भीतर भागों में दण्डी के काव्यादर्श का पठन-पाठन होता है।

आज हम राजनैतिक वातावरण के प्रति कितने भी मूक बने रहे किन्तु हमें यह मानना ही होगा कि संस्कृत भाषा से पूरे देश को एकता के सूत्र में बांधा जा सकता है और भाषा विषयक देशव्यापी आन्तरिक कलह को समाप्त किया जा सकता है। तमिल, तेलुगु, मराठी, गुजराती आदि सभी भारतीय भाषाएं संस्कृत से अनुप्राणित हैं। संस्कृत को न केवल भारत में बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी महत्व प्राप्त है। रूस के मास्को, लेनिनग्राद आदि विश्वविद्यालयों में संस्कृत को ऊँचा स्थान प्राप्त है। इन विश्वविद्यालयों में ''भारतीय भाषा भूमिका'' नामक पाठ्यक्रम में वहाँ के छात्र विषय में अनुसंधान करते हैं। रूसी भाषा के

माध्यम से संस्कृत व्याकरण और संस्कृत की प्रारम्भिक पुस्तकें भी वहाँ पर्याप्त प्रकाशित हो चुकी हैं। बहुत वर्षों पहले रूस से आये हुए डॉ०लुई रेणु ने कहा था कि ''विश्व की सभी भाषाएँ संस्कृत से प्रभावित हैं। एशिया के अनेक देशों की भाषा तो संस्कृत शब्दों से भरी हैं।''

अमरीका में भी संस्कृत को अत्यधिक महत्व प्राप्त है- 'अमेरीकी कांग्रेस पुस्तकालय' में करीब 7000 संस्कृत की हस्तलिखित पुस्तकें सुलभ हैं। अमरीका के पीरू प्रान्त की कुईचुआ भाषा संस्कृत शब्दों से भरी है, इसलिए वहाँ अनेक विश्वविद्यालयों में संस्कृत पढ़ाई जा रही है। अमरीका के भाषा शास्त्रियों का कहना है कि - ''न केवल एशिया के ही वरन् यूरोप भर के भाषाविदों के लिए संस्कृत अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि संस्कृत भाषा के साथ सबका निकटतम सम्बन्ध है।''

संस्कृत भाषा में 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामायाः 'उदारचरितानां तु वसतुधैव कुटुम्बकम' जैसे कितने ही संदेश विश्व प्रेम तथा विश्व शान्ति का संदेश देते हैं। शतम् ता कण्टुमवर्ग के लोग मूलतः एक ही आर्य जाति से संबन्धित थे। यह ज्ञान इन वर्गों की भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से प्राप्त होता है। संस्कृत भाषा इन भाषाओं में प्रमुख है।

डॉ०राधाकृष्णन के शब्दों में - ''आधा संसार उन स्वतंत्र तथा मौलिक आधारशिलाओं पर स्थित है जो हिन्दू धर्म की देन है। चीन, जापान, तिब्बत, बर्मा तथा लंका, भारत को ही अपने आध्यात्मिकता का केंद्र मानते हैं।'' डॉ०राधाकृष्णन के उक्त शब्द भी अप्रत्यक्ष रूप से संस्कृत भाषा के अंतर्राष्ट्रीय महत्व को मानते हैं, क्योंकि हिन्दू धर्म का आधार संस्कृत भाषा ही है।

2.7 समस्याएँ एवं चुनौतियाँ

वर्तमान समय में भाषा की समस्या बहुत बड़ी है। भाषा की यह समस्या न केवल संस्कृत भाषा को प्रभावित कर रहा है। अपितु सभी क्षेत्रीय भाषाओं के सामने यही परिस्थिति है। अंग्रेजी भाषा के अवैज्ञानिक होने पर भी उसका बढ़ता महत्व सभी भारतीय भाषाओ को क्षति पहुंचा रहा है।

2.7.1 संस्कृत शिक्षण के प्रसार में समस्याएं एवं चुनौतियाँ

- रोजगार का आभाव होना
- योग्य शिक्षकों की भारी मात्रा में कमी
- विद्यालयों, महाविद्यालयों में रिक्त पदों की पूर्ति न होना
- युवा पीढ़ी का संस्कृत भाषा के प्रति रुचि का कम होना या रुचि का न होना
- अभिभावकों का भी लोक-लुभावन विषयों से प्रभावित होना
- राजनीति का प्रभाव एवं सकरात्मक पुनर्बलन नही मिलना
- संस्कृत भाषा के बारे में प्राप्त भ्रान्तियां (यह पूजा-पाठ की भाषा है, एवं अधिक कठिन है)

- जागरूकता का आभाव , इत्यादि

2.7.2 संस्कृत शिक्षण के समस्याओं के उपाय

- रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये जाएँ
- संस्कृत के प्रश्नों को प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित किया जाए
- रिक्त पदों की यथाशीघ्र पूर्ती की जाए
- सेवापुर्व शिक्षकों का प्रशिक्षण किए जाए
- सेवारत अध्यापकों को निश्चित समयान्तराल पर प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किए जाए
- अन्य विषयों की भांति संस्कृत शिक्षण में तकनीकी का प्रयोग कर छात्रों में रुचि उत्पन्न किया जाए
- संस्कृत के प्रति जागरूकता बढ़ाई जाए
- सरकार के द्वारा विविध प्रकार के सहयोग किए जाएँ

2.8 सारांश

इस इकाई को पढ़कर आप समझ गए होंगे संस्कृत न केवल एक भाषा है, अपितु एक सम्पूर्ण-शास्त्र है। संस्कृत- शास्त्र में समाहित विविध ज्ञान के श्रोत के रूप में वेद, दर्शन, पुराण, धर्मशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, न्याय, मीमांसा, आयुर्वेद, रसायनशास्त्र इत्यादि ज्ञान का यह भंडार संभवतःविश्व के किसी अन्य विषयों में नहीं मिलेगा यही कारण है, कि विश्व के तमाम देश संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति से आश्चर्य-चकित एवं हमेशा से प्रभावित रहे है। और आज भी कई देशों में संस्कृत शोध का विषय बना है। एवं स्कूलों में अध्यापन भी कराया जा रहा है। संस्कृत देश एवं विश्व को जोड़ने एवं स्वयं में समाहित करने वाली भाषा है। संस्कृत के इस विविध पक्षों एवं आवश्यकता को देख-समझकर सभी आवश्यकताओं के अनुरूप हमें एक योग्य शिक्षक बनने की जरूरत है।

2.9 शब्दावली

1. **प्राथमिक स्तर-** प्रारम्भिक स्तर का तात्पर्य संस्कृत-शिक्षण के प्रारम्भिक स्तर से है जिसमें सामान्यतः 6, 7 और 8 रख सकते हैं।
2. **माध्यमिक स्तर-** मध्य स्तर में माध्यमिक कक्षाएँ अर्थात् 9, 10, 11, 12 आ सकतीं है
3. **उच्च स्तर-** उच्च स्तर पर विश्वविद्यालय की अन्तिम परीक्षा तक हो सकती है।
4. **भाषा विज्ञान-** भाषा का आतंरिक एवं बाह्य विज्ञान

2.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. झा, डॉ- नागेन्द्र, प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति, अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली, 2013
2. शर्मा, डॉ. लक्ष्मीनारायण, भाषा 1, 2 की शिक्षण विधियाँ एवं पाठ नियोजन, 1994
3. शर्मा, डॉ- उषा, संस्कृत शिक्षण, स्वाति पब्लिकेशन्स, जयपूर
4. शर्मा, डॉ- नन्दराम, संस्कृत शिक्षण, साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन, 2007
5. मित्तल, डॉ. संतोष, संस्कृत शिक्षण, आर. लाल. बुक डिपो, 2010

2.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. संस्कृत भाषा शिक्षण की अवधारणा स्पष्ट कीजिए। संस्कृत शिक्षण के उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
2. संस्कृत भाषा शिक्षण, मातृभाषा शिक्षण तथा अंग्रेजी शिक्षण के उद्देश्यों के मध्य अंतर स्पष्ट कीजिए।
3. संस्कृत शिक्षण में भाषा विज्ञान के तत्वों की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
4. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय एकता की भाषा के रूप में संस्कृत का क्या महत्व है?
5. संस्कृत शिक्षण के प्रसार में आने वाली चुनौतियों का वर्णन कीजिए।
6. वर्तमान युग में संस्कृत शिक्षण के प्रसार की चुनौतियों एवं समस्याओं के क्या उपाय है ?
7. संस्कृत भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।
8. संस्कृत भाषा के महत्व का वर्णन कीजिए।
9. माध्यमिक स्तर पर संस्कृत शिक्षण के क्या उद्देश्य है ?
10. संस्कृत भाषा का सांस्कृतिक महत्व स्पष्ट कीजिए।

इकाई 3 -भारत में संस्कृत भाषा एवं संस्कृत भाषा शिक्षण की परिस्थिति

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 स्वतन्त्र भारत के विभिन्न शिक्षा आयोगों में संस्कृत शिक्षण
    3.3.1 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण
    3.3.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण
    3.3.3 संस्कृत शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण
    3.3.4 शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग) में संस्कृत शिक्षण
3.4 स्वतन्त्र भारत के विभिन्न शिक्षा नीतियों में संस्कृत शिक्षण
    3.4.1 शिक्षा नीति (1968) में संस्कृत शिक्षण
    3.4.2 नई शिक्षा नीति (1986) में संस्कृत शिक्षण
    3.4.3 नई शिक्षा नीति (1986) में संस्कृत का स्थान
3.5 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1975, 1988, 2000, 2005 तथा संस्कृत शिक्षण
    3.5.1 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1975
    3.5.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1988
    3.5.3 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 2000
    3.5.4 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 2005
3.6 संस्कृत अध्ययन-अध्ययापन में नवाचार
    3.6.1 राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के प्रयास
    3.6.2 श्री अरविंद आश्रम के प्रयास
    3.6.3 संस्कृत भारती के प्रयास
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

शिक्षा समाज का दर्पण होता है या ऐसा कह सकते है कि समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति का माध्यम है शिक्षा। प्रत्यक्ष रूप में हम देख सकते है कि सामाजिक बदलाव से शिक्षा हमेशा प्रभावित रही है चाहे वैदिककाल की शिक्षा व्यवस्था, मुस्लिम काल की शिक्षा व्यवस्था या आधुनिक काल की शिक्षा व्यवस्था हो। स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय समाज अनेक परिवर्तन हुए जिसके अनुरूप भारत ने शिक्षा व्यवस्था में व्यापक स्तर पर परिवर्तन किए। जिससे की देश समाज की जरूरतों को पूरा कर सके तथा वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित हो सके। जिसके लिए समय-समय पर विभिन्न शिक्षा आयोगों का गठन हुआ।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई क अध्ययन करने के पश्चात आप-

1. भारतीय शिक्षा व्यवस्था से परिचित हो सकेंगे।
2. भारतीय शिक्षा व्यवस्था में समय-समय पर हुए विकास को समझ सकेंगे।
3. विभिन्न शिक्षा आयोगों के द्वारा हुए परिवर्तन को समझ सकेंगे।
4. विभिन्न शिक्षा नीतियों के द्वारा संस्कृत के विकास की स्थिति को समझ सकेंगे।
5. संस्कृत के संरक्षण एवं विकास के लिए समर्पित विभिन्न संस्थाओं के योगदान से परिचित होंगे।

3.3 स्वतन्त्र भारत के विभिन्न शिक्षा आयोगों में संस्कृत शिक्षण

3.3.1 विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग- (डॉ. राधाकृष्णन कमीश्न सन् 1948-49) स्वतंत्रोपरान्त विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा में सुधार हेतु डॉ.राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया। आयोग ने अपने प्रतिवेदन के 131वें पृष्ठ पर माध्यमिक विद्यालयों तथा महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत तथा अन्य प्राचीन भाषाओं के स्थान की भी चर्चा की है। आयोग ने कक्षा 9^{th} एवं 10^{th} के पाठ्यक्रम में शास्त्रीय भाषा के रूप में संस्कृत को स्थान दिया। आयोग द्वारा निर्धारित मुख्य विषय हैं- (i) मातृभाषा (ii) संघीय भाषा या एक शास्त्रीय भाषा या आधुनिक भारतीय भाषा, (iii) अंग्रेजी, (iv) प्रारम्भिक गणित, (v) सामान्य विज्ञान, (vi) सामाजिक अध्ययन (7 एवं 8) में अनेक विकल्पों में से किन्हीं दो का चयन, जिसमें वरीयता क्रमानुसार संख्या एक पर एक शास्त्रीय भाषा हो। कक्षा 11^{th} एवं 12^{th} तथा प्रथम डिग्री कोर्स के पाठ्यक्रम में भी शास्त्रीय भाषाओं को स्थान दिया गया। इन प्रकार आयोग ने संघीय भाषा के विकल्प में संस्कृत विषय को अनिवार्य करने की सिफारिश की। आयोग के पृ. 131 पर कहा गया है- ''उपाधि पाठ्यक्रम में हमारे छात्रों को अब संस्कृत के अध्ययन

में प्रोत्साहित किया जायेगा।'' आयोग ने यह भी कहा कि संस्कृत भाषा तथा हमारा सांस्कृतिक उत्तराधिकार है। इसमें अनुसंधान के विस्तृत क्षेत्र विद्यमान हैं।

3.2.2 माध्यमिक शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण

माध्यमिक शिक्षा आयोग- (मुदालियर कमीशन 1952-53) माध्यमिक शिक्षा के स्तर के उन्नयन हेतु निर्मित इस आयोग में द्विभाषा सूत्र प्रस्तुत किया गया। इस सूत्र के दोनों विकल्पों में शास्त्रीय भाषा को भी स्थान दिया गया-

प्रथम विकल्प– निम्नलिखित में से कोई एक भाषा-

i. मातृभाषा
ii. क्षेत्रीय भाषा
iii. मातृभाषा व शास्त्रीय भाषा का मिश्रित पाठ्यक्रम

द्वितीय विकल्प–निम्नलिखित में से कोई एक भाषा

i. हिंदी (अहिन्दी भाषा क्षेत्रों के लिए)
ii. प्रारम्भिक अंग्रेजी (जिन छात्रों ने पूर्व माध्यमिक स्तर पर अंग्रेजी नही पढ़ी हो)
iii. उच्च अंग्रेजी (जिन्होंने पूर्व माध्यमिक स्तर पर अंग्रेजी पढ़ी हो)
iv. कोई एक आधुनिक भारतीय भाषा (हिन्दी तथा संख्या 1 पर ली गई भाषा को छोड़कर)
v. कोई एक आधुनिक विदेशी भाषा (अंग्रेजी को छोड़कर)
vi. कोई एक भारतीय भाषा/शास्त्रीय भाषा।

उपर्युक्त दोनों विकल्पों से स्पष्ट है कि मुदालियार आयोग ने मातृभाषा एवं क्षेत्रीय भाषा के मिश्रित पाठ्यक्रम में संस्कृत को स्थान दिया है। साथ ही संस्कृत आधुनिक भारतीय भाषा में सम्मिलित की है, किन्तु स्पष्टत: संस्कृत पाठ्यक्रम की घोषणा नहीं की है।

संशोधित द्विभाषा सूत्र-

1. मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा।
   (क) आधुनिक भारतीय भाषा (हिंदी क्षेत्रों के लिए)
   (ख) संघीय भाषा हिंदी (अहिंदी क्षेत्रों के लिए)

संख्या 2 पर आधुनिक भारतीय भाषा में हिंदी प्रदेशों में संस्कृत को महत्त्व दिया जा सकता है। आयोग ने सांस्कृतिक तथा धार्मिक दोनों ही पक्षों से संस्कृत की महत्ता तथा हृदयग्राह्यता की स्वीकार किया है। संस्कृत के वर्तमान ह्रास पर खेद प्रकट करतेहुए आयोग ने इस तथ्य की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है कि यदि यही स्थिति बनी रही तो भय है कि कहीं अन्ततोगत्वा इस भाषा के पठन-पाठन का लोप न हो जाए।

3.3.3 संस्कृत शिक्षा आयोग में संस्कृत शिक्षण

यह आयोग स्वतंत्र भारत में संस्कृत की स्थिति एवं विकास की संभावनाओं पर चिंतन करने के लिए गठित किया गया था। आयोग ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्टतः कहा ह कि माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत को अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए। इसके लिए त्रिभाषा सूत्र में परिवर्तन करना अपेक्षित हो तो परिवर्तन भी अवश्य किया जाए।

संस्कृत आयोग ने माध्यमिक विद्यालयों में भाषाओं के अध्ययन के विषय में 4 योजनाओं का उल्लेख किया है –

i. **प्रथम योजना** – (i) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा (ii) अंग्रेजी अथवा हिंदी (अहिन्दी प्रदेशों में) या आधुनिक भाषा (हिंदी प्रदेशों में), (iii) संस्कृत या कोई अन्य भाषा।
ii. **द्वितीय योजना**
   a. मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा
   b. अंग्रेजी
   c. हिंदी या अन्य भारतीय भाषा
   d. संस्कृत
iii. **तृतीय योजना-** द्वितीय योजना की भाँति हो, किन्तु संस्कृत माध्यम से परीक्षा न हो तथा संस्कृत विषय के अंकों का परीक्षाफल पर प्रभाव न पड़े।
   आयोग ने इस योजना की अभिशंसा नहीं की, क्योकि अंक न जुड़ने पर संस्कृत की उपेक्षा हो जायेगी
iv. **चतुर्थ योजना-** (i) मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा/मातृभाषा एवं संस्कृत का मिश्रित पाठ्यक्रम। (ii) अंग्रेजी, (iii) हिंदी या अन्य भारतीय भाषा या हिंदी एवं संस्कृत का मिश्रित पाठ्यक्रम।

आयोग ने विद्यालयों में संस्कृत के पठन-पाठन की व्यवस्था के सम्बनध में निम्न सुझाव दिए -

(i) कक्षा एक से पाँच तक केवल मातृभाषा तथा पठन-पाठन सहगामी क्रिया के रूप में संस्कृत सुभाषितों के स्वेच्छा से सञ्चालित पाठ।
(ii) कक्षा छ: में मातृभाषा तथा अंग्रेजी। संस्कृत सुभाषित आदि के पाठ प्रचलित रहेंगे।
(iii) कक्षा सात से ग्यारह तक मातृभाषा की मात्रा कम करते हुए अंग्रेजी तथा संस्कृत का विशेष अध्ययन।
(iv) आयोग ने 'संस्कृत को स्कूल के अतिरिक्त समय में पढ़ाया जाये तथा उसे परीक्षा का विषय न रखा जाए' इस सुझाव का पूर्णत: विरोध किया।
(v) महाविद्यालय स्तर पर संस्कृत के विस्तृत अध्ययन की जड़ मजबूत बनाने की दृष्टि से माध्यमिक स्तर पर संस्कृत का पाँच वर्गों से कम या पाठ्यक्रम उपयुक्त नहीं होगा।
(vi) जहाँ संस्कृत का विशिष्टीकृत अध्ययन किया जाता है, वहाँ प्राकृत को भी संस्कृत के साथ अनिवार्य अध्ययन का विषय रखा जाना चाहिए।

(vii) भाषा अध्यापन की व्यवस्था में माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत का प्रावधान अवश्य किया जाना चाहिए। इसके साथ ही साथ इस पाठ्यक्रम को सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम के अन्तर्गत भी अवश्य सम्मिलित करना चाहिए।

आयोग यह संस्तुति करता है कि विषयों के वर्गों को इस प्रकार बनाया जाये कि जो छात्र संस्कृत पढ़ना चाहें, वे इससे वंचित न रहें।

3.3.4 शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग) में संस्कृत शिक्षण

शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग1964-66)- 14 जुलाई, 1964 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रधान प्रोफेसर दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित किया गया आयोग ने कक्षा 1-4 तक के लिए एक भाषा- मातृभाषा या क्षेत्रीय या प्रादेशिक भाषा, कक्षा 5-7 तक दो भाषाएँ- (अ) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा (ब) हिंदी या अंग्रेजी, तक एक तीसरी भाषा (अंग्रेजी, हिंदी या प्रादेशिक भाषा) का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर किया जा सकता है, यह प्रावधान रखा। कक्षा 8-10 तक तीन भाषाएँ- अहिंदी भाषी क्षेत्रों में सामान्यरूप से निम्नलिखित भाषाएँ होनी चाहिएं-(क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा (ख) उच्च स्तर या निम्न स्तर की हिंदी (ग) उच्च या निम्न स्तर की अंग्रेजी।

हिंदी भाषी क्षेत्रों में सामान्यत: निम्न भाषाएँ होनी चाहिएं-

(क) मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा

(ख) अंग्रेजी (या हिंदी यदि अंग्रेजी मातृभाषा के रूप में ले ली गई है)

(ग) हिंदी के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा।

नोट- शास्त्रीय भाषा का अध्ययन वैकल्पिक आधार पर उपर्युक्त भाषाओं के अतिरिक्त किया जा सकता है।

कक्षा 11-12 के लिए कोई दो भाषाएँ जिनमें कोई आधुनिक भारतीय भाषा, कोई आधुनिक विदेशी भाषा या कोई शास्त्रीय भाषा सम्मिलित हो तथा एक अतिरिक्त भाषा ली जाए।

कोठारी आयोग ने संस्कृत या अन्य किसी शास्त्रीय भाषा को त्रिभाषा सूत्र में स्थान नहीं दिया है, अपितु आधुनिक भारतीय भाषाओं को स्थान दिया है। आयोग का मानना है कि मातृभाषा तथा संस्कृत का एक मिश्रित पाठ्यक्रम होना चाहिए , परन्तु जनमत इसके पक्ष में नहीं है।

3.4 स्वतन्त्र भारत की विभिन्न शिक्षा नीतियों में संस्कृत शिक्षण

3.4.1 शिक्षा नीति (1968) में संस्कृत शिक्षण

हिंदी प्रदेशों में- 1. मातृभाष, 2. हिंदी, 3. अंग्रेजी

हिंदी, अंग्रेजी इनके अतिरिक्त दूसरी एक आधुनिक भारतीय भाषा (प्रधानत: कोई द्रविड़ परिवार की भाषा)।

अहिंदी प्रदेशों में- 1. मातृभाषा, 2. हिंदी, 3. अंग्रेजी

विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी व अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त कोई एक अन्य भाषा जिस पर भलीभाँति अधिकार प्राप्त करने के लिए विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय में समुचित पाठ्यक्रम व्यवस्था होनी चाहिए। इसके लिए 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में यह संस्तुति की गई कि संस्कृत भाषा भारतीय भाषाओं की जननी है, अत: विद्यालय तथा विश्वविद्यालय स्तर पर संस्कृत अध्ययन की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।

3.4.2 नई शिक्षा नीति (1986) में संस्कृत शिक्षण

इस नीति में त्रिभाषासूत्र को महत्त्व दिया गया।

5+3+2 इस संरचना के अनुसार भाषा अध्ययन की व्यवस्था की संस्तुति की गई-

कक्षा का क्रम	त्रिभाषा सूत्र
1. प्रथम, द्वितीय, तृतीय कक्षाओं में	1. मातृभाषा
2. तीसरी कक्षा से पाँचवीं कक्षा तक	2. (1) मातृभाषा (2) अंग्रेजी
3. छठी कक्षा से आठवीं कक्षा तक	3. (1) मातृभाषा (2) अंग्रेजी (3) संस्कृत भाषा (अथवा अन्य श्रेष्ठ भाषा)
4. नवीं तथा दसवीं कक्षा में	4. (1) मातृभाषा (2) अंग्रेजी (3) हिंदी

3.4.3 नई शिक्षा नीति (1986) में संस्कृत का स्थान

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी प्राथमिक स्तर पर एक भाषा-मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा को पाठ्यक्रम में स्थान देने की बात कही गई व कोठारी आयोग द्वारा भाषा सम्बन्धी संस्तुति का ही अनुकरण किया गया।

17 मार्च, 1989 को देश के सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के दिनांक 16 सितम्बर, 1988 के आदेश के उस अंश को लागू किये जाने से रोक दिया, जिसके तहत संस्कृत को नई पाठ्यक्रम योजना से प्रायः निष्कासित कर दिया गया था। 1964 में शिक्षा आयोग ने भारतीय भाषाओं के साथ 'आधुनिक' शब्द लगाकर संस्कृत को भारतीय भाषाओं की सूची से बहिष्कृत कर दिया था। शिक्षा आयोग की इस असंगत रिपोर्ट को कार्यान्वित नहीं किया गया तथा त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत की स्थिति यथावत् बनी रही। इस समय तक यद्यपि त्रिभाषा सूत्र की चर्चा और परिभाषा होती रही पर इसे पूरी तरह कार्यान्वित नहीं किया जा सका। 24 जुलाई 1968 को शिक्षा मंत्रालय के शिक्षा नीति के सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया। इस शिक्षा नीति प्रस्ताव का सहारा लेकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के

दस्तावेज में माध्यमिक स्तर पर पढ़ाई जाने वाली भाषाओं के संदर्भ में कहा गया कि 1968 की शिक्षा नीति में भाषाओं के विकास के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा की गई। इसमें निहित मूल मुद्दा आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना तब था। विषमताओं के बावजूद इसमें सुधार की कोई गुंजाइश नहीं है। इसे अधिक उत्साह और सोद्देश्य तरीके से कार्यान्वित किया जाना चाहिए। इसी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के पैरा 5, 33 में कहा गया है कि ''पुरातत्व, मानवता और समाज विज्ञान को समुचित आधार देने के लिए ज्ञान के समन्वय तथा विभिन्न विषयों में गवेषणा को उत्साहित करने के लिए प्राचीन भारतीय ज्ञान भण्डार की खोज एवं वर्तमान युग की वास्तविकताओं के साथ इसकी सम्बद्धता के लिए संस्कृत भाषा के अध्ययन की प्रचुर सुविधाएँ दी जाएँगी।''

इस प्रकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दस्तावेज में एक ओर संस्कृत के अध्ययन को पनपाने की बात कही गई तो दूसरी ओर 1968 की शिक्षा नीति के अनुसार संस्कृत को नजर-अंदाज करने पर बल दिया गया। उच्च स्तर पर उपजे इस अन्तर्विरोध की पृष्ठभूमि में केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने त्रिभाषा सूत्र की क्रियान्विति के सम्बन्ध में 16 अगस्त 1988 का दस्तावेज तैयार किया। इसमें यह प्रयत्न किया है कि संस्कृत का नाम भी रह जाए तथा 1968 के शिक्षा मंत्रालय के शिक्षा नीति विषयक उस महत्वपूर्ण प्रस्ताव का मूल मुद्दा भी संरक्षित रह जाए जिसका अनुमोदन राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के दस्तावेज में किया गया है।

सत्र 1988 तक केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध सभी विद्यालयों में संस्कृत कक्षा छः से आठ तक तीसरी भाषा के रूप में तथा नवीं व दसवीं कक्षा में दूसरी भाषा के रूप में पढ़ाई जाती थी। संस्कृत का यह प्रसार कुछ लोगों की आँख की किरकिरी बना हुआ था। फलतः संस्कृत को समाप्त करने के लिए केन्द्रीय शिक्षा परामर्शदात्री समिति ने 1 मार्च 1988 में एक सभा में महत्वपूर्ण निर्णय लिया। सत्ताईस भाषाओं की लम्बी सूची में सभी विदेशी भाषाओं और संस्कृत को बाहर निकाल दिया गया।

उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 351 का भी उल्लेख किया है और कहा है कि संविधान में यह स्पष्ट प्रावधान है कि हिन्दी को बढ़ावा देना केन्द्रीय सरकार का दायित्व है। अनुच्छेद 351 में यह भी कहा गया है कि आवश्यकता पड़ने पर हिन्दी अपने शब्द भण्डार में अभिवृद्धि के लिए संस्कृत का सहारा लेगी, इसीलिए संस्कृत को बढ़ावा देना भी बहुत आवश्यक है क्योंकि संस्कृत को संविधान की आठवीं अनुसूची में भी स्थान दिया गया है। यह एक सुखद स्थिति है।

संस्कृत को हिन्दी 'अ' के साथ 20% के अनुपात में संयुक्त किया गया है। किन्तु सर्वोच्च न्यायालय ने यह आदेश दिया कि केन्द्रीय विद्यालयों में संस्कृत की स्थिति पूर्ववत् बनी रहेगी। फलतः आधुनिक काल में सभी राजकीय व केन्द्रीय विद्यालयों में माध्यमिक स्तर तक यह अनिवार्य है। उच्चतर माध्यमिक व उच्च स्तर पर वैकल्पिक विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। तथापि अध्याय 4 में वर्णित 'राष्ट्रीय संस्कृतसंस्थानम्', नई दिल्ली तथा संस्कृत विश्वविद्यालयों की स्थिति को देखकर यह प्रतीत होता है कि अब भी संस्कृत के विविध पाठ्यक्रम बखूबी चलाए जा रहे हैं। केन्द्र सरकार ने 1999 से 2000 तक इस वर्ष को 'संस्कृत वर्ष' घोषित किया।

3.5 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1975, 1988, 2000, 2005 तथा संस्कृत शिक्षण

किसी भी देश का स्कूल पाठ्यक्रम उसके संविधान की भांति उसकी आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है। हमारे राष्ट्र नेताओं ने बार बार इस बात की ओर संकेत किया है कि भारत की शिक्षा व्यवस्था इसकी ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

3.5.1 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1975

पाठ्यक्रम समिति- 1973 में शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय ने 10+2 प्रणाली का तैयार करने के लिए एक विशेषज्ञ दल का गठन किया। 1974 में इस दल को बढ़ा कर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् कुछ विशेषज्ञों को भी इसमें सम्मिलित किया जिन्होंने 1972 में पाठ्यक्रम का एक प्रारूप तैयार किया था। अगस्त 1975 में दिल्ली में पाठ्यक्रम प्रारूप पर विचार करने के लिय एक राष्ट्रीय सम्मलेन बुलाया गया। इस समिति के अध्यक्ष प्रो. रईस अहमद थे तथा 40 अन्य सदस्य थे।
उद्देश्य- शिक्षा आयोग (1964-65) की रिपोर्ट में बेसिक शिक्षा के श्रेष्ठतम तत्वों को सम्मिलित करते हुए शिक्षा को राष्ट्र के जीवन, आवश्यकताओ तथा आकांक्षाओं से सम्बद्ध करने के लिए उसके आतंरिक परिवर्तन पर बल दिया गया है। अतः इस प्रारूप में सदस्यों ने स्कूल में प्रथम दस वर्षों- प्रथम कक्षा से दसवीं कक्षा तक – के पाठ्यक्रम निर्माण के केवल प्रमुख पक्षों पर दृष्टिपात किया।

प्रमुख सिफारिशें -

i. स्वीकृत सिद्धांतो और मूल्यों की रूपरेखा के अंतर्गत लचक हो।
ii. पाठ्यक्रम जन-जीवन की आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप हो।
iii. विज्ञान और गणित : उत्पादन एवं तर्कशील दृष्टिकोण के लिए।
iv. कार्यानुभव : सीखने के श्रोत के रूप में।
v. त्रि-भाषा फार्मूला
vi. कालात्मक अनुभव और अभिव्यक्ति।
vii. शारीरिक शिक्षा
viii. चरित्र-निर्माण और मानव मूल्य।

प्रारूप में भाषाओं का स्थान

त्रि-भाषा फार्मूला राष्ट्रीय नीति के रूप में स्वीकार किया जा चुका है। स्कूल में दस वर्ष व्यतीत करने के पश्चात् बच्चों को प्रथम भाषा में प्रवीण, दूसरी भाषा समझने और उसे स्वयं अभिव्यक्त करने में समर्थ, तथा तृतीय भाषा के सामान्य रूप को समझने में समर्थ हो जाना चाहिए।

प्राथमिक स्तर के अंत तक छात्रों को मातृभाषा के मानक रूप के माध्यम से सामान्य रूप में अपेक्षित गठन और शब्दावली का प्रयोग करके मौखिक और लिखित रूप समर्थ हो जाना चाहिए। छात्रों को शुद्ध उच्चारण, ध्वनि के उतार-चढ़ाव, मुद्रा, आवश्यक गति और अर्थ ग्रहण के साथ बोल बोल कर पढ़ना आना चाहिए। माध्यमिक स्तर पर भाषा की गहनता और विचारात्मक विषय-वस्तु के माध्यम से सभी विशेषताओं में बृहत्तर प्रवीणता अपेक्षित है। द्वितीय एवं तृतीय भाषा के भी यही लक्ष्य है। द्वितीय भाषा प्राथमिक स्तर अथवा मिडिल स्तर पर प्रारम्भ की जाती है तथा तृतीय भाषा छठी कक्षा से प्रारम्भ की जाती है।

3.5.2 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 1988

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप के विकास हेतु एन. सी. आर. टी. ने 1984-85 में एक राष्ट्रीय संगोष्ठी एवं चार क्षेत्रीय संगोष्ठियाँ की। इसके आधार पर प्रारूप की योजना बनाई गई जिसमें प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के पाठ्यचर्या में निम्नलिखित संसोधन किया गया।

उद्देश्य

- प्राथमिक स्तर पर बच्चों के शारीरिक मानसिक एवं बौद्धिक विकास को ध्यान में पाठ्यचर्या का निर्माण होना चाहिए।
- इसका मुख्य उद्देश्य विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं के बीच असमानता को कम करना।
- शैक्षिक संस्थाओं में प्रत्येक स्तर पर जातिगत भेद को कम करना।
- प्रत्येक स्तर पर पाठ्यचर्या में लचीलापन लाना जिससे छात्रों एवं शिक्षकों के बीच की दूरी को कम किया जा सके।

2.5.3 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 2000

एन. सी. आर. टी. ने राष्ट्रीय संकल्पों को मान्य करके सम्पूर्ण विद्यालय शिक्षा के लिए नवीन पाठ्यचर्या रूपरेखा विकसित करने का दायित्व लिया। सितम्बर 1999 में परिषद् ने अपने आतंरिक संकायों के सदस्यों का एक पाठ्यचर्या समूह गठित करके यह कार्य शुरू किया। इस समूह ने परिषद मुख्यालय के संकाय के प्रत्येक सदस्य और सभी क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों से परामर्श करके और सिद्धान्तों एवं शोध पर आधारित सामग्री का अध्ययन करके "विद्यालयी शिक्षा के लिएराष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा : पाठ्यचर्या दस्तावेज" तैयार किया।

विषय-वस्तु

1988 में जिन मुख्य सरोकारों एवं चिंताओं को व्यक्त किया गया था, उन पर इस दस्तावेज़ ने पुनः जोर दिया। भाषा शिक्षण एवं भाषा के माध्यम से जुड़े मुद्दे, सभी स्तरों के लिए एक समान स्कूल संरचना की

आवश्यकता, सामाजिक समरसता से जुड़े केन्द्रित मुद्दे, पंथनिरपेक्षता एवं राष्ट्रीय एकता और इन सबकी शैक्षिक प्रक्रिया से जुड़े मुद्दे को भी इस दस्तावेज़ में शामिल किया गया।

2.5.4 राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 2005

विषय प्रवेश

1. यह विद्यालयी शिक्षा का अब तक का नवीनतम राष्ट्रीय दस्तावेज है।
2. इसे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के शिक्षाविदों, वैज्ञानिकों, विषय विशेषज्ञों व अध्यापकों ने मिलकर तैयार किया है।
3. मानव संसाधन विकास मंत्रालय की पहल पर प्रो0 यशपाल की अध्यक्षता में देश के चुने हुए 23 विद्वानों ने शिक्षा को नई राष्ट्रीय चुनौतियों के रूप में देखा।

मार्गदर्शी सिद्धान्त

1. ज्ञान को स्कूल के बाहरी जीवन से जोड़ा जाए।
2. पढाई को रटन्त प्रणाली से मुक्त किया जाए।
3. पाठ्यचर्या पाठ्यपुस्तक केन्द्रित न रह जाए।
4. कक्षाकक्ष को गतिविधियों से जोडा जाए।
5. राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति आस्थावान विद्यार्थी तैयार हो।

प्रमुख सुझाव

1. शिक्षण सूत्रों जैसे-ज्ञात से अज्ञात की ओर, मूर्त से अमूर्त की ओर,आदि का अधिकतम प्रयोग हो।
2. सूचना को ज्ञान मानने से बचा जाए ।
3. विशाल पाठ्यक्रम व मोटी किताबें शिक्षा प्रणाली की असफलता का प्रतीक है।
4. मूल्यों को उपदेश देकर नहीं वातावरण देकर स्थापित किया जाए।
5. अच्छे विद्यार्थी की धारणा में बदलाव आवश्यक है अर्थात् अच्छा विद्यार्थी वह है जो तर्क पूर्ण बहस के द्वारा अपने मौलिक विचार शिक्षक के सामने प्रस्तुत करता है।
6. अभिभावकों को सख्त सन्देश दिया जाए कि बच्चों को छोटी उम्र में निपुण बनाने की आकांक्षा रखना गलत है।
7. बच्चों को स्कूल से बाहरी जीवन में तनावमुक्त वातावरण प्रदान करना।
8. ‘‘कक्षा में शान्ति’’ का नियम बार-बार ठीक नहीं अर्थात् जीवन्त कक्षागत वातावरण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

9. सहशैक्षिक गतिविधियों में बच्चों के अभिभावकों को भी जोड़ा जाए।
10. समुदाय को मानवीय संसाधन के रूप में प्रयुक्त होने का अवसर दें।
11. खेल आनन्द व सामूहिकता की भावना के लिए है, रिकार्ड बनाने व तोड़ने की भावना को प्रश्रय न दें।
12. बच्चों की अभिव्यक्ति में मातृभाषा महत्वपूर्ण स्थान रखती है। शिक्षक अधिगम परिस्थितियों में इसका उपयोग करें।
13. पुस्तकालय में बच्चों को स्वयं पुस्तक चुनने का अवसर दें।
14. वे पाठ्यपुस्तकें महत्वपूर्ण होती है जो अन्तःक्रिया का मौका दें।
15. कल्पना व मौलिक लेखन के अधिकाधिक अवसर प्रदान करावें।
16. सजा व पुरस्कार की भावना को सीमित रूप में प्रयोग करना चाहिए।
17. बच्चों के अनुभव और स्वर को प्राथमिकता देते हुए बाल केन्द्रित शिक्षा प्रदान की जाए।
18. सांस्कृतिक कार्यक्रमों में मनोरंजन के स्थान पर सौन्दर्यबोध को प्रश्रय दें।
19. शिक्षक प्रशिक्षण व विद्यार्थियों के मूल्यांकन को सतत प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाए।
20. शिक्षकों को अकादमिक संसाधन व नवाचार आदि समय पर पहुंचाये जाए।

3.6 संस्कृत अध्ययन-अध्यापन में नवाचार

नवाचार से तात्पर्य शिक्षा या शिक्षण में नवीनता से है। चाहे वह प्रौद्योगिकी युक्त परिवर्तन हो या शैक्षिक विधियों का परिवर्तन हो। शिक्षण को रुचिपूर्ण बनाने के लिए समयानुरूप प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाता रहा है। जिसमें कम्प्यूटर सहायक शिक्षा या इण्टरनेट सहायक शिक्षा है, जिसके अन्तर्गत कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली तथा विद्यार्थी विशेष के बीच अनुदेशन के दौरान एक ऐसी प्रयोजनपूर्ण अंतःक्रिया चलती रहती है जिसके माध्यम से विद्यार्थी को अपनी क्षमताओं तथा अधिगम गति का अनुसरण करते हुए निर्धारित-अनुदेशनात्मक उद्दश्यों की प्राप्ति में यथेष्ट सहयोग मिलता रहता है। शिक्षा के क्षेत्र में कम्प्यूटर विविध प्रकार की ऐसी अमूल्य भूमिका निभा सकते है जिसके माध्सम से शिक्षा जगत विविध प्रकार की गतिविधियों का अच्छी विषयों का अध्ययन-अभ्यापन किया जा सकता है चाहे वह विज्ञान हो, अंग्रेजी हो या संस्कृत। शैक्षिक विधियों में परिवर्तन कर रुचिपूर्ण बनाने के लिए राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान ने संस्कृत शिक्षा को सामाजिक एवं वैश्विक रूप दिलाने के लिए नए-नए शोध एवं विकास किए एवं संस्कृत भारती ने अपने प्रयास के द्वारा संस्कृत को सामान्य बोलचाल ई भाषा में प्रतिष्ठित किया है। इसी प्रकार अन्य संस्थाएँ भी संस्कृत के विकास के लिए प्रयासरत है।

3.6.1 राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के प्रयास

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली में स्थित एक शैक्षणिक संस्थान है। यह भारत सरकार द्वारा पूर्णतः वित्तपोषित मानित विश्वविद्यालय है। भारत सरकार ने संस्कृत आयोग (1956-1957) की अनुशंसा के

आधार पर संस्कृत के विकास तथा प्रचार-प्रसार हेतु संस्कृत सम्बद्ध केन्द्र सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के उद्देश्य से 15 अक्टूबर 1970 को एक स्वायत्त संगठन के रूप में इसकी स्थापना की। 7 मई 2002 को मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार ने इसे बहुपरिसरीय मानित विश्वविद्यालय के रूप में घोषित किया।

उद्देश्य- संस्थान की स्थापना के उद्देश्य पारम्परिक संस्कृत विद्या व शोध का प्रचार, विकास व प्रोत्साहन है और उनका पालन करते हुए संस्कृत विद्या की सभी विधाओं में शोध का आरम्भ, अनुदान, प्रोत्साहन तथा संयोजन करना है, साथ-साथ शिक्षक-प्रशिक्षण तथा पाण्डुलिपि विज्ञान आदि को भी संरक्षण देना जिससे पाठमूलक प्रासंगिक विषयों में आधुनिक शोध के निष्कर्ष के साथ सम्बन्ध स्पष्ट किया जा सके तथा इनका प्रकाशन हो सके।

गतिविधियाँ - राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान निम्नलिखित कार्यक्रमों के गतिविधियाँ के संचालन हेतु कृतसंकल्प है।

- देश के विभिन्न राज्यों में केन्द्रीय संस्कृत परिसरों की स्थापना करना ।
- प्राथमिक स्तर से स्नातकोत्तर स्तर तक परम्परागत पद्धति से संस्कृत के अध्ययन, अध्यापन को संचालित करना एवं विद्यावारिधि उपाधि प्राप्ति हेतु शोधकार्य का प्रबन्ध करना।
- स्नातक एवं स्नातकोत्तर छात्रों के लिए सेवापूर्ण शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम का संचालन करना।
- स्वैच्छिक एवं संयुक्त परियोजनाओं को लागू करने में अन्य महत्वपूर्ण संस्थाओं के साथ सहयोग स्थापित करना।
- पाण्डुलिपि संग्रहालय की स्थापना के साथ-साथ अप्राप्य एवं दुर्लभ पाण्डुलिपियों एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थों का सम्पादन और प्रकाशन आदि की व्यवस्था करना।
- संस्कृत के मौलिक ग्रन्थों के प्रकाशन करना एवं संस्कृत में प्रकाशित पत्र पत्रिकाओं को अनुदान देकर प्रोत्साहित करना।
- अंगीभूत परिसरों एवं देश के विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं में अध्ययनरत छात्र-छात्राओं को संस्कृत पढने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करना।
- संस्कृत के प्रकाशित उपयोगी ग्रन्थों को खरीदकर विभिन्न संस्थाओं में निःशुल्क वितरण करना।
- पारम्परिक पद्धति से प्राथमिक (प्रथम) स्तर से स्नातकोतर (आचार्य) स्तर पर्यन्त परीक्षाओं का आयोजन करना।
- पारम्परिक पद्धति से संस्कृत शिक्षणरत संस्थाओं को संबद्धता प्रदान करना।
- देश की संस्कृत सेवी संस्थाओं को लाभ पहुंचाने के लिए अवकाश प्राप्त अनुभवी संस्कृत विद्वानों की शास्त्रचूडामणि योजना के अन्तर्गत नियुक्त कर, विभिन्न संस्थाओं में पदस्थापित करना।
- कार्यरत संस्कृत प्राध्यापकों के ज्ञानवर्धन हेतु पुनश्चर्या पाठ्यक्रम का आयोजन करना।

- समय समय पर देश एवं विदेश स्तर पर विश्व संस्कृत सम्मेलन जैसे बृहत् कार्यक्रमों का आयोजन करना।

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान वर्तमान में संचालित कार्यक्रम निम्नलिखित हैं :-

- पत्राचार एवं अनौपचारिक रीति से संस्कृत शिक्षण
- शिक्षक-प्रशिक्षण तथा स्वाध्याय सामग्री का निर्माण
- अनौपचारिक संस्कृत शिक्षण
- संस्कृत भाषा शिक्षक प्रशिक्षण
- शास्त्रीय ग्रन्थों का उन्नत शिक्षण
- स्वाध्याय सामग्री का निर्माण
- इलेक्ट्रानिक माध्यमों से संस्कृत कार्यक्रमों का प्रसारण
- पारम्परिक पद्धति से संस्कृत शिक्षण हेतु पाठ्यक्रम-निर्धारण
- संस्थान एवं सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा संचालित समस्त पाठ्यक्रमों के लिए परीक्षाओं का आयोजन
- परिसरों की स्थापना
- सुयोग्य छात्रों को छात्रवृत्तियाँ प्रदान करना
- संस्कृत संवर्धन तथा प्रचार हेतु भारत सरकार के विविध योजनाओं का कार्यान्वयन
- भारत के राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित विद्वानों को मानदेय राशि
- अखिल भारतीय वाक्स्पर्धा प्रतियोगिता
- स्वैच्छिक संस्कृत संगठनों को वित्तीय सहायता

3.6.2 श्री अरविन्द आश्रम के प्रयास

रुए डे ला मरीन (Rue de la Marine) पर स्थित श्री अरबिंदो आश्रम (Sri Aurobindo Ashram), भारत के सबसे प्रसिद्ध और धनी आश्रमों में से एक है, जहां देश-विदेश से श्रद्धालु आते हैं। आश्रम के आध्यात्मिक सिद्धांत योग (Yoga) और आधुनिक विज्ञान (Modern Science) के अद्भुत मेल को दर्शाते हैं। आश्रम में कई विभाग हैं, जिनमें कार्यालय, संस्कृत कार्यालय, पुस्तकालय, भोजन कक्ष, पुस्तक/ फोटोग्राफ प्रिंटिंग, कार्यशाला, खेल का मैदान, आर्ट गैलरी, नर्सिंग होम आदि शामिल हैं। यहां कई विशेष अवसर पर दर्शन (Darshan or Message) उत्सव का आयोजन किया जाता है, जिसमें श्री अरबिंदो घोष और 'मीरा अल्फासा' (Mirra Alfassa), माँ (The Mother) के आध्यात्मिक विचारों का प्रचार-प्रसार किया जाता है। आश्रम में एक पुस्तकालय भी है, जहां पर्यटक आध्यात्मिक और योग संबंधी पुस्तकें और योग के नए अनुभव ले सकते हैं।

परिचय - श्री अरविन्द आश्रम के मूल में भारत के प्रसिद्ध कवि और दार्शनिक, श्री अरबिंदो घोष थे, जिन्होंने 24 नवम्बर 1926 को (सिद्धि दिवस) अरबिंदो आश्रम की स्थापना की थी। उसी वर्ष के दिसम्बर

माह में श्री अरविन्द ने निश्चय किया कि वे जनता से दूर रहेंगे| उस समय आश्रम में लगभग 20-25 साधक ही थे। जिनमें से एक विदेशी मूल की चित्रकार और संगीतकार 'मीरा अल्फासा' (Mirra Alfassa) थी। श्री घोष ने सहकर्मी मीरा अलफसा को आश्रम की जिम्मेदारी सौंप दी। जिन्हें माँ (The Mother) नाम से जाना जाता है। अरबिंदो घोष की मृत्यु के बाद सन् 1950 में मीरा अल्फासा ने श्री अरबिंदो आश्रम ट्रस्ट की स्थापना की थी और 1973 तक संचालन किया।

संस्कृत के उत्थान में श्री अरविन्द आश्रम के प्रयास - 'मीरा अल्फासा' माँ जिन्होंने श्री अरबिंदो आश्रम ट्रस्ट की स्थापना की जो की एक चित्रकार और संगीतकार भी थीं। संस्कृत के प्रति उनकी रुचि और निष्ठा अत्यधिक थी माँ के इच्छा थी की संस्कृत एक साधारण रूप में भारत की राष्ट्रीय भाषा घोषित होनी चाहिए। इस शास्त्रीय भाषा से मां गहराई से प्रभावित थी, और भाषा के प्रचलित भय की यह एक मुश्किल और विद्वानों के लिए ही प्रासंगिक भाषा है को दूर कर सामान्य जन के उपयोग के लिए संस्कृत का एक सरल रूप चाहतीं थीं। जिसे सरलता से लिखा जा सके , आपस में बात-चीत की जा सके और आसानी से समझा जा सके| आश्रम में स्थित संस्कृत कार्यालय माँ की संस्कृत के प्रति इसी निष्ठा का परिणाम है।

संस्कृत के सरल रूप को बढ़ावा देने और लोकप्रिय बनाने में श्री अरबिंदो आश्रम का संस्कृत कार्यालय कई वर्षों से सक्रिय एवं संस्कृत के लिए समर्पित हैं। इस दिशा में आश्रम के संस्कृत कार्यालय के अनुसंधान कार्य ने अब तक एक अलग तरीके से अपनाने के लिए संस्कृत को अध्यापन और सीखने के लिए कई नवीन पुस्तकों का संपादन किया है। शुरुआती दौर में ये पुस्तकें विशेष रूप से बहुत आसानी से भाषा सीखने में मददगार साबित हो पाएगी, जो कि मुश्किल माना जाता है।

इनके कुछ विशेष प्रकाशनों में :-

- Learn Sanskrit: The Natural Way,
- Speak Sanskrit: The Easy way,
- संस्कृत कैसे पढ़ायें, सुरभारती (1-4),
- सरलसंस्कृतसरणिः (1-2),
- संस्कृतस्य-व्यावहारिक स्वरुपम्,
- छन्दोवल्लरी,

जो शुरुआती समय में संस्कृत भाषा सीखने और लोकप्रिय बनाने में बेहद सहायक हैं।

3.6.2 संस्कृत भारती के प्रयास

संस्कृत भारती एक सांस्कृतिक संस्था है जो संस्कृत को पुनः बोलचाल की भाषा बनाने में संलग्न है। चमु कृष्ण शास्त्री ने समस्त विश्व में संस्कृतभाषा को पुनर्जीवित करने के लिये इस संस्था स्थापना की।

परिचय- संस्कृत भारत की अति प्राचीन भाषा है किन्तु दुर्भाग्य से आधुनिक काल में इसकी उपेक्षा की जा रही है। स्व. बाबासाहब आप्टे संस्कृत के परम आग्रही थे और स्वयंसेवकों को संस्कृत सीखने तथा इसका प्रचार करने के लिए प्रेरित करते थे। इस कारण अनेक स्वयंसेवक इस दिशा में कार्यरत हुए और प्रान्तीय तथा स्थानीय स्तर पर भारत संस्कृत परिषद्, स्वाध्याय मंडलम्, विश्व संस्कृत प्रतिष्ठान इत्यादि अनेक कार्य प्रारम्भ किए गए। फरवरी, १९९६ में संस्कृत के क्षेत्र में कार्य करने वाले देश के सभी कार्यकर्ता दिल्ली में एकत्रित हुए जहां उपरोक्त संस्थाओं का विलय करके अखिल भारतीय स्तर पर "संस्कृत भारती' की स्थापना हुई।

उद्देश्य - संस्कृत का प्रचार-प्रसार करना और संस्कृत-संभाषण सिखाकर इसे फिर से व्यावहारिक भाषा बनाना। जब लोगों के मन में संस्कृत के प्रति प्रेम जागेगा तो संस्कृति के प्रति भी स्वाभाविक प्रेम उत्पन्न होगा।"संस्कृत भारती' का मूल उद्देश्य है संस्कृत बोलना, सीखना और सम्भाषण के माध्यम से संस्कृत का प्रचार करना, संस्कृत को फिर से व्यावहारिक भाषा बनाना और संस्कृत के विकास के लिए सार्थक प्रयास करना। संस्कृत को संस्कृत के माध्यम से ही पढ़ाने के लिए विविध उपक्रम। संस्कृत से जाति, मत, पंथ, भाषा, ऊंच-नीच आदि सभी भेद-भावों को मिटाकर सामाजिक समरसता लाना, भारत का सांस्कृतिक पुनरुत्थान करना।

संस्कृत भारती के प्रयास

संस्कृत भारती द्वारा "संस्कृत-संभाषण शिविर" आयोजित किये जाते हैं। इनमें दस दिन तक प्रतिदिन दो घंटे के प्रशिक्षण द्वारा बालक-बालिकाएं संस्कृत में संभाषण करने योग्य हो जाते हैं। संस्कृत संभाषण सिखाने के लिए संस्कृत के आचार्यों को प्रशिक्षण दिया जाता है। अब तक ऐसे हजारों आचार्यों द्वारा लाखों लोगों को संस्कृत-संभाषण सिखाया जा चुका है। पत्राचार द्वारा संस्कृत अध्ययन की योजना चार भाषाओं में वर्तमान में संचालित है । संस्कृत भारती द्वारा कुछ अन्य प्रयास भी किए जा रहे हैं जिनमें प्रमुख हैं- "संस्कृत परिवार योजना" और "संस्कृत ग्राम योजना"। "संस्कृत बालकेन्द्रम्"' योजना के द्वारा बच्चों को खेलों के माध्यम से संस्कृत व संस्कृति का ज्ञान दिया जाता है। संस्कृत भारती के प्रयासों से कर्नाटक के मत्तूर जिले के एक ग्राम में संस्कृत आम बोल-चाल की भाषा बन गई है।

मुख्य कार्यक्रम

- दस दिन के संस्कृत सम्भाषण शिविर में प्रतिदिन दो घंटे की कक्षा।
- संस्कृत आचार्यों का प्रशिक्षण।

- समर्पित पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं का निर्माण।
- सेवा (उपेक्षित) बस्तियों में संस्कृत कक्षाएं।
- पुस्तकों का प्रकाशन।
- पत्राचार द्वारा संस्कृत शिक्षा (हिन्दी, गुजराती, मराठी, तमिल, आंग्ल, कन्नड, मलयालम)

उपलब्धियाँ

आज तक 80 लाख लोगों का संस्कृत सम्भाषण शिक्षण, 18,000 आचार्यों का प्रशिक्षण, 65 पुस्तकों का प्रकाशन, 2000 संस्कृतगृहम्, 2 संस्कृतग्राम:। संस्कृत-सम्भाषण को सरलता से सिखाने की एक अपूर्व पद्धति का विकास। अमरीका, इंग्लैण्ड आदि कई देशों में "संस्कृत भारती" का काम चल रहा है। अंतरताना पर भी "संस्कृत भारती" का अंत:क्षेत्र है। इस शताब्दी की समाप्ति से पहले भारत में संस्कृत का चित्र बदलने के लिए व्यापक कार्य योजना तय और उसके अनुसार "संस्कृत भारती" ने अपना कार्य शुरू किया।

संस्कृत को फिर से भारत की बोलचाल की भाषा बनाने की दृष्टि से 1981 में "संस्कृत भारती" द्वारा स्थानीय समर्पित शिक्षकों के साथ-साथ जिन्होंने संस्कृत के माध्यम से अपने सांस्कृतिक उत्तराधिकार की रक्षार्थ अपने महत्वपूर्ण यौवन का समर्पण किया है, ऐसे सेवाव्रतियों तथा पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं का देशव्यापी ढांचा भी खड़ा किया जा रहा है। इसके लिए "संस्कृत भारती" समाज जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के महत्वपूर्ण लोगों का योगदान प्राप्त कर रही है।

3.7 सारांश

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में गुरुकुल प्रणाली से लेकर स्कूली प्रणाली तक बहुत सारे परिवर्तन हुए। कभी शिक्षा व्यवस्था शिक्षक-केन्द्रित हुआ करती थी एवं शिक्षक अपनी समझ के अनुरूप छात्रों में ज्ञान को आरोपित करता था। उस शिक्षा व्यवस्था में समस्या यह थी कि बच्चों की वास्तविक जरूरतों एवं मानसिक स्थिति को समझना सभी शिक्षकों के लिए संभव नहीं था एवं धीरे-धीरे शिक्षा व्यवस्था जब पुरानी होती जाती है और सामाजिक आवश्यकताएं बढती जाती है उस समय शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन की आवश्यकता होती है। इसी को ध्यान में रखकर सरकार समय-समय पर शिक्षा आयोगों का गठन कर शैक्षिक विकास करती रही है।

उपरोक्त विषय-वस्तु को पढ़कर भारतीय शिक्षा व्यवस्था एवं संस्कृत शिक्षा व्यवस्था में विभिन्न आयोगों एवं नीतियों ने संस्कृत को किस रूप में समझा एवं परिवर्तन किया है। यह स्पष्ट होता है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था कहीं न कहीं पाश्चात्य से प्रभावित रही है। भाषाओं के सन्दर्भ में यह देखा गया है कि हम अपने संस्कृत एवं क्षेत्रीय भाषाओं को उचित स्थान नहीं दिला सकें जो स्थान भारत में विदेशी भाषाओं को प्राप्त हुआ। विशेष रूप से संस्कृत को देखें तो संस्कृत भारती जैसी संस्थाओं ने संस्कृत को आम जन की भाषा बनाने के लिए बहुत अच्छा कार्य किया है।

3.8 शब्दावली

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग- (डॉ. राधाकृष्णन कमीश्न सन् 1948-49) स्वतंत्रोपरान्त विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा में सुधार हेतु डॉ.राधाकृष्णन् की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया।
2. माध्यमिक शिक्षा आयोग- **माध्यमिक शिक्षा आयोग-** (मुदलियर कमीशन 1952-53) माध्यमिक शिक्षा के स्तर के उन्नयन हेतु निर्मित इस आयोग में द्विभाषा सूत्र प्रस्तुत किया गया।
3. संस्कृत शिक्षा आयोग- यह आयोग स्वतंत्र भारत में संस्कृत की स्थिति एवं विकास की संभावनाओं पर चिंतन करने के लिए गठित किया गया था । आयोग ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्टतः कहा ह कि माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में संस्कृत को अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए । इसके लिए त्रिभाषा सूत्र में परिवर्तन करना अपेक्षित हो तो परिवर्तन भी अवश्य किया जाए ।
4. शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग)- **शिक्षा आयोग (कोठारी आयोग1964-66)-** 14 जुलाई, 1964 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रधान प्रोफेसर दौलत सिंह कोठारीकी अध्यक्षता में गठित किया गया
5. राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान- **राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान,** नई दिल्ली में स्थित एक बहुपरिसरीय मानित विश्वविद्यालय शैक्षणिक संस्थान है। जिसकी स्थापना संस्कृत आयोग (1956-1957) की अनुशंसा के आधार पर संस्कृत के विकास तथा प्रचार-प्रसार हेतु संस्कृत सम्बद्ध केन्द्र सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के उद्देश्य से 15 अक्टूबर 1970 को एक स्वायत्त संगठन के रूप में इसकी स्थापना की गई ।
6. श्री अरविंद आश्रम- रुए डे ला मरीन (Rue de la Marine) पर स्थित श्री अरबिंदो आश्रम (Sri Aurobindo Ashram), भारत के सबसे प्रसिद्ध और धनी आश्रमों में से एक है, जहां देश-विदेश से श्रद्धालु आते हैं। आश्रम के आध्यात्मिक सिद्धांत योग (Yoga) और आधुनिक विज्ञान (Modern Science) के अद्भुत मेल को दर्शाते हैं।
7. संस्कृत भारती- **संस्कृत भारती** एक सांस्कृतिक संस्था है जो संस्कृत को पुनः बोलचाल की भाषा बनाने में संलग्न है। चमु कृष्ण शास्त्री ने समस्त विश्व में संस्कृतभाषा को पुनर्जीवित करने के लिये इस संस्था स्थापना की।

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. झा, डॉ- नागेन्द्र, प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति, अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली, 2013
2. शर्मा, डॉ- उषा, संस्कृत शिक्षण, स्वाति पब्लिकेशन्स, जयपूर
3. शर्मा, डॉ- नन्दराम, संस्कृत शिक्षण, साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन, 2007
4. मित्तल, डॉ. संतोष, संस्कृत शिक्षण, आर. लाल. बुक डिपो, 2010
5. पाण्डेय, डा. रामशकल, विनोद पुस्तक मंदिर, 2005

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. स्वतन्त्र भारत के विभिन्न शिक्षा आयोगों में संस्कृत भाषा शिक्षण के स्थिति को स्पष्ट कीजिए|
2. संस्कृत आयोग तथा शिक्षा आयोग के विभिन्न योजनाओं में अंतर स्पष्ट कीजिए|
3. नई शिक्षा नीति में संस्कृत के स्थान का विस्तृत वर्णन कीजिए|
4. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या प्रारूप 2000 एवं 2005 में संस्कृत विषय तथा अन्य विषय का क्या महत्व प्रस्तुत किया गया है?
5. वर्तमान युग में संस्कृत अध्ययन-अध्यापन में किन किन नवाचार का उपयोग किया जाता है? विस्तृत रूप वर्णन कीजिए ?
6. राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान का परिचय देते हुए उसके संस्कृत के प्रचार एवं प्रसार में योगदान का वर्णन कीजिए?

इकाई 4 - संस्कृत भाषा शिक्षण के कुछ अनछुए पहलू

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता
4.3.1 कथा साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता
4.3.2 नाट्य साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता
4.3.3 काव्य साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता
4.4 सूचना के युग में संस्कृत का भविष्य
4.5 तकनीकी पर आधारित संस्कृत शिक्षण संबंधी वर्तमान कार्यक्रम
4.6 सूचना एवं तकनीकी के उपयोग से संस्कृत साहित्य शिक्षण को जीवंत बनाना
4.6.1 काव्य साहित्य का शिक्षण
4.6.2 नाट्य साहित्य का शिक्षण
4.6.3 कथा साहित्य का शिक्षण
4.7 सारांश
4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
4.9 संदर्भ एवं सहयोगी ग्रंथ
4.10 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

ज्ञान की प्रत्येक शाखा के विविध पक्ष होते हैं एवं ज्ञान की प्रत्येक शाखा गतिशील भी होती है। समय के साथ इनके स्वरुप में परिवर्तन होते रहता है अर्थात जैसे-जैसे समय व्यतीत होते जाता है, वैसे-वैसे ज्ञान की शाखा के विविध पक्षों, जो की ज्ञान की शाखा के स्वरुप का निर्माण करते हैं, में भी परिवर्तन होते जाता है। कुछ पुराने पक्ष अप्रासंगिक हो जाते हैं तो कुछ नए पक्ष शामिल हो जाते हैं। शिक्षण-अधिगम प्रणाली में शामिल व्यक्तियों को ज्ञान की प्रत्येक शाखा में शामिल हुए इन नवीन तथ्यों एवं अप्रासंगिक हुए प्राचीन तथ्यों से स्वयं को अद्यतन करना पड़ता है। लेकिन सामान्यत: ऐसा होता नहीं है। वे अपरिहार्य कारणों से स्वयं को अद्यतन नहीं कर पाते हैं। जिसके फलस्वरुप ज्ञान की शाखा के अप्रासंगिक हो चुके पक्षों को शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से हटा नहीं पाते हैं एवं ज्ञान की शाखा के रुप में शामिल हुए नवीन पक्षों को

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में शामिल नहीं कर पाते हैं। ऐसे ही नवीन पक्ष, जो कि समय के साथ उभरकर सामने आए हैं और जिन्हें शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में शामिल किया जाना चाहिए उन्हें शामिल नहीं कर पाते हैं, को ज्ञान की शाखा के अनछुए पहलू की संज्ञा दी जाती है। अनछुआ इसलिए क्योंकि विद्वानों द्वारा उसे छुआ नहीं जाता है अर्थात इस पर ध्यान नहीं दिया जाता है। प्रस्तुत इकाई में संस्कृत भाषा के कुछ ऐसे ही अनछुए पहलुओं की चर्चा की गई है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता वर्णन कर सकेंगे;
2. सूचना के युग में संस्कृत के भविष्य की व्याख्या कर सकेंगे;
3. संस्कृत शिक्षा के लिए तकनीकी आधारित वर्तमान शैक्षिक कार्यक्रमों का उल्लेख कर सकेंगे; तथा
4. संस्कृत साहित्य शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु सूचना एवं संचार तकनीकी के उपयोग की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे

4.3 संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता

प्रयोजनमूलकता का स्पष्ट अर्थ उपादेयता या उपयोगिता है। संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण की वर्तमान में क्या उपयोगिता है इस बात की चर्चा इस खंड में की गई है।

साहित्य चाहे किसी भी भाषा का हो उसका समाज से घनिष्ठ संबंध होता है फिर संस्कृत साहित्य में तो भारत की समस्त संस्कृति ही निहित है। धर्म, दर्शन, कला, संगीत, संस्कृति, सामाजिक जीवन, ज्ञान-विज्ञान या यूँ कहें कि मनुष्य के संपूर्ण जीवन शैली का व्यापक चित्रण संस्कृत साहित्य में किया गया है। साहित्य के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य होता है कि वह अपने संस्कृति के इन विविध तत्वों को आने वाली पीढ़ी को किस सीमा तक हस्तांतरित कर पाता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि वह विद्यार्थियों में किस सीमा तक मानवीय मूल्यों एवं संवेदनाओं को प्रत्यारोपित कर पाता है एवं उन्हें भारतीय संस्कृति के विभिन्न तत्वों, यथा - धर्म, दर्शन, कला आदि से कितना परिचित करा पाता है। इस कार्य के लिए कभी कहानी का तो कभी उपन्यास का, कभी कविता का तो कभी नाटक आदि का सहारा लिया जाता है। अर्थात साहित्य शिक्षण के उपरोक्त उद्देश्य की प्राप्ति के लिए साहित्य के विविध रुपों का प्रयोग किया जाता है। अतः, जब हम संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण के प्रयोजनमूलकता की चर्चा करते हैं तब हम उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखकर ही मूल्यांकन करते हैं।

4.3.1 कथा साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता

कथा साहित्य का शिक्षण 'किस्सागोई' अर्थात 'कहानी कथन' विधि से किया जाता था। इसमें शिक्षक अपनी कुशलता से कहानी के विभिन्न कड़ियों को एक साथ जोड़कर इस तरह प्रस्तुत करता है कि विद्यार्थियों के सामने वह चित्रित हो जाता है। ऐसा प्रतीत होने लगता है कि कहानी अभी-अभी तुरंत उनके समक्ष ही घटित हो रही है। इससे विद्यार्थी में रोचकता उत्पन्न होती है एवं अधिगम में उनका सहभाग बढ़ता है। विद्यार्थी स्वयं को कहानी के पात्र के रुप में देखने लगते हैं एवं उसकी चारित्रिक विशेषताओं को स्वयं की चारित्रिक विशेषताओं को रुप में समझने लगता है। इस प्रकार शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों में मानवीय मूल्य एवं संवेदना का विकास किया जाता था।

वर्तमान समय में कथा साहित्य के शिक्षण के लिए सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग किया जाने लगा है। लेकिन इसमें वह जीवंतता नहीं है। यह सिर्फ कथा साहित्य का टंकित रुप है। इसका सिर्फ एक लाभ है कि विद्यार्थी दिन भर में किसी भी समय कथा के उस तकनीकी रुप से अपनी सुविधा के अनुसार कभी भी जुड़ सकता है। लेकिन कहानी कथन का यह तकनीकी रुप या कथा साहित्य शिक्षण का यह तकनीकी रुप मनुष्य में मानवीय मूल्य एवं संवेदना को उत्पन्न करने में अक्षम है। इस प्रकार कहानी शिक्षण या कथा साहित्य शिक्षण का उद्देश्य पूरा नहीं हो पाता है। अतः, यह कहा जा सकता है कि यद्यपि कथा साहित्य शिक्षण की प्रयोजनमूलकता का स्वयंसिद्ध है लेकिन वर्तमान परिवेश में जिस प्रकार से कथा साहित्य का शिक्षण किया जा रहा है इसकी कोई प्रयोजनमुलकता नहीं है।

4.3.2 नाट्य साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता

नाट्य साहित्य संस्कृत साहित्य की एक अद्वितीय विधा है| इससे अल्प समय में किसी भी प्रकार के संदेश को व्यापकता के साथ प्रसारित किया जा सकता है। यह तीव्रता के साथ दर्शकों पर अपना प्रभाव डालता है। अर्थात नाट्य साहित्य का शिक्षण अगर उपयुक्त विधि से किया जाए तो यह पर्याप्त प्रयोजनमूलक है। लेकिन आजकल कथा साहित्य और नाट्य साहित्य दोनों को एक मान कर एक ही विधि से उनका शिक्षण किया जा रहा है। अब यह कैसे संभव है कि दो भिन्न चीजों को एक मानकर एक जैसा व्यवहार उनके साथ किया जाए और उनका प्रभाव भी वही बना रहे जो उन्हें दो भिन्न-भिन्न चीज मानकर भिन्न-भिन्न तरीके से व्यवहार करने पर होगा। कथा साहित्य के कथ्य की गतिशीलता नाट्य साहित्य के कथ्य की गतिशीलता की तुलना में तीव्र होती है। नाट्य साहित्य में पात्र, दृश्य, संवाद, परिस्थिति आदि को एक-दूसरे के पूरक के रुप में एक साथ प्रस्तुत किया जाता है। नाट्य साहित्य का शिक्षण करते समय पहले पात्र परिचय प्रस्तुत किया जाता है। यही पर उनके सामाजिक संबंधों से भी विद्यार्थियों को अवगत कराया जाता है। शिक्षण करते समय छात्र को यह भी बताया जाना चाहिए कि एक नाटक कई दृश्यों में विभाजित होता है और प्रत्येक दृश्य के अनुसार ही कथ्य का सृजन किया जाता है। पात्रों का निर्धारण, संवाद की रचना, सब दृश्य के अनुसार ही किए जाते हैं। शिक्षण करते समय विद्यार्थियों को ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि उनके समक्ष नाटक का मंचन हो रहा है। लेकिन नाट्य साहित्य के शिक्षण में सूचना एवं संचार तकनीकी के प्रयोग द्वारा एवं कथा साहित्य की भाँति ही इसका शिक्षण कर इसकी प्रयोजनमूलकता को समाप्त किया जा रहा है।

4.3.3 काव्य शिक्षण की प्रयोजनमूलकता

काव्य संस्कृत साहित्य की सबसे प्राचीन विधा है एवं इसका शिक्षण सबसे दुष्कर। कविता को विद्यार्थी तभी हृदयंगम कर पाता है जब यह सस्वर हो, उसमें छंदबद्धता एवं लयात्मकता हो। कविता में व्यक्ति के मनोभावों को सुंदर ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। अगर विद्यार्थी उसको पूर्ण रुप से हृदयगंम करते हैं तो उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन होता है। अतीत में कविताओं के माध्यम से कई आंदोलनों में लोगों की भूमिका को सकारात्मक दिशा दी गई है। ऋतुओं के गीत, विभिन्न उत्सवों के गीत इन्हीं कारणों से जनसामान्य के मानस पटल पर अपना गहरा प्रभाव छोड़ पाते हैं। यह मनुष्य में अति तीव्र गति से मनोवेगों को उत्पन्न करता है। नीति शिक्षा एवं मूल्य शिक्षा के लिए इसी कारण से प्राचीन काल में संस्कृत के श्लोकों का सहारा लिया जाता था। इस प्रकार काव्य साहित्य शिक्षण की प्रयोजनमूलकता तो स्पष्ट है। लेकिन वर्तमान परिवेश में इसकी प्रयोजनमूलकता पर संकट मंडरा रहा है। शिक्षण में सूचना एवं संचार तकनीकी को शामिल कर इस संकट को और बढ़ा दिया गया है। यह बात अब स्पष्ट हो गई है कि सूचना एवं संचार तकनीकी के प्रयोग द्वारा इसके शिक्षण की प्रयोजनमूलकता को बचाया नहीं जा सकता है। अतः, काव्य साहित्य के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि इसका शिक्षण उपयुक्त विधि से किया जाए।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं की प्रयोजनमूलकता है और रहेगी। हाँ यह अवश्य है कि शिक्षण विधियों में आए बदलाव के कारण वर्तमान समय में उनकी प्रयोजनमूलकता लगभग समाप्त हो गई है। एक ओर जहाँ पाठ्यक्रम में वैकल्पिक स्थान प्राप्त होने के कारण इसका अध्ययन-अध्यापन भी भली-भाँति नहीं किया जा रहा है वहीं दूसरी ओर उपयुक्त शिक्षण विधियों का प्रयोग भी नहीं किया जा रहा है। यदि इन समस्याओं का समाधान कर दिया जाए तो संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता स्वयं सिद्ध है।

अभ्यास प्रश्न

1. प्रयोजनमूलकता का स्पष्ट अर्थ है________ या________।
2. कथा साहित्य का शिक्षण________ या ________ विधि से किया जाता था।
3. नाट्य साहित्य के कथ्य की गतिशीलता कथा साहित्य के कथ्य की गतिशीलता की तुलना में ________ होती है।
4. एक नाटक कई ________ में विभाजित होता है।
5. संस्कृत साहित्य की सबसे प्राचीन विधा________ है।
6. साहित्य शिक्षण का मुख्य उद्देश्य क्या है?
7. नाट्य साहित्य कथा साहित्य में दो अंतर लिखें।
8. काव्य को हृदयंगम करने के लिए उनमें किन तत्वों का होना आवश्यक है?

4.4 सूचना के युग में संस्कृत का भविष्य

भविष्य से आशय आनेवाले समय से होता है। भाषा के भविष्य की यदि बात की जाए तो इसका अर्थ आनेवाले समय में किसी भाषा की प्रस्थिति से होता है। भाषा की प्रस्थिति से आशय उस भाषा के विकास, उसके प्रयोक्ताओं की संख्या, उसमें उपलब्ध रोजगार के अवसर, उस भाषा विषेष के प्रति व्यक्ति के रुझान आदि से होता है। अतः, दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि भाषा के भविष्य से आशय आनेवाले समय के संदर्भ में कुछ प्रश्नों यथा - कोई भी भाषा आने वाले समय में कितनी पुष्पित-पल्लवित होगी? इसके प्रयोक्ता कितने होंगे? इसके अध्ययन-अध्यापन की क्या प्रस्थिति होगी? रोजगार के अवसर की क्या स्थिति होगी? आदि के उत्तर से होता है। जब संस्कृत के भविष्य की बात की जाती है तो इसका भी आशय इन्हीं प्रश्नों के उत्तरों से होता है। बस अंतर सिर्फ इतना है कि इन्हें संस्कृत भाषा के संदर्भ में देखा जाता है। यह बात सर्वविदित है कि वर्तमान युग सूचना एवं संचार तकनीकी का है। अब सूचना एवं संचार तकनीकी के इस युग में संस्कृत भाषा कितनी पुष्पित-पल्लवित होगी? इसके कितने प्रयोक्ता होंगे? इसके अध्ययन-अध्यापन की क्या प्रकृति होगी? रोजगार के क्या अवसर होंगे? आदि तत्वों की चर्चा ही संस्कृत भाषा का भविष्य निर्धारित करेगी।

संस्कृत एक अति प्राचीन एवं उन्नत भाषा है। इसके साथ ही यह एक वैज्ञानिक भाषा भी है। वैश्वीकरण का प्रभाव सभी क्षेत्रों पर पड़ा है। भाषा का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा है। ऊपर से बाज़ारवाद ने और भी नकारात्मक प्रभाव डाला है। वैश्वीकरण एवं बाज़ारवाद के मिश्रित प्रभाव के कारण भाषाओं के मरने का क्रम सा शुरु हो गया है। यूनेस्को द्वारा वर्ष 2009 में प्रकाशित एक प्रतिवेदन के अनुसार भारत की 9 भाषाएँ मर चुकी हैं और 196 भाषाएँ मृतप्राय हो चुकी हैं अर्थात मरणासन्न हैं। अमेरिका की 53 भाषाएँ मर चुकी हैं और 71 भाषाएँ मरणासन्न हैं। इस प्रकार विश्व की लगभग 7000 भाषाओं पर खतरा मंडरा रहा है।

जहाँ तक संस्कृत भाषा का प्रश्न है यह एक अति प्राचीन एवं उन्नत भाषा है। यह एक वैज्ञानिक भाषा है। प्राचीन काल में इस भाषा का बहुत महत्व था और यह लोक भाषा थी। कालांतर में विदेशी आक्रांताओं के प्रभाव में आकर इसका महत्व कम हुआ और बीसवीं सदी के प्रारंभ तक इसका प्रचलन लगभग न के बराबर हो गया। यह कहा जाने लगा था कि यह भाषा लगभग मृतप्राय हो चुकी है। लेकिन लोगों में थोड़ी सी चेतना इस भाषा को लेकर बाकी थी। अतः, एक बार फिर इस भाषा के उत्थान के लिए कार्य शुरु कर दिए गए। इसका परिणाम सकारात्मक हुआ और आज संस्कृत भाषा के प्रयोक्ताओं की संख्या बढ़ी है। प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक भाषा के रुप में इसका प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। सूचना और प्रौद्योगिकी के विस्फोट के कारण जहाँ अन्य भाषाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है वहीं संस्कृत भाषा को यह सकारात्मक रुप से प्रभावित कर रही है। ऐसा इस भाषा की वैज्ञानिकता के कारण हो रहा है। वर्तमान में विश्व के विभिन्न देशों में संस्कृत भाषा का अध्ययन-अध्यापन किया जा रहा है। नासा में प्रशिक्षु वैज्ञानिकों को संस्कृत पढ़ाया जा रहा है। विश्व के समस्त कंप्यूटर वैज्ञानिकों ने इस बात को समवेत स्वर में स्वीकार किया है कि कंप्यूटर एल्गोरिदम के लिए संस्कृत सर्वश्रेष्ठ भाषा है और आनेवाले समय में कंप्यूटर के क्षेत्र

में सिर्फ इसी भाषा का प्रयोग किया जाएगा। विश्व के सर्वश्रेष्ठ एल्गोरिदम का निर्माण संस्कृत भाषा में ही हुआ है। इस भाषा के जानकारों के लिए रोजगार के अवसरों में भी वृद्धि हुई है। विदेशों में संस्कृत अध्यापक के रुप में रोजगार के अवसर सृजित हुए हैं। इस भाषा का साहित्य भंडार विपुल है। इसमें समस्त भारतीय संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, साहित्य एवं दर्शन की झलक मिलती है। भारतीय संस्कृति को जानने के लिए इस भाषा के साहित्य को जानना अति आवश्यक है। अतः, इस भाषा से संबंधित अनुवाद कार्य के क्षेत्र में भी रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है। कंप्यूटर के क्षेत्र में भी आने वाले समय में इस भाषा के जानकारों के लिए रोजगार के अवसर में वृद्धि होगी। भारतीय संस्कृति के प्रति लोगों के मन में एक बार फिर से रुझान जग रहा है। लोगों में संस्कृत भाषा सीखने की इच्छा जागृत हो रही है। इस प्रकार इस भाषा की सामाजिक प्रस्थिति में भी उन्नति हो रही है। अतः, इस भाषा का भविष्य बड़ा उज्जवल प्रतीत हो रहा है और अगर इस दिशा में सरकार द्वारा थोड़ा और प्रयास किए जाएं तो यह भाषा फिर से एक बार सारी भाषाओं की सिरमौर हो जाएगी।

अभ्यास प्रश्न

9. भाषा के भविष्य का क्या अर्थ है?
10. यूनेस्को के द्वारा वर्ष 2009 में प्रकाशित प्रतिवेदन के अनुसार अमेरिका की कितनी भाषाएँ मर चुकी हैं।
11. यूनेस्को के द्वारा वर्ष 2002 में प्रकाशित प्रतिवेदन के अनुसार भारत की कितनी भाषाएँ मर चुकी हैं।
12. संस्कृत एक वैज्ञानिक भाषा है (सत्य/असत्य)।
13. विदेशी आक्रांताओं के प्रभाव में आकर संस्कृत भाषा और विकसित हो गई थी । (सत्य/असत्य)।
14. नासा में प्रशिक्षु वैज्ञानिकों को संस्कृत पढ़ाया जाता है (सत्य/असत्य)।
15. संचार प्रौद्योगिकी का संस्कृत भाषा पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है (सत्य/ असत्य)।
16. कंप्यूटर एल्गोरिदम के लिए संस्कृत सर्वश्रेष्ठ भाषा है (सत्य/असत्य)।

4.5 तकनीकी पर आधारित संस्कृत शिक्षण संबंधी वर्तमान कार्यक्रम

वर्तमान में संस्कृत शिक्षण संबंधी तकनीकी आधारित प्रमुख कार्यक्रम निम्नलिखित हैं:

i. आईआईटी मद्रास द्वारा अक्टूबर1997 में 'आचार्य' नाम का एक वेबपेज बनाया गया है जो स्वाध्याय कर संस्कृत सीखने में सहायता करता है। इस वेबपेज को आप इस www.acharya.gen.in:8080/sanskrit/lessons/php वेबसाइट से सर्फ कर सकते हैं।

ii. www.learnsanskrit.org इसी प्रकार का एक दूसरा वेबसाइट है।

iii. www.learnsanskritonline.com एक वेबसाइट है जो विद्यार्थियों को स्वगति से ऑनलाइन संस्कृत सीखने का अवसर प्रदान करता है।

iv. 'चिन्मय इंटरनेशनल फाउंडेशन' ने 'ईजी संस्कृत कोर्स' नामक एक कार्यक्रम की शुरुआत अपनी वेबसाइट www.chinfo.org पर की है। यह संस्कृत विषय के लिए एक ऑनलाइन पाठ्यक्रम है। इस वेबसाइट पर स्वअध्ययन हेतु 'ईजी संस्कृत सेल्फ स्टडी किट' भी उपलब्ध है जिसे आप अधोहारित (डाउनलोड) करके भी पढ़ सकते है।

v. राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान द्वारा संस्कृत शिक्षण हेतु कुछ दृश्य-श्रव्य व्याख्यान युट्युब पर अधिहारित (अपलोड) कर रखा गया है जिनके माध्यम से संस्कृत भाषा अध्ययन के इच्छुक विद्यार्थी संस्कृत सीख सकते हैं।

vi. 6. श्री चंद्रशेखरेंद्र सरस्वती विश्व महाविद्यालय के संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति विभाग द्वारा ऑनलाइन संस्कृत पाठ्यक्रम विकसित किए गए हैं जो निःशुल्क है। इसे कोई भी व्यक्ति विश्वविद्यालय की वेबसाइट www.kaanchiuniv.ac.in पर जाकर रजिस्ट्रेशन करके पढ़ सकता है।

vii. श्री चित्रापुर मठ द्वारा संस्कृत शिक्षण हेतु ऑनलाइन पाठ्यक्रम संचालित किया जाता है। मठ ने इन पाठ्यक्रम के अध्ययन की सुविधा अपने वेबसाइट पर दे रखी है। इन पाठ्यक्रमों को आप उनके वेबसाइट www.chitrapurmath.net/sanskrit/sanskrit.asp पर पढ़ सकते हैं।

viii. ओपेन पाठशाला - यह एक ऑनलाइन मंच है। जहाँ आप संस्कृत के साथ-साथ अन्य भारतीय भाषाओं को भी सीख सकते हैं। इसके लिए वेबसाइट है - https://openpathshala.com

ix. संस्कृत प्राइमर - यह एक एण्ड्रॉयड आधारित मोबाइल एप्लीकेशन है जो गूगल प्ले स्टोर में उपलब्ध है। इस ऐप के द्वारा विद्यार्थी संस्कृत भाषा का जब चाहे तब अपनी गति से अध्ययन कर सकता है।

x. www.101languages.net/sanskrit एक वेबसाइट है जो संस्कृत सीखने के लिए निशुल्क संसाधन एवं सूचना प्रदान करती है।

xi. सी डैक पुणे ने संस्कृत शिक्षण के लिए पैन सी-डैक इ-लर्निंग सॉल्युशन नाम से एक प्रोजेक्ट चला रहा है। यहाँ यह संस्कृत की शिक्षा निःशुल्क प्रदान करता है। यह ऑनलाइन है एवं इसका वेबसाइट है https://cdas.in/index.aspxi/d=esiksh.ak.

xii. www.sanskritfromhome.in एक ऐसा ही अन्य वेबसाइट है। इस वेबसाइट पर अधोहारित (डाउनलोड) करने के लिए भी सामग्री उपलब्ध रहती है।

उपरोक्त वेबसाइट्स तकनीकी पर आधारित संस्कृत शिक्षण संबंधित कुछ महत्वपूर्ण कार्यक्रम के संचालन से संबंधित है। इसके इतर भी कुछ अन्य वेबसाइट्स हैं जो ऑनलाइन संस्कृत शिक्षण प्रदान करते हैं। इसके अलावा रेडियो पर प्रसारित होने वाले समाचार को भी संस्कृत शिक्षण के लिए प्रयुक्त किया जा

सकता है। समाचार का प्रसारण उच्चारण शिक्षण एवं श्रवण कौशल के शिक्षण के लिए महत्वपूर्ण संसाधन हो सकता है।

अभ्यास प्रश्न

17. मिलान करें।

स्तंभ 'अ'	स्तंभ 'ब'
(अ) आचार्य	(1) चिन्मय इंटरनेशनल फाउंडेशन
(ब) संस्कृत सेल्फ स्टडी किट	(2) आईआईटी मद्रास
(स) संस्कृत प्राइमर	(3) पैन सी डैक इ-लर्निंग सॉल्युशन प्रोजेक्ट
(द) सी-डैक पूणे	(4) एंड्रॉयड आधारित मोबाइल ऐप

18. ऑनलाइन संस्कृत शिक्षण हेतु इस पाठ्य पुस्तक में दिए गए वेबसाइट्स को सूचीबद्ध करें।

4.6 सूचना एवं तकनीकी के उपयोग से संस्कृत साहित्य शिक्षण को जीवंत बनाना

अति प्राचीन भाषा होने के कारण संस्कृत भाषा में साहित्य का विशाल भंडार देखने को मिलता है। संस्कृत साहित्य के भंडार में साहित्य के विविध रुपों की झलक देखने को मिलती है। संस्कृत साहित्य के मुख्य विधाओं में काव्य, नाट्य एवं कथा साहित्य को शामिल किया जाता है और विद्यालय और महाविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रमों में संस्कृत साहित्य की इन्हीं विधाओं के अध्ययन-अध्यापन को शामिल किया जाता है।

संस्कृत साहित्य की इन विधाओं का शिक्षण पारंपरिक शिक्षण विधियों द्वारा भी किया जा सकता है लेकिन यदि इस में सूचना एवं संचार तकनीकी को शामिल कर दिया जाए तो साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण को और भी जीवंत बनाया जा सकता है। आइए देखते हैं कि कैसे सूचना एवं संचार तकनीकी के साधनों का प्रयोग कर संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं को कैसे जीवंत बनाया जा सकता है।

4.6.1 काव्य साहित्य का शिक्षण

काव्य शिक्षण में कवि का परिचय बहुत महत्वपूर्ण होता है। कवि के परिचय को सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। कवि के चित्र, उसके जीवन परिस्थितियों से संबंधित उपलब्ध सामग्री को पावर प्वायंट के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है। काव्य के रचयिता पर आधारित कोई वृत्त चित्र दिखाया जा सकता है। इससे विद्यार्थियों को कविता एवं कवि के भावों को समझने में बहुत सहायता मिलती है। काव्य के वाचन को भी प्रस्तुत किया जा सकता है। इससे काव्य से

विद्यार्थी का एक रिश्ता कायम हो जाता है और उनके मानस पटल पर इसका गहरा एवं स्थाई प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि फिल्मों के गाने विद्यार्थियों को लंबे समय तक याद रहते हैं। काव्य में प्रयुक्त शब्दों को स्पष्ट रुप से समझने के लिए ऑनलाइन शब्दकोश एवं थिसारस का प्रयोग किया जा सकता है। काव्य पर आधारित यदि कोई वृत्तचित्र हो तो उसे भी प्रदर्शित किया जा सकता है। इस प्रकार सूचना एवं संचार तकनीकी के प्रयोग कर शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है एवं इससे शिक्षण-अधिगम कार्य में विद्यार्थियों की सहभागिता बढ़ जाती है और शिक्षण-अधिगम कार्य जीवंत हो उठता है।

4.6.2 नाट्य साहित्य का शिक्षण

साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण में कुछ समानता होती है जैसे- रचनाकार का परिचय। अब चाहे काव्य साहित्य हो या नाट्य साहित्य या फिर अन्य कोई विधा रचनाकार का परिचय प्रदान करने के लिए सूचना एवं संचार संबंधी उपरोक्त तकनीकी का प्रयोग किया जा सकता है। नाटक के मंचन को टेलीविजन या इंटरनेट के माध्यम से दिखाया जा सकता है। नाटक के रिहर्सल के रिकॉर्डिंग को कम्प्युटर या सी० डी० प्लेयर के माध्यम से विद्यार्थियों को दिखाया जा सकता है। नाटक के रेडियो रुपांतरण को भी विद्यार्थियों को सुनाया जा सकता है। इसी प्रकार नाट्य साहित्य में प्रयुक्त कठिन शब्दों एवं भाषाई विशेषताओं के लिए ऑनलाइन शब्दकोश एवं थिसारस का प्रयोग किया जा सकता है। नाटक के मंचन को दिखाया जा सकता है। एक ही नाटक के अलग-अलग निर्देशकों द्वारा निर्देशित मंचन को भी दिखाया जा सकता है। इससे विद्यार्थी नाट्य साहित्य के शिल्पगत विशेषताओं का साक्षत्कार कर सकता है। रंगकर्म की सैद्धांतिक जानकारी को जब विद्यार्थी प्रत्यक्ष रुप से अनुभूत करता है तो विद्यार्थी स्वयं को उससे जुड़ा हुआ मानने लगता है और नाट्य साहित्य का शिक्षण अधिक जीवंत हो उठता है।

4.6.3 कथा साहित्य का शिक्षण

काव्य एवं नाट्य साहित्य की भाँति कथा साहित्य के शिक्षण में भी कथाकार का परिचय महत्वपूर्ण होता है। कथाकार के जीवन परिचय एवं उससे संबंधित अन्य सामग्रियों को पावर प्वायंट की सहायता से विद्यार्थियों को दिखाया जा सकता है। शब्द एवं भाषागत विशेषताओं को समझने के लिए ऑनलाइन शब्दकोष तथा थिसारस का प्रयोग किया जाता है। संस्कृत कथा साहित्य पर आधारित फिल्मों के कुछ दृश्य को या पूरी फिल्म को कथा साहित्य के शिक्षण के समय प्रदर्शित किया जा सकता है। यथा – शूद्रक द्वारा रचित 'मृच्छकटिकम्' पर हिंदी भाषा में उत्सव नामक फिल्म का निर्माण किया गया है। मृच्छकटिकम् पढ़ाते समय इस फिल्म को प्रदर्शित किया जा सकता है। इन सब तकनीकों का प्रयोग करके शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थी की सहभागिता को बढ़ाया जाता है। विद्यार्थी अधिक सक्रिय होकर कथा साहित्य का शिक्षण-अधिगम करते हैं। परिणामस्वरुप जीवंतता में वृद्धि हो जाती है।

सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से साहित्य की एक विधा का दूसरी विधा में रुपांतरण को भी समझाया जा सकता है। जैसे किसी कथा साहित्य के रेडियो नाट्य रुपांतरण को सुनाया जा सकता है। इन सबके साथ इ-कंटेंट का प्रयोग किया जा सकता है। हर एक शीर्षक पर इ-कंटेंट उपलब्ध कराकर भी इसे जीवंत बनाया जा सकता है।

सूचना एवं संचार तकनीकी संबंधी उपरोक्त संसाधनों के माध्यम से संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण को जीवंत तो बनाया जा सकता है लेकिन सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग करते समय हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इसका प्रयोग पूरक या सहायक सामग्री के रुप में हो, मुख्य विधि के रुप में नहीं। अर्थात इनका प्रयोग विश्व की विभिन्न विधाओं का पारंपरिक शिक्षण विधि से शिक्षण करने के बाद या उसके साथ किया जाना चाहिए। अकेले इसका प्रयोग लाभदायक होने के बजाए हानिकारक हो सकता है। ऐसा भी हो सकता है कि विद्यार्थी का ध्यान मुख्य विषय वस्तु पर न केंद्रित होकर सूचना एवं संचार तकनीकी संबंधी संसाधनों पर ही केंद्रित रह जाए। यदि ऐसा होगा तो शिक्षण के उद्देश्य प्राप्त नहीं हो पाएँगे।

अभ्यास प्रश्न

19. विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर पर पढ़ाए जाने वाली संस्कृत साहित्य की मुख्य विधाएँ कौन-कौन सी हैं।
20. पावर प्वाइंट का प्रयोग काव्य शिक्षण में कैसे किया जा सकता है?
21. नाट्य साहित्य शिक्षण में सूचना एवं संचार संबंधी किन-किन तकनीकों का प्रयोग किया जा सकता है।

4.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई का शीर्षक है 'संस्कृत शिक्षण के कुछ अनछुए पहलू'। इकाई के आरंभ में विद्यार्थियों को अनछुआ शब्द के अर्थ से अवगत कराया गया है तथा यह बताया गया है कि संस्कृत शिक्षण के संबंध में अनछुआ से क्या अर्थ है। इसके पश्चता बारी-बारी से संस्कृत शिक्षण के प्रमुख अंछूए पहलुओं की चर्चा की गई है। सबसे पहले संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता की चर्चा की गई है। अर्थात विद्यार्थियों को इस बात से अवगत कराया गया है कि कि संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण की क्या उपयोगिता है ताकि संस्कृत शिक्षण के कार्य में लगे हुए व्यक्ति अपने विद्यार्थियों को संस्कृत के अध्ययन एवं अध्यापन के लिए अभिप्रेरित कर सकें। इसके पश्चात सूचना एवं संचार तकनीकी के इस युग में जहाँ कि आंग्ल भाषा का अतिशय प्रचलन है, संस्कृत भाषा के भविष्य की चर्चा की गई है। इस चर्चा के द्वारा विद्यार्थियों के समक्ष इस बात को प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया

गया है कि भले ही आज समस्त विश्व में आंग्ल भाषा का बोल बाला है और इसके प्रभाव में आकर अन्य भाषाएँ मृतप्राय हो रही हैं लेकिन आने वाले समय में संस्कृत ही विश्व की प्रमुख भाषा होगी। इससे संस्कृत शिक्षण-अधिगम के कार्य में लगे हुए व्यक्ति प्रोत्साहित होंगे और वे अन्य लोगों को भी संस्कृत पढ़ने एवं पढ़ाने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। पारंपरिक पाठशालाओं के अतिरिक्त संस्कृत शिक्षण के लिए सूचना एवं संचार तकनीकी पर आधारित कौन-कौन से कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं इस बात पर भी रौशनी डाली गई है। विभिन्न ऑनलाइन पाठ्यक्रमों चाहे वो सशुल्क हो या निःशुल्क का उल्लेख इस इकाई में किया गया है । इसका उपयोग प्रशिक्षु शिक्षक अपने ज्ञान वर्द्धन के लिए कर सकते हैं तथा विद्यार्थियों को भी इसका लाभ उठाने के लिए अभिप्रेरित कर सकते हैं। अंत में सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग संस्कृत साहित्य के शिक्षकों को जीवंत बनाने के लिए किस प्रकार किया जा सकता है इस बात पर भी चर्चा की गई है। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में इसके शीर्षक के अनुरुप संस्कृत शिक्षण के महत्वपूर्ण अनछुए पहलुओं को समाविष्ट किया गया है जो निश्चय ही प्रशिक्षु संस्कृत शिक्षकों के लिए उपयोगी होगा।

4.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. उपादेयता या उपयोगिता
2. किस्सागोई या कहानी कथन
3. तीव्र
4. दृश्यों में
5. काव्य
6. साहित्य के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य होता है कि वह अपने संस्कृति के विभिन्न तत्वों को आने वाली पीढ़ी को हस्तांतरित करें। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि साहित्य शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों एवं संवेदनाओं को विकसित करना होता है एवं उन्हें भारतीय संस्कृति के विभिन्न तत्वों, यथा - धर्म, दर्शन, कला आदि से परिचित कराना होता है।
7. नाट्य साहित्य एवं कथा साहित्य में निम्नलिखित दो अंतर है:
    a. नाट्य साहित्य के कथ्य की गतिशीलता कथा साहित्य के कथ्य की गतिशीलता की तुलना में तीव्र होती है।
    b. नाट्य साहित्य कई दृश्यों में विभाजित होता है जबकी कथा साहित्य के साथ ऐसी कोई बात नहीं है।
8. काव्य को हृदयंगम करने के लिए उसमें स्वरबद्धता, लयात्मकता, छंदबद्धता होनी चाहिए।
9. भाषा के भविष्य का अर्थ कुछ प्रश्नों यथा - कोई भी भाषा आने वाले समय में कितनी पुष्पित-पल्लवित होगी? इसके प्रयोक्ता कितने होंगे? इसके अध्ययन-अध्यापन की क्या प्रस्थिति होगी? आदि के उत्तर से होता है।

10. 53
11. 9
12. सत्य
13. असत्य
14. सत्य
15. असत्य
16. सत्य
17. (अ) – (2)
    (ब) – (1)
    (स) – (4)
    (द) - (3)
18. www.acharya.gen.in:8080/sanskrit/lessons/php

    www.learnsanskrit.org

    www.learnsanskritonline.com

    www.chinfo.org

    www.kaanchiuniv.ac.in

    www.chitrapurmath.net/sanskrit/sanskrit.asp

    https://openpathshala.com

    www.101languages.net/sanskrit

    https://cdas.in/index.aspxi/d=esiksh.ak.

    www.sanskritfromhome.in
19. काव्य साहित्य, नाट्य साहित्य एवं कथा साहित्य
20. कवि के चित्र, उसके जीवन परिस्थितियों से संबंधित उपलब्ध सामग्री को पावर पॉइंट के माध्यम से प्रस्तुत किया जा सकता है।
21. सिनेमा, पावर प्वाइंट, नाटक का सजीव मंचन, रेडियो, इंटरनेट आदि।

4.9 संदर्भ ग्रंथ सूची एवं सहयोगी ग्रंथ

1. झा, उदयशंकर. संस्कृत शिक्षण. () सुरभारती प्रकाशन, चौखम्बा, वाराणसी।
2. दुबे द्विवेदी एवं मिश्र. () संस्कृत शिक्षण के नये आयाम. राधा प्रकाशन मन्दिर, आगरा।
3. पाण्डेय, रामशकल. (2008). संस्कृत शिक्षण. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
4. मित्तल, संतोष. संस्कृत शिक्षण. () आर. लालबुक डिपो, मेरठ।
5. शर्मा, आर. ए. (2008). शिक्षा के तकनीकी आधार. आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ।
6. सफाया, रघुनाथ. () संस्कृत शिक्षण. हरियाणा साहित्य अकादमी: पंचकुला, हरियाणा।
7. संस्कृत शिक्षक संदर्शिका. (2012). राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।
8. सिंह, सुदेश एवं सक्सेना, वंदना (2005). शैक्षिक तकनीकी के मूलधार,साहित्य प्रकाशन, आगरा।
9. www.acharya.gen.in:8080/sanskrit/lessons/php
10. www.learnsanskrit.org
11. www.learnsanskritonline.com
12. www.chinfo.org
13. www.kaanchiuniv.ac.in
14. www.chitrapurmath.net/sanskrit/sanskrit.asp
15. https://openpathshala.com
16. www.101languages.net/sanskrit
17. https://cdas.in/index.aspxi/d=esiksh.ak.
18. www.sanskritfromhome.in

4.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. संस्कृत साहित्य के विभिन्न विधाओं के शिक्षण की प्रयोजनमूलकता पर निबंध लिखें।
2. सूचना एवं संचार तकनीकी के रुप में संस्कृत भाषा के भविष्य की चर्चा करें।
3. संस्कृत शिक्षण के लिए इस पाठ्य पुस्तक में उल्लिखित तकनीकी आधारित कार्यक्रमों के अतिरिक्त कम से कम 10 अन्य कार्यक्रमों का उल्लेख करें।
4. काव्य साहित्य के शिक्षण के लिए सूचना एवं संचार तकनीकी पर आधारित एक पाठ योजना बनाएँ।
5. नाट्य साहित्य के शिक्षण के लिए सूचना एवं संचार तकनीकी पर आधारित एक पाठ योजना बनाएँ।

6. क्या सूचना एवं संचार तकनीकी का प्रयोग कर संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं के शिक्षण को जीवंत बनाया जा सकता है? यदि हाँ तो अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दें।
7. संस्कृत भाषा के विद्वानों के लिए सृजित हो रहे रोजगार के नवीन अवसरों एवं निकट भविष्य में सृजित होनेवाले रोज्गार के अवसरों का उल्लेख करें।
8. नाट्य साहित्य का शिक्षण करते समय एक ही एक ही नाटक के विभिन्न निर्दशकों द्वारा निर्देशित रुप को दिखाने, नाटक के रिहर्सल की रिकॉर्डिंग को दिखाने एवं नाटक के सजीव मंचन को विद्यार्थियों को दिखाने के क्या लाभ हैं।
9. कथा साहित्य किस प्रकार नाट्य साहित्य से भिन्न हैं।
10. यदि आपको संस्कृत शिक्षण संबंधी कोई एक कार्यक्रम ऑनलाइन बनाना हो तो आप किस प्रकार बनाएँगे। अपनी योजना का विस्तृत वर्णन करें।

इकाई 5 - पाठ्यक्रम एवं संस्कृत भाषा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का स्थान
5.4 पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान के संबंध में संस्कृत आयोग के विचार
5.5 त्रिभाषा सूत्र एवं संस्कृत
5.6 संस्कृत पाठशालाओं में संस्कृत का स्थान
5.7 विद्यालय स्तर पर संस्कृत पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तक
5.8 सारांश
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची एवं सहयोगी ग्रंथ
5.11 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

खंड 1 के विभिन्न इकाइयों में आपने संस्कृत भाषा एवं संस्कृत शिक्षण के विभिन्न पक्षों की चर्चा की। प्रस्तुत इकाई में हम विद्यालयी शिक्षा के लिए विकसित पाठ्यक्रमों में संस्कृत भाषा के स्थान की चर्चा करेंगे। पाठ्यक्रम शिक्षण प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है। यह वह राजमार्ग है जिस पर चल कर शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों शैक्षिक उद्देश्य रुपी मंजिल को प्राप्त करते हैं। क्या पढ़ाना है, कब पढ़ाना है, कितना पढ़ना है, किसे पढ़ना है आदि प्रश्नों के उत्तर पाठ्यक्रम के माध्यम से ही शिक्षण व्यवसाय से जुड़े व्यक्तियों को प्राप्त होता है। अर्थात पाठ्यक्रम में विशेष विद्यालयी स्तर की शिक्षा का पूरा लेखा-जोखा रहता है। अतः, विद्यालयी शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर पाठ्यक्रम में प्रत्येक विषय का अपना एक निश्चित स्थान होता है। संस्कृत विषय का भी अपना एक निश्चित स्थान है। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के प्रभावपूर्ण संपादन के लिए शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों को उस स्थान को आवश्यक रुप से समझना होता है। प्रस्तुत इकाई की रचना का उद्देश्य यही है कि संस्कृत शिक्षण के कार्य में लगे हुए शिक्षकों, अधिगम के कार्य में लगे हुए विद्यार्थियों एवं प्रशिक्षु संस्कृत शिक्षकों को वर्तमान पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का क्या स्थान है एवं क्या स्थान होना चाहिए इस तथ्य की जानकारी हो जाए। इसके साथ ही उन्हें इस बात की भी जानकारी हो जए कि विभिन्न शिक्षा नीतियों एवं आयोगों में पाठ्यक्रम में संस्कृत विषय के स्थान के संबंध में क्या कहा गया है। सरकार द्वारा क्या प्रयास किए गए हैं और क्या प्रयास किए जा रहे हैं इससे भी

उन्हें अवगत कराया जा सके। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत इकाई की रचना की गई है। प्रस्तुत इकाई संस्कृत भाषा शिक्षण एवं अधिगम के कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के लिए अति लाभदायक सिद्ध होगी।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. वर्तमान पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को क्या स्थान प्राप्त है इस बात की चर्चा कर सकेंगे।
2. पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को क्या स्थान प्राप्त होना चाहिए इस बात पर परिचर्चा कर सकेंगे।
3. त्रिभाषा सूत्र का वर्णन कर सकेंगे।
4. त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत के स्थान का वर्णन कर सकेंगे।
5. संस्कृत पाठशालाओं में संस्कृत के स्थान का वर्णन कर सकेंगे।
6. संस्कृत आयोग की चर्चा कर सकेंगे।
7. पाठ्यक्रम में संस्कृत को अनिवार्य स्थान देने के संबंध में की गई सिफारिशों का उल्लेख कर सकेंगे।
8. संस्कृत पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा कर सकेंगे।

5.3 विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का स्थान

यह बात तो सुज्ञात है कि शिक्षण एक त्रिध्रुवीय प्रक्रिया है एवं इसके तीन ध्रुव शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम हैं। यह बात भी उतनी ही महत्वपूर्ण है कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में इसके तीनों ध्रुव (शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यक्रम) की भूमिका बराबर है। किसी एक में भी कमी पूरी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करती है। अतः, पाठ्यक्रम में विभिन्न विषयों का क्या स्थान होगा? किस विषय को शामिल करना है? किस विषय को शामिल नहीं करना है? आदि विचारणीय प्रश्न हैं। संस्कृत भाषा का अपना एक लंबा इतिहास रहा है। एक समय में यह मुख्य भाषा थी। यह लोक व्यवहार की भाषा थी। यह साहित्य की भाषा थी। यह प्रशिक्षण का माध्यम था। कालांतर में देश की राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन आया। इस पर अनेक विदेशी आक्रमण हुए। देश लंबे समय तक मुग़लों एवं अंग्रेजों के अधीन रहा। मुगल एवं ब्रिटिश संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर पूरा प्रभाव पड़ा। संस्कृति का प्रत्येक पक्ष उनसे प्रभावित हुआ। भाषा भी इस प्रभाव से अछूती नहीं रह सकी। अतः, संस्कृत भाषा पर विदेशी आक्रांताओं का बहुत प्रभाव पड़ा। परिणामस्वरुप इसकी प्रस्थिति में परिवर्तन आया। धीरे-धीरे इसका प्रयोग कम हो गया और बीसवीं सदी के अंत तक इसका प्रयोग लगभग न के बराबर हो गया। जनमानस में राष्ट्रीय चेतना के

जागरण के कारण इस भाषा की प्रस्थिति में एक बार पुनः परिवर्तन का दौर प्रारंभ हो चुका है। विभिन्न सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों द्वारा इस भाषा के उत्थान के लिए प्रयास शुरू कर दिए गए हैं। अब वर्तमान परिदृश्य में विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में इसका क्या स्थान है और क्या होना चाहिए यह एक महत्वपूर्ण एवं विचारणीय प्रश्न है। इस संदर्भ में निम्नलिखित 2 धाराएँ प्रचलित हैं:

पहली विचारधारा के समर्थकों का यह मानना है कि इस भाषा का अध्ययन तो आवश्यक नहीं है लेकिन इस भाषा का प्रचार-प्रसार आवश्यक है। ये लोग संस्कृत को पाठ्यक्रम में वैकल्पिक स्थान देना चाहते हैं। इस विचारधारा के समर्थक अपने पक्ष में निम्नलिखित तर्क देते हैं :

i. **मातृभाषा का अध्ययन -** इस विचारधारा के समर्थकों का यह मानना है कि मातृभाषा का अध्ययन संस्कृत भाषा का अध्ययन न करने की क्षति पूर्ति कर सकता है। लेकिन यह सोचना निरर्थक है। जो भाषा मूल भाषा है, जिसने अनेक भाषाओं को जन्म दिया है, उसकी क्षति पूर्ति उससे व्युत्पन्न भाषाओं के अध्ययन द्वारा कदापि नहीं की जा सकती है।

ii. **अनुवाद एक वैकल्पिक व्यवस्था-** इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है कि संस्कृत भाषा के ग्रंथों के आधुनिक भारतीय भाषाओं में अनुवाद को हम संस्कृत भाषा के विकल्प के रूप में देख सकते हैं। लेकिन अनुवाद का अध्ययन किसी भाषा में रचित ग्रंथों के अध्ययन का विकल्प हो सकता है, किसी भाषा के अध्ययन के लिए एक विधि हो सकती है लेकिन किसी भाषा के समग्र अध्ययन का विकल्प कभी भी नहीं हो सकता है।

iii. **मातृभाषा के शब्दों की व्युत्पत्ति का विशद ज्ञान -** इस विचारधारा के समर्थक अपने पक्ष में एक और तर्क देते हैं। उनका यह कहना है कि मातृभाषा के शब्दों की व्युत्पति का विशद ज्ञान संस्कृत के अध्ययन को अनावश्यक बनाता है। यदि पाठ्यक्रम में मातृभाषा के क्षेत्र का विस्तार कर दिया जाए और शब्द विज्ञान को विस्तृत रुप दे दिया जाए तो संस्कृत भाषा के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं होगी। अब यह बात तो सर्वविदित है कि भारत की अनेक भाषाओं की जननी तो संस्कृत ही है। इसके अध्ययन के बिना हम अन्य भाषाओं की व्यापक समझ बना सकते हैं, यह बात असंभव प्रतीत होती है।

iv. **प्राचीन एवं अप्रासंगिक भाषा -** इस विचारधारा के समर्थक यह भी कहते हैं कि संस्कृत एक अति प्राचीन भाषा है और वर्तमान में प्रासंगिक नहीं है। अतः, पाठ्यक्रम में इसे गौण स्थान एवं वैज्ञानिक विषयों को प्रमुख स्थान देना चाहिए। यह प्राचीन भाषा है, इसमें कोई शक नहीं है लेकिन यह प्रासंगिक नहीं है यह कहना इस भाषा के साथ सरासर अन्यायपूर्ण व्यवहार है। इस भाषा का क्षेत्र अति व्यापक है। ज्ञान की कोई भी शाखा इस भाषा के क्षेत्र से बाहर नहीं है फिर भी यह भाषा प्रासंगिक क्यों नहीं है, यह बात समझ में नहीं आती है। यह भाषा प्रासंगिक थी, है और रहेगी। इसकी प्रासंगिकता पर प्रश्न चिन्ह उठाया ही नहीं जा सकता है।

v. **संस्कृत केवल कर्मकांड की भाषा -** इस विचारधारा के समर्थकों ने संस्कृत को केवल कर्मकांड की भाषा कहा है। वे कहते हैं कि इसमें धर्म-कर्म के इतर कुछ है ही नहीं। लेकिन वे लोग

शायद यह भूल गए हैं कि राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र, गणित, ज्योतिष, चिकित्सा शास्त्र, साहित्य, आदि जैसे विषयों पर महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना भी इस भाषा में की गई है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यह विचारधारा कि संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में गौण या वैकल्पिक स्थान दिया जाए , महत्वहीन है।

दूसरी विचारधारा विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को अनिवार्य स्थान देने का पक्षधर है। इस विचारधारा के समर्थकों का यह मानना है कि संस्कृत भाषा को माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए। इस विचारधारा के समर्थक अपने पक्ष में निम्नलिखित तर्क देते हैं:

i. **आधुनिक युग की भाषा-** इस विचार्धारा के समर्थकों का यह कहना है कि संस्कृत अब सिर्फ प्राचीन युग की भाषा नहीं है। अब यह आधुनिक युग की भाषा है। यह सिर्फ भारत की ही नहीं वरन समस्त विश्व की भाषा है। आज विश्व के विभिन्न देशों में इसका अध्ययन-अध्यापन किया जा रहा है।

ii. **ज्ञान के समस्त शाखाओं का अध्ययन-अध्यापन संभव-** संस्कृत सिर्फ धर्म-कर्म की ही भाषा नहीं है। अपितु इसका साहित्य काफी विस्तृत है और इसके विस्तार में ज्ञान की सभी शाखाएँ समाहित है। प्राचीन काल में यह शिक्षा प्रदान करने या यूँ कह ले किए अनुदेशन का माध्यम थी। ज्ञान-विज्ञान की समस्त शाखाओं का शिक्षण इसी भाषा के माध्यम से किया जाता था। अतः, इसे सिर्फ धर्म-कर्म की भाषा कहना अपनी अज्ञानता का परिचय देना से अधिक और कुछ भी नहीं है।

iii. **अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक-** संस्कृत अनेक आधुनिक भारतीय तथा यूरोपीय भाषाओं की जननी है। इस तथ्य को लगभग समस्त विश्व मानता है। अतः, इस विचारधारा के समर्थकों का यह मानना है कि संस्कृत भाषा का ज्ञान इन भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने में सहयोगी है।

iv. **संस्कृति को समझने के लिए आवश्यक-** भारतीय संस्कृति संस्कृत भाषा में निबद्ध विपुल साहित्य भंडार में सुरक्षित है। इसको समझने के लिए इन साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन आवश्यक है और इन साहित्यिक रचनाओं के अध्ययन के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान आवश्यक है। इस आधार पर भी इस विचारधारा के समर्थक संस्कृत को पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान देने की बात करते हैं।

v. **कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के क्षेत्र में निपुणता हासिल करने के लिए-** आने वाला समय कंप्यूटर का है और कंप्यूटर के क्षेत्र के विश्व के सभी विद्वान इस बात पर एकमत हैं कि संस्कृत कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए सर्वश्रेष्ठ भाषा है और आने वाले समय में सिर्फ इसी भाषा का प्रयोग कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए किया जाएगा। इस दृष्टिकोण से भी संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान दिया जाना चाहिए ऐसा इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि वर्तमान परिदृश्य में संस्कृत भाषा की प्रस्थिति में उन्नति हुई है। इसको और उन्नत बनाने के लिए विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयास किए जा रहे हैं। सरकार द्वारा संस्कृत का अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति दी जा रही है। संस्कृत भाषा एवं साहित्य में शोधकार्य को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। पाठ्यक्रम में इसको अनिवार्य स्थान देकर हम इस भाषा के प्रोन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। मानवीय मूल्यों में जो पतन आज दृष्टिगोचर हो रहा है वह वर्तमान शिक्षा प्रणाली का उत्पाद है। वर्तमान शिक्षण प्रणाली में शिक्षा प्रदान करने का माध्यम जिस भाषा को बनाया गया है, वह हमारे सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य, जिनके सम्मिलित रूप से मानवीय मूल्यों का निर्माण होता है, को विद्यार्थियों तक पहुँचाने में अक्षम है। परिणामस्वरुप विद्यार्थी सिर्फ भौतिकवादी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इस भौतिकवादी शिक्षा का कोई मूल्य नहीं है। वर्तमान शिक्षा मनुष्य नहीं मशीन का निर्माण कर रही है। जब तक भौतिकवादी शिक्षा को आध्यात्मिक शिक्षा के साथ संबंधित कर शिक्षण प्रक्रिया संपन्न नहीं की जाएगी तब तक शिक्षा द्वारा मनुष्य का निर्माण नहीं हो सकता है। अतः, पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को अनिवार्य स्थान प्रदान किया जाना चाहिए। इस संबंध में हमारे देश के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद ने संस्कृत विश्व परिषद के वाराणसी अधिवेशन के अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था कि "भौतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा समन्वय आवश्यक है और यह समन्वय संस्कृत के अध्ययन के अतिरिक्त किसी अन्य कार्य से अधिक नहीं हो सकता है"।

संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में वैकल्पिक स्थान देने के संबंध में अन्य विद्वानों ने भी अपने विचार दिए हैं। कुछ महत्वपूर्ण विचारों को नीचे दिया गया है:

- विजय नारायाण चौबे जी ने अपनी पुस्तक संस्कृत शिक्षण विधि में भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन जी के विचारों का उल्लेख करते हुए कहा है कि
  "संस्कृत अनेक भारतीय भाषाओं की जन्मदात्री है। द्रविड़ भाषाओं पर भी इसका प्रभाव है। यह आज भी इस देश के विभिन्न क्षेत्रों के पण्डितों के मध्य एक सामान्य भाषा के रुप में कार्य कर रही है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि यह एक जीवित भाषा नहीं है। संस्कृत साहित्य का अत्यधिक प्रभाव केवल हमारे देश पर ही नहीं अपित्य एशिया के दूसरे भागों पर भी है। संस्कृत ने हमलोगों के मस्तिष्क को इस सीमा तक प्रभावित किया है कि इसका हमें ज्ञान ही नहीं है। एक अर्थ में संस्कृत साहित्य राष्ट्रीय है किन्तु इसका उद्देश्य विश्वव्यापी है। यही कारण था कि इसाने उनलोगों के ध्यान को भी आकर्षित किया जो कि एक संस्कृति विशेष के अनुयायी थे" (संस्कृत शिक्षण विधि, 1985, पृ० – 33)।
- श्री सुब्रह्मण्यदेशिकाचार्य जी के द्वारा इस संदर्भ में दिए गए विचारों को भी विजय नारायण चौबे जी ने अपनी उसी पुस्तक में कुछ इन शब्दों में उल्लिखित किया है –
  "संस्कृत भाषा उत्तर भारत में हिंदी में तथा दक्षिण भारत में द्रविड़ भाषा में व्यवहार में लाए जानेवाले शब्दों की जननी है। द्रविड़ कुल में उत्पन्न आंध्रादि के बहुत से शब्द संस्कृत मिश्रित दिखाई देते हैं। इसलिए संस्कृत का अध्ययन भारत देश में चारों ओर पहले से ही अभ्यास की

जानेवाली मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा के लिए बड़ा ही उपकारी सिद्ध होगा। वह लेशमात्र भी बाधक नहीं होगा । इसलिए पाँचवीं कक्षा से आरंभ कर आठवीं कक्षा तक निश्चित रुप से पढ़नी चाहिए" (संस्कृत शिक्षण विधि, 1985, पृ० – 34)।

- डॉ हरे कृष्ण मेहताब के अनुसार - "मैं इस विचारधारा से पूर्णरुप से सहमत हूँ कि विद्यालयों और महाविद्यालयों में संस्कृत अनिवार्य हो। यह मेरा विश्वास है कि जब तक कि कोई व्यक्ति संस्कृत अच्छि तरह नहीं जान लेता है तब तक वह अपनी क्षेत्रीय भाषा में भी दक्ष नहीं हो सकता है। यह संस्कृत भाषा ही है, जो युगों से सांस्कृतिक दृष्टि से भारत को एकता के सूत्र में बाँधने में सक्षम रही है" (संस्कृत शिक्षण विधि, 1985, पृ० – 39)।
- श्री राम प्रसाद मुखर्जी, भूतपूर्व न्यायधीश, कलकत्ता हाईकोर्ट के भी इस संदर्भ में कुछ ऐसे ही विचार है। उनके अनुसार - "भारत में केवल तीस या चालीस वर्ष पूर्व संस्कृत अनिवार्य थी और अब हमें देखना है कि हमारे प्रयत्नों से यह पुनः अनिवार्य कर दी जाए । इतना ही नहीं इसकी स्थिति पहले से भी दृढ़ हो क्योंकि अब हम स्वतंत्र हो चुके हैं और हमें अपने देश का पुंर्निर्माण करना है" (संस्कृत शिक्षण विधि, 1985, पृ० – 39-40)।
  - स्वामी विवेकानन्द ने संस्कृत शिक्षा को अनिवार्य बताते हुए कहा कि " संस्कृत की अनिवार्य शिक्षा ही एकमात्र ऐसा साधन है जो हिंदू समाज को एकता के सूत्र में बाँधने में सक्षम है" (संस्कृत शिक्षण विधि, 1985, पृ० – 34)।

उपरोक्त विचारों पर यदि दृष्टिपात किया जाए तो यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए। संस्कृत सिर्फ एक भाषा ही नहीं है वरन समस्त जीवन शैली है। शिक्षा का अंतिम उद्देश्य जो कि विद्यार्थी को राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ नागरिक के रुप में विकसित करना है, को प्राप्त करने के लिए संस्कृत भाषा का अनिवार्य अध्ययन आवश्यक है। बिना संस्कृत भाषा के अध्ययन के इस उद्देश्य को प्राप्त ही नहीं किया जा सकता है। शिक्षा के जो नवीन आयाम यथा नैतिक शिक्षा, मूल्य शिक्षा, शांति शिक्षा आदि विकसित हुए हैं वो इसिलिए हुए हैं क्योंकि संस्कृत भाषा की शिक्षा को महत्व नहीं दिया गया है। आज हम इन नवीन आयामों की शिक्षा तो दे रहे हैं लेकिन विद्यार्थियों में इन सब चीजों की पर्याप्त कमी दिखायी पड़ती है। हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति, जिसमें कि संस्कृत की शिक्षा अनिवार्य थी, में इन सब आयामों की शिक्षा तो नहीं दी जाती थी लेकिन विद्यार्थियों में ये सब मूल्य विद्यमान होते थे।

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षण एक__________ध्रुवीय प्रक्रिया है।
2. _________ सदी के अंत तक संस्कृत का प्रयोग लगभग न के बराबर हो गया।

3. पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा के स्थान को लेकर वर्तमान में______ धाराएँ प्रचलित हैं।
4. पाठ्यक्रम में संस्कृत को वैकल्पिक स्थान दिए जाने के पक्ष में दिए गए तर्कों को सूचीबद्ध करें।
5. पाठ्यक्रम में संस्कृत को अनिवार्य स्थान दिए जाने के पक्ष में दिए गए तर्कों को सूचीबद्ध करें।

5.4 पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान के संबंध में संस्कृत आयोग के विचार

भारत सरकार द्वारा डॉक्टर सुनीति कुमार चटर्जी की अध्यक्षता में संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन संबंधित जानकारी प्राप्त करने के लिए एक आयोग का गठन किया गया जिसे संस्कृत आयोग कहा जाता है। इस आयोग की स्थापना वर्ष 1956 ई० में की गई थी। आयोग ने इस संबंध में कार्य किया और सरकार को अपना प्रतिवेदन, जिसका शीर्षक 'साहित्य तथा कलाकृति' था, प्रस्तुत किया। सरकार को प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में आयोग ने स्पष्ट शब्दों में इस बात का उल्लेख किया है कि संस्कृत भाषा इतनी महत्वपूर्ण है कि इसे माध्यमिक विद्यालयों के पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान मिलना चाहिए जिससे कि भारत वर्ष का बच्चा-बच्चा इसका अध्ययन कर सके। आयोग ने मातृभाषा, अंग्रेजी, राष्ट्रभाषा हिंदी या अन्य भारतीय भाषा तथा संस्कृत को अनिवार्य करने के लिए सिफारिश की तथा उनके क्रियान्वयन के लिए 4 योजनाएँ भी सुझाई। ये 4 योजनाएँ निम्नलिखित हैं:

1. **प्रथम योजना-** इस योजना में निम्नलिखित तीन भाषाएँ सम्मिलित हैं:
    i. मातृभाषा (या क्षेत्रीय भाषा);
    ii. अंग्रेजी (या हिंदी या हिंदी भाषी प्रदेशों के लिए अन्य आधुनिक भाषा) ; तथा
    iii. संस्कृत या कोई अन्य प्राचीन भाषा
2. **द्वितीय योजना-** इस योजना में आयोग द्वारा चार भाषाएँ सम्मिलित की गईं:
    i. मातृभाषा (या क्षेत्रीय भाषा);
    ii. अंग्रेजी;
    iii. हिंदी या अन्य भारतीय भाषा; तथा
    iv. संस्कृत
3. **तृतीय योजना-** इस योजना का प्रारूप द्वितीय योजना के प्रारुप की ही भाँति है। अर्थात इसमें भी उपरोक्त चार भाषाएँ सम्मिलित की गई हैं लेकिन इस योजना में संस्कृत के परीक्षण की बात नहीं की गई है। संस्कृत भाषा को विशेष योग्यता एवं छात्रवृत्ति के लिए मापदंड बनाने की सिफारिश की गई है। परीक्षण का विषय न होने के कारण इस की उपेक्षा हो जाने की संभावना से आयोग द्वारा इसकी संस्तुति नहीं की गई।
4. **चतुर्थ योजना-** इस योजना में निम्नलिखित तीन भाषाओं को सम्मिलित किया गया है:

i. मातृभाषा (या क्षेत्रीय भाषा);
ii. अंग्रेजी;
iii. हिंदी या अन्य भारतीय भाषा

इसके अंतर्गत मातृभाषा या हिंदी अथवा इन दोनों के साथ संस्कृत को अनिवार्य रूप से पढ़ाने की बात की गई है। इस प्रकार का पाठ्यक्रम 5 वर्षों के लिए हो। इसके पश्चात संस्कृत पर अधिक ध्यान देने की बात की गई। साथ ही यह भी कहा गया कि परीक्षार्थी को इस विषय की परीक्षा में उत्तीर्ण होना अनिवार्य कर दिया जाए। संस्कृत को पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान देने के संबंध में आयोग द्वारा जो सिफारिश की गई वह निम्नलिखित है:

संस्कृत को पाठ्यक्रम में अनिवार्य स्थान देने की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि समस्त समस्याओं के बावजूद भी विद्यार्थी स्वयं संस्कृत का अध्ययन करना प्रारंभ करें कर दे। इसके लिए देश के सभी विद्यालयों में संस्कृत के अध्यापक की अनिवार्य व्यवस्था होनी चाहिए तथा इस व्यवस्था पर, संस्कृत पढ़ने वाले छात्रों की संख्या एवं उस पर व्यय होने वाले धन के पक्ष में जो तर्क दिए जाते हैं, उसका कोई प्रभाव नहीं पढ़ना चाहिए। विषयों का वर्गीकरण भी इस तरह होना चाहिए कि संस्कृत पढ़ने के इच्छुक छात्र इस अवसर से वंचित ना रह जाए।

द्वितीय संस्कृत आयोग – प्रथम संस्कृत आयोग के 55 वर्ष बाद यू० पी० ए० सरकार ने द्वितीय संस्कृत आयोग की स्थापना की। इस आयोग के अध्यक्ष पद्मभूषण सत्यव्रत शास्त्री थे। द्वितीय संस्कृत आयोग की सिफारिश निम्नलिखित है:

i. विद्यालय शिक्षा में 4 भाषा सूत्र लागू किया जाए ;
ii. कक्षा 6 से 10 तक संस्कृत भाषा के अध्ययन-अध्यापन को अनिवार्य किया जाए ;
iii. प्रत्येक प्रौद्योगिकी संस्थान में संस्कृत विषय को अनिवार्य किया जाए ; तथा
iv. सभी संकायों में संस्कृत अध्यापकों की नियुक्ति की जाए

अभ्यास प्रश्न

6. प्रथम संस्कृत आयोग का गठन वर्ष__________ में हुआ था।
7. प्रथम संस्कृत आयोग के अध्यक्ष__________थे।
8. द्वितीय संस्कृत आयोग का गठन प्रथम संस्कृत आयोग के__________ वर्ष बाद हुआ था।
9. द्वितीय संस्कृत आयोग के अध्यक्ष __________ थे।
10. प्रथम संस्कृत आयोग ने__________ योजनाएँ सुझाई
11. प्रथम संस्कृत आयोग द्वारा सुझाई गई द्वितीय योजना का संक्षिप्त वर्णन करें।
12. प्रथम संस्कृत आयोग द्वारा सुझाई गई चतुर्थ योजना का संक्षिप्त वर्णन करें।

5.5 त्रिभाषा सूत्र एवं संस्कृत

त्रिभाषा सूत्र से आशय भारत में भाषा शिक्षण संबंधी उस नीति से है जो भारत सरकार द्वारा विभिन्न राज्यों की सरकारों से विचार-विमर्श करके बनाई गई है। सन 1956 में अखिल भारतीय शिक्षा परिषद द्वारा इस सूत्र को मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में अपनी संस्तुति के रुप में प्रस्तुत किया गया। 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इसका जोरदार समर्थन हुआ और 1968 में ही इसका पुनः अनुमोदन हुआ। मुख्यमंत्रियों द्वारा भी इसे अनुमोदित कर दिया गया था। संसद द्वारा सन 1992 में इसे कार्यान्वयन के लिए संस्तुत कर दिया गया।

त्रिभाषा सूत्र में विभिन्न भाषाओं के तीन समूह बनाए गए हैं। इन समूहों में शामिल भाषाओं में से विद्यार्थियों को प्रत्येक समूह में से कोई एक भाषा लेकर पढ़ना था। ये तीन समूह निम्नलिखित हैं:

i. शास्त्रीय भाषाएँ जैसे संस्कृत, अरबी, फारसी आदि;
ii. राष्ट्रीय भाषाएँ जिसमें संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल 22 भाषाएँ हैं; तथा
iii. आधुनिक यूरोपीय भाषाएँ

संस्तुति इस बात की थी गई थी कि इन तीनों समूहों में से प्रत्येक में से एक भाषा लेकर कोई तीन भाषा पढ़ना है। लेकिन यह संस्तुति बाध्यकारी या अनिवार्य नहीं थी। शिक्षा राज्य सूची का विषय होने के कारण यह राज्यों की इच्छा पर निर्भर था। संस्तुति में यह बात भी कही गई थी कि हिंदी भाषी राज्यों में दक्षिण की कोई भाषा पढ़ाई जाए।

अब यदि त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत के स्थान की बात की जाए तो संस्कृत को इसमें स्थान तो मिला लेकिन यह स्थान अनिवार्य नहीं था। वैकल्पिक स्थान मिलने के कारण इसके अध्ययन-अध्यापन में कुछ विशिष्ट प्रगति नहीं हुई। सन 2000 में यह पाया गया कि कुछ राज्य हिंदी और अंग्रेजी के अतिरिक्त अपनी इच्छा के अनुसार संस्कृत, अरबी, फ्रेंच तथा पुर्तगीज पढ़ाते हैं।

जहाँ तक वर्तमान पाठ्यक्रम का प्रश्न है राष्ट्रीय शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण परिषद में विद्यालयी शिक्षा के किसी भी स्तर के पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को अनिवार्य स्थान नहीं दिया है। राष्ट्रीय शैक्षिक शोध एवं प्रशिक्षण परिषद पाठ्यक्रम निर्माण हेतु केंद्र सरकार की एक संस्था है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि केंद्र सरकार ने इसे अनिवार्य स्थान नहीं दिया है। जहाँ तक राज्य शिक्षा परिषदों का प्रश्न है विभिन्न राज्यों में स्थिति भिन्न-भिन्न है। लेकिन अधिकांश राज्यों में इसे वैकल्पिक स्थान दिया गया है।

अभ्यास प्रश्न

13. त्रिभाषा सूत्र किस वर्ष प्रस्तावित किया गया?
14. त्रिभाषा सूत्र का अनुमोदन किस शिक्षा नीति में किया गया?
15. त्रिभाषा सूत्र की कार्यान्वयन के लिए संस्तुति किस वर्ष की गई?
16. त्रिभाषा सूत्र में भाषाओं के कितने समूह बनाए गए थे?

17. त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत को क्या स्थान प्राप्त है?

5.6 संस्कृत पाठशालाओं में संस्कृत का स्थान

संस्कृत भाषा को जीवित रखने एवं इसको पुनः प्रतिष्ठित करने का श्रेय इन संस्कृत पाठशालाओं को ही जाता है। ये संस्कृत पाठशालाएँ धार्मिक संस्थाओं यथा - शंकराचार्य द्वारा देश के चार दिशाओं में स्थापित चार मठ के द्वारा, राज्य सरकार द्वारा तथा केंद्र सरकार द्वारा संचालित किए जाते हैं। वाराणसी स्थित संपूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के अंगीभूत इकाई के रूप में विभिन्न संस्कृत महाविद्यालय एवं विद्यालय कार्यरत हैं। केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान संचालित किए जा रहे हैं। इन संस्कृत पाठशालाओं में व्याकरण, वेद, दर्शन, छंद, ज्योतिष, आयुर्वेद के अतिरिक्त अन्य विषयों यथा गणित, विज्ञान एवं भाषा विज्ञान की शिक्षा भी दी जाती है। इसके अलावा कर्मकांड, वास्तुशास्त्र आदि विषयों की शिक्षा भी दी जाती है। ज्ञान-विज्ञान की इन विभिन्न शाखाओं के अध्ययन-अध्यापन के इतर संस्कृत भाषा के शिक्षकों को तैयार करने हेतु प्रशिक्षण पाठ्यक्रम यथा – बी०एड्० कार्यक्रम भी संचालित किए जा रहे हैं। इस प्रकार ये संस्कृत पाठशालाएँ संस्कृत भाषा की गरिमा को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए प्रयासरत हैं।

5.7 विद्यालय स्तर पर संस्कृत पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तक

पाठ्यपुस्तक शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के संपादन के लिए एक महत्वपूर्ण सामग्री है। शिक्षक द्वारा पाठ्यक्रम का विद्यार्थियों तक प्रसारण पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से ही किया जाता है। विद्यार्थी भी पाठ्यक्रम का स्वअध्ययन पाठ्यपुस्तक के माध्यम से ही करता है। अतः, पाठ्यपुस्तक का गुणवत्तापूर्ण या स्तरीय होना आवश्यक है। पाठ्यपुस्तकों की गुणवत्ता से आशय इस बात से होता है कि पाठ्यपुस्तक पाठ्यक्रम में शामिल पाठ्यवस्तु का भली-भाँति ज्ञान प्रदान करें। इस प्रकार पाठ्यक्रम एवं पाठ्यपुस्तकों के मध्य प्रत्यक्ष संबंध होता है। पाठ्यक्रम में जिस विषय को जितना महत्व प्राप्त होता है उस विषय के लिए वैसे ही पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया जाता है। संस्कृत भाषा को पाठ्यक्रम में वैकल्पिक स्थान प्राप्त होने के कारण इस विषय के लिए स्तरीय पाठ्य पुस्तकों का सर्वथा अभाव दिखता है। जो पाठ्यपुस्तक उपलब्ध है वे भी बस खाना पूर्ति के लिए हैं। पाठ्यपुस्तकों में व्याकरण के संप्रत्ययों को सरल ढंग से प्रस्तुत करने के प्रयास में इतना सरल कर दिया गया है कि विद्यार्थी उस संप्रत्य को समझ ही नहीं पाता है। अधिकांश पुस्तकों की रचना संवाद शैली के आधार पर की जा रही है जो कि संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान करने के लिए अपर्याप्त है। संस्कृत भाषा के विद्वान इस क्षेत्र में कार्य नहीं कर रहे हैं क्योंकि लेखन कार्य में किए गए श्रम के अनुरूप उन्हें धन प्राप्ति की आशा नहीं है और लेखन कार्य अब स्वांतःसुखाय नहीं रह गया है। अतः, इस बात की आवश्यकता है कि पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को

अनिवार्य स्थान प्रदान किया जाए। एक बार यदि इसे अनिवार्य स्थान प्राप्त हो गया तो स्वयं स्तरीय पाठ्य पुस्तकों का सृजन होने लगेगा।

अभ्यास प्रश्न

18. बनारस स्थित संस्कृत विश्वविद्यालय का क्या नाम है?
19. संस्कृत पाठशालाओं में किन-किन विषयों की शिक्षा दी जाती है?

5.8 सारांश

विद्यालयी शिक्षा में पाठ्यक्रम एवं उसमें किसी भी विषय को दिए गए स्थान का शिक्षा प्रणाली में उल्लेखनीय योगदान होता है। अतः, शिक्षण व्यवसाय में शामिल व्यक्तियों को इस तथ्य से अवगत होना चाहिए कि पाठ्यक्रम में किसी विषय को क्या स्थान दिया गया है और क्या दिया जाना चाहिए? इस तथ्य को ध्यान में रखकर प्रस्तुत इकाई में पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा के स्थान की चर्चा की गई है। पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का का स्थान वैकल्पिक होना चाहिए या अनिवार्य इस पर बड़ा ही सुंदर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस संदर्भ में प्रचलित दोनों मुख्य विचारधाराओं के समर्थकों द्वारा दिए गए तर्कों के उल्लेख से प्रशिक्षु-शिक्षक को अवगत कराने की कोशिश की गई है। इसके साथ ही साथ इस विवेचन को समर्थन प्रदान करने के लिए संस्कृत आयोग के सिफारिशों की भी चर्चा की गई है। दोनों संस्कृत आयोग की मुख्य सिफारिशों को इस इकाई में स्थान दिया गया है। त्रिभाषा सूत्र में संस्कृत दिए गए स्थान का भी वर्णन किया गया है। संस्कृत पाठशालाओं में संस्कृत की स्थिति एवं संस्कृत भाषा के उपलब्ध पाठ्यपुस्तकों पर संक्षिप्त चर्चा के साथ इस इकाई का समापन किया गया है। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई संस्कृत भाषा के शिक्षण अधिगम कार्य में शामिल व्यक्तियों को पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का क्या स्थान है और क्या होना चाहिए कि जानकारी प्रदान करता है जो उनके कार्य को प्रभावी बनाने में निश्चय ही सहयोग करेगा और उनके लिए लाभदायी सिद्ध होगा|

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. त्री ध्रुवीय
2. 20 वीं
3. 2
4. मातृभाषा के अध्ययन द्वारा क्षतिपूर्ति
   अनुवाद एक विकल्प के रुप में

मातृभाषा के शब्दों का विशद ज्ञान
प्राचीन एवं अप्रासंगिक भाषा तथा
संस्कृत केवल कर्मकांड की भाषा

5. आधुनिक युग की भाषा
ज्ञान के समस्त शाखाओं का अध्ययन-अध्यापन संभव
अन्य भाषाओं का ज्ञान प्राप्त करने में सहायक
भारतीय संस्कृति को समझने के लिए आवश्यक तथा
कम्प्युटर के क्षेत्र में निपुणता हासिल करने के लिए
6. 1956
7. सुनीति कुमार चटर्जी
8. 55
9. पद्यमभूषण सत्यव्रत शास्त्री
10. चार
11. द्वितीय योजना- 1. मातृभाषा (या क्षेत्रीय भाषा) 2. अंग्रेजी 3. हिंदी या अन्य भारतीय भाषा 4. संस्कृत
12. चतुर्थ योजना- 1. मातृभाषा (या क्षेत्रीय भाषा); 2. अंग्रेजी; 3. हिंदी या अन्य भारतीय भाषा इसके अंतर्गत मातृभाषा या हिंदी अथवा इन दोनों के साथ संस्कृत को अनिवार्य रूप से 5 वर्ष तक पढ़ाने की बात की गई। इसके पश्चात संस्कृत पर अधिक ध्यान देने की बात की गई। साथ ही यह भी कहा गया कि परीक्षार्थी को इस विषय की परीक्षा में उत्तीर्ण होना अनिवार्य कर दिया जाए।
13. 1956
14. 1968
15. 1992
16. 3
17. वैकल्पिक
18. सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय
19. संस्कृत पाठशालाओं में व्याकरण, वेद, दर्शन, छंद, ज्योतिष, आयुर्वेद, गणित, विज्ञान, भाषा-विज्ञान, कर्मकांड, वास्तुशास्त्र आदि विषयों की शिक्षा के साथ-साथ संस्कृत भाषा के शिक्षकों को तैयार करने हेतु प्रशिक्षण पाठ्यक्रम यथा – बी०एड्० कार्यक्रम की भी शिक्षा दी जाती है।

5.10 संदर्भ एवं सहयोगी ग्रंथ

1. चौबे, विजय नारायण. (1985). संस्कृत शिक्षण विधि, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, आगरा।

2. झा, उदयशंकर. संस्कृत शिक्षण. () सुरभारती प्रकाशन, चौखम्बा, वाराणसी।
3. झा, नागेन्द्र. (2013). प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति. अभिषेक प्रकाशन: दिल्ली ।
4. दुबे द्विवेदी एवं मिश्र. () संस्कृत शिक्षण के नये आयाम. राधा प्रकाशन मन्दिर, आगरा।
5. पाण्डेय, रामशकल. (2008). संस्कृत शिक्षण. विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
6. मित्तल, संतोष. संस्कृत शिक्षण. () आर. लालबुक डिपो, मेरठ।
7. शर्मा , उमाशंकर. (2008). संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्बा बुक्स, बनारस।
8. शर्मा, उषा. (). संस्कृत शिक्षण. स्वाति पब्लिकेशन्स. जयपुर।
9. शर्मा, नन्दराम. (2007). संस्कृत शिक्षण. साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन।
10. सफाया, रघुनाथ. .() संस्कृत शिक्षण. हरियाणा साहित्य अकादमी: पंचकुला, हरियाणा।
11. संस्कृत शिक्षक संदर्शिका. (2012). राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली।

5.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में संस्कृत के स्थान निर्धारण पर निबंध लिखें।
2. प्रथम एवं द्वितीय दोनों संस्कृत आयोग का परिचय दें एवं पाठ्यक्रम में संस्कृत को स्थान प्रदान करने संबंधी उनकी सिफारिशों को लिखें।
3. त्रिभाषा सूत्र की व्याख्या करें।
4. संस्कृत भाषा के उत्थान में संस्कृत पाठशालाओं की क्या भूमिका है? विवेचना करें।
5. क्या विद्यालयी शिक्षा के पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा को प्राप्त स्थान विद्यालयी शिक्षा के लिए निर्मित संस्कृत विषय के पाठ्यपुस्तकों की गुणवत्ता में ह्रास का कारण है? यदि हाँ तो अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दें।
6. पाठ्यक्रम में संस्कृत भाषा का आपके विचार से क्या स्थान होना चाहिए?
7. क्या संस्कृत आयोग की सिफारिशों को लागू किया जाना चाहिए? हाँ या नहीं। अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दें।

खण्ड 2
Block 2

इकाई 1- संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियाँ

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियाँ
1.3.1 पारंपरिक विधि
1.3.2 पाठ्यपुस्तक विधि
1.3.3 सुगम पद्धति अथवा निर्बाध विधि
1.3.4 व्याकरण-अनुवाद विधि
1.3.5 वार्तलाप विधि या संवाद विधि या संप्रेषणात्मक विधि
1.3.6 आगमन-निगमन विधि
1.4 सारांश
1.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.6 शब्दावली
1.7 संदर्भ एवं सहयोगी ग्रंथ
1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भाषा व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करती है। यह मनुष्य को अपने विचारों को संप्रेषित करने के योग्य बनाती है। अतः, इसका शिक्षण अत्यंत ही प्रभावपूर्ण होना चाहिए। संस्कृत भाषा शिक्षण के लिए तो यह बात और भी आवश्यक हो जाती है क्योंकि संस्कृत भाषा तो भारतीय परिदृश्य में अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। यह संपूर्ण ज्ञान-विज्ञान की भाषा है। यह साहित्य, संस्कृति एवं संस्कार की भाषा है। यह योग की भाषा है। अतः, इस भाषा का प्रभावी शिक्षण होना आवश्यक है। यह भाषा इतनी महत्वपूर्ण है फिर भी आज अपने उत्थान की प्रतीक्षा कर रही है। यह हमारी सबसे बड़ी विडंबना है। विद्यार्थियों एवं अभिभावकों में इसके प्रति सर्वथा अरुचि है। इस अरुचि को समाप्त कर इस भाषा को अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को वापस दिलाने के लिए भी वर्तमान परिवेश में इसका प्रभावी शिक्षण आवश्यक है। किसी भी भाषा के प्रभावी शिक्षण के लिए आवश्यक है कि उस भाषा के विद्वानों द्वारा तय की गई शिक्षण विधियों का प्रयोग किया जाय। यदि संस्कृत को विज्ञान की तरह से पढ़ाया जाय तो शायद शिक्षण कार्य उतना प्रभावी न हो। प्रस्तुत इकाई की रचना संस्कृत भाषा के प्रशिक्षित शिक्षकों को संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों का ज्ञान प्रदान करने के

लिए की गई है। प्रशिक्षु शिक्षकों से यह आशा की जाती है कि वह इन शिक्षण विधियों का समुचित प्रयोग अपने शिक्षण कार्य में करेंगे एवं संस्कृत भाषा के उत्थान में अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान देंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप इस योग्य हो जाएँगे कि-

1. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों को सूचीबद्ध कर सकेंगे
2. संस्कृत शिक्षण की पारंपरिक विधियों का वर्णन कर सकेंगे
3. संस्कृत शिक्षण की पाठ्यपुस्तक विधि की चर्चा कर सकेंगे
4. संस्कृत शिक्षण की सुगम या निर्बाध विधि की विवेचना कर सकेंगे
5. व्याकरण-अनुवाद विधि की इसकी विशेषताओं एवं सीमाओं सहित व्याख्या कर सकेंगे
6. संस्कृत शिक्षण के संवाद विधि या वार्तालाप विधि या संप्रेषणात्मक विधि का वर्णन कर सकेंगे
7. आगमन एवं निगमन विधि का उल्लेख कर सकेंगे

1.3 संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियाँ

प्रत्येक विषय का चाहे वह भाषा हो या विज्ञान अपना अलग महत्व होता है। उनके अपने शैक्षणिक उद्देश्य होते हैं तथा उन शैक्षणिक उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कुछ निश्चित विषयवस्तु होते हैं या यूँ कहले कि एक निश्चित पाठ्यक्रम होता है। प्रत्येक विषय के अधिगम परिणाम भिन्न-भिन्न होते हैं। अर्थात ज्ञान की एक इकाई या शाखा दूसरी इकाई या शाखा से आवश्यकता, शैक्षणिक उद्देश्य, विषयवस्तु, अधिगम परिणाम आदि के आधार पर भिन्न होते हैं। जब भिन्नता के इतने सारे आधार हैं तो फिर समस्त विषयों के लिए एक ही शिक्षण विधि का प्रयोग समीचीन नहीं है। प्रत्येक विषय में शिक्षण विधि के आधार पर विभिन्नता होनी चाहिए। इस तथ्य को ध्यान में रखकर प्रत्येक विषय के विद्वानों ने अपने-अपने विषय के लिए शिक्षण विधि या विधियों को निश्चित किया और आज भी इस दिशा में प्रयास कर रहे हैं ताकि उस विषय का प्रभाव- पूर्ण शिक्षण अधिगम हो सके। यहाँ हम संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों की चर्चा करेंगे।

3.1 पारंपरिक विधि

संस्कृत एक अति प्राचीन भाषा है। इसका शिक्षण भी अति प्राचीन काल से चला आ रहा है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जब से भारत में शिक्षा की शुरुआत हुई तब से संस्कृत भाषा का अध्ययन-अध्यापन किया जा रहा है। भारत में शिक्षा की शुरुआत वैदिक काल से मानी जाती है। गुरुकुलों का जन्म वैदिक काल में शिक्षा प्रदाना करने की लिए हुआ इस बात के पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हैं। इस प्रकार हम यह भी कहा सकते हैं कि वैदिका काल से ही या गुरुकुल के समय से ही भारत में संस्कृत का शिक्षण किया जा रहा है। उसा समय शिक्षण का कार्य हमारे ऋषियों द्वारा किया जाता था। वे सारे ऋषि मंत्रद्रष्टा थे।

उन्होंने शिक्षण की विविधा विधियों की खोजा की एवं उनकाअपने शिक्षण-अधिगम कार्य में प्रयोग किया। गुरुकुलों में संस्कृत शिक्षण के लिए प्रयोग में लाए जाने वाली विधियों के समूह को वर्तमान परिदृश्य में संस्कृत शिक्षण की पारंपरिक विधि की संज्ञा दी जाती है। उपनयन संस्कार के साथ छात्र का गुरुकुल में प्रवेश होता था। गुरु प्रारंभिक शिक्षा के रुप में छात्र को गायत्री मंत्र की दीक्षा देता था। छात्र उसी दिन से गुरुकुल का अंतेवासी हो जाता था एवं प्रतिदिन नित्यकर्म के बाद गुरु के समीप बैठ कर उनकी आज्ञा से वेदाध्ययन करता था। अध्ययन-अध्यापन कार्य का आरंभ एवं समापन दोनों ऊँ के उच्चारण के साथ होता था। गुरु एवं शिष्य द्वारा अध्ययन-अध्यापन के लिए जिन विधियों को प्रयोग में लाया जाता था उनमें से कुछ विधियों का वर्णन निम्नलिखित है:

1. **मौखिक एवं व्यक्तिगत शिक्षण पद्धति-** इस विधि में गुरु पहले वेद मंत्रों का उच्चारण करते थे तथा शिष्य उनका अनुकरण करते थे। उच्चारण में आने वाले प्रत्येक कठिनाई का गुरु द्वारा समाधान किया जाता था। शिष्य पुनः उनका उच्चारण करते थे। यहा चक्र तब तक चलता रहता था जबा तक कि शिष्य शुद्ध-शुद्ध उच्चारण करना नहीं सीखा लेता है। गुरु प्रत्येक विद्यार्थी की समस्या का व्यक्तिगत रुप से समाधान करता था। इस प्रकार व्यक्तिगत शिक्षा पर भी बल दिया जाता था।
2. **वाद-विवाद विधि-** इस विधि में पढ़ाए जाने वाले पाठ के पक्ष तथा विपक्ष में बातें कही जाती थी, तर्क दिए जाते थे, उदाहरण प्रस्तुत किए जाते थे और इस प्रकार प्रस्तावित विषय पर प्रकाश डाला जाता था। इससे विद्यार्थी में अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की योग्यता आती थी। इस विधि के संदर्भ में ऋग्वेद में जानकारी दी गई है।
3. **प्रश्नोत्तर प्रणाली-** इस विधि में पाठ को प्रश्नोत्तर के रूप में पढ़ाया जाता था। प्रत्येक प्रश्न में दो या तीन पद्य होते थे तथा प्रत्येक व्याख्यान में 60 प्रश्न होते थे। प्रत्येक प्रश्न के बाद विद्यार्थी उसे दोहराता था और इस प्रकार क्रमिक रूप से संपूर्ण व्याख्यान समाप्त हो जाता था। इस विधि का वर्णन उपनिषदों में देखने को मिलता है। गंभीर विषयों को उपनिषदों में प्रश्न विधि के माध्यम से बताया गया है। प्रश्न का उत्तर देते समय गुरु, कथा, कहानी, उदाहरण आदि का भी प्रयोग किया करते थे और कभी-कभी प्रश्न का विस्तृत उत्तर देने के बजाय सिर्फ संकेत देते थे और विद्यार्थी उस संकेत के आधार पर प्रश्न का उत्तर ढूँढने का प्रयास करते थे। बौद्ध ग्रंथों में भी प्रश्न विधि का जिक्र मिलता है। मिलिंदपन्हो नामक ग्रंथ में यूनानी राजा मिनांडर बौद्ध भिक्षु नागसेन से बौद्ध धर्म के संबंध में अनेक प्रश्न करते हैं एवं नागसेन उनका उत्तर देते हैं।
4. **सूत्र पद्धति-** गंभीर तथ्यों को सूक्ष्म रूप से रूप में बताना ही सूत्र कहलाता है। व्याकरण एवं दर्शन के गंभीर तथ्यों को सूत्र विधि से ही पढ़ाया जाता था, यथा- 'अकुहविसर्जनियनांकंठः' अर्थात कवर्ग, विसर्ग और ह कंठ से बोले जाते हैं। 'पाणिनि' के सूत्र तो इस विधि के सर्वश्रेष्ठ उदाहरण हैं। आज भी कुछ अध्यापक इसका प्रयोग करते हैं। इस विधि से अध्ययन-अध्यापन करने से विद्यार्थी के स्मरण शक्ति सशक्त होती थी।

5. **कहानी कथन विधि-** इस विधि में कथा के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। यह बाल मनोविज्ञान पर आधारित थी। बालक स्वभाव से ही कहानी प्रेमी होता है। अतः, कहानी के माध्यम से पढ़ने में अधिक रुचि प्रदर्शित करते थे। इस माध्यम से छात्रों को नैतिक शिक्षा दी जाती थी। विष्णु शर्मा ने राजकुमारों की कहानियों के माध्यम से ही नीतियों की शिक्षा दी थी। पंचतंत्र एवं हितोपदेश ऐसी ही कहानियों का संग्रह है। कहानी कथन विधि के अध्ययन से एका बात स्पष्ट होती है कि हमारे पूर्वजों को बाल मनोविज्ञान का गहरा ज्ञान था। वे बालक को अपने शिक्षण के केंद्र में रखते थे। उस समय के केंद्र में सिर्फ पाठ्यवस्तु ही नहीं थी।
6. **भाषण विधि-** पाणिनी ने अपने ने अष्टाध्यायी में भाषण शब्द का कई बार प्रयोग किया है। इससे अनुमान लगाया जाता है कि प्राचीन काल में संस्कृत शिक्षण के लिए भाषण विधि का भी प्रयोग किया जाता था। इस विधि में गुरु प्रस्तावित पाठ पर भाषण देता था। भाषण के अंत में विद्यार्थी अपने शंकाओं को गुरु के समक्ष रखते थे और गुरु उन समस्याओं का समाधान करते थे। नालंदा विश्वविद्यालय में इस प्रकार के साथ बड़े-बड़े कक्षों के अवशेष मिले हैं जिनमें सामूहिक शिक्षण भाषण या वाद-विवाद के माध्यम से किया जाता था। यह विधि वर्तमान समय के व्याख्यान विधि से मिलती-जुलती है।
7. **मॉनिटोरियल मेथड** – पद 'मॉनिटोरियल' आंग्ल भाषा के शब्द मॉनिटर से बना है जिसका अर्थ होता है निरीक्षण करना या निरीक्षण करने वाला। वर्तमान समय में विद्यालयों में प्रत्येक कक्षा में एक मॉनिटर होता है जो कक्षा में अनुशासन बनाए रखने का कार्य करता है। प्राचीन काल में गुरुकुलों में वरिष्ठ विद्यार्थियों द्वारा कनिष्ठ विद्यार्थियों को पढ़ाने की परंपरा थी। गुरुकुल में विद्यार्थियों की संख्या अधिक होने पर वरिष्ठ छात्र गुरु की सहायता हेतु कनिष्ठ छात्रों को पढ़ाया करते थे। इसी को मॉनिटोरियल पद्धति कहते थे। यह पद्धति वर्तमान समय में भी थोड़े बदले स्वरुप के साथ प्रचलित है। वर्तमान परिवेश में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में शिक्षण कार्य भार अधिक हो जाने के कारण शोध छात्रों की सहायता से कनिष्ठ छात्रों को अध्यापित करवाया जाता है। इसा प्रकार, यह विधि आज भी प्रासंगिक है।

अभ्यास प्रश्न

1. छात्र का गुरुकुल में प्रवेश उपनयन संस्कार के बाद होता था। (सत्य/असत्य)
2. मौखिक शिक्षण पद्धति में पह्ले शिष्य द्वारा वेद मंत्रों का उच्चारण किया जाता था फिर गुरु द्वारा। (सत्य/असत्य)
3. वाद-विवाद विधि में सिर्फ पढ़ाए जाने वाले पाठ के पक्ष में तर्क दिए जाते थे। (सत्य/असत्य)
4. प्रश्नोत्तर विधि से पढ़ाए जानेवाले प्रत्येक पाठ में कुल 60 प्रश्न होते थे। (सत्य/असत्य)
5. प्रश्नोत्तर विधि का वर्णन उपनिषदों में मिलता है। (सत्य/असत्य)
6. _______नामक बौद्ध ग्रंथ में यूनानी राजा मिनांडर एवं बौद्ध भिक्षु _______के मध्य प्रश्नोत्तर का ज़िक्र है।

7. पाणिनी ने अपने पुस्तक अष्टाध्यायी में ______का प्रयोग किया है।
8. कहानी कथन विधि से सामान्यतः______शिक्षा दी जाती थी।
9. भाषण विधि के प्रयोग का वर्णन______के ग्रंथ______ में मिलता है।

1.3.2 पाठ्यपुस्तक विधि

पाठ्यपुस्तक विधि का सामान्य अर्थ है, पाठ्यपुस्तकों के माध्यम से शिक्षा। यह विधि अंग्रेजों की देन है। इस विधि के पीछे यह मान्यता करती है कि मनुष्य स्मरण के साथ-साथ विस्मरण भी करता है। विस्मरण की स्थिति में पुनर्स्मरण करने के लिए ज्ञान को पुस्तकों के रुप में संरक्षित करना चाहिए। भारत में इस विधि के प्रबल समर्थक डॉक्टर वैस्ट थे। डॉक्टर वैस्ट की यह मान्यता थी की पढ़ने में दक्षता प्राप्त करना, लिखने और बोलने में दक्षता प्राप्त करने की तुलना में अधिक सरल एवं लाभदायी है। अतः, इसका ग्राह्य मूल्य भी अधिक होता है। ग्राह्य मूल्य से आशय विद्यार्थी को अपने पाठ्यक्रम को अपूर्ण छोड़ने पर प्राप्त होने वाले लाभ से है। वास्तव में यह विधि भारत में अंग्रेजों के साथ आई। मैकाले ने शिक्षा नीति दी जिसके परिणाम स्वरुप भारत में अंग्रेजी का बहुत प्रचार-प्रसार हुआ। आंग्ल भाषा के प्रचार-प्रसार में पाठ्यपुस्तकों ने महती भूमिका निभाई। डॉक्टर वैस्ट के अनुसार, शिक्षण को इस ढंग से नियोजित किया जाना चाहिए कि छात्र जब भी विद्यालय छोड़े अपने पठित अंश का अधिकतम लाभ उठाने में सक्षम हो क्योंकि इसी लाभ का सर्वाधिक महत्व है। इस विधि के महत्व को देखकर इसका प्रयोग संस्कृत शिक्षण में भी किया जाने लगा ताकि छात्रों को अधिकतम ग्राह्य मूल्य मिल सके।

इस विधि में सर्वप्रथम विद्यार्थी के परिवेश तथा उसकी कक्षा के अनुकूल विषय सामग्री और शब्दावली का वर्गीकरण कर उसे पुस्तक के रूप में विकसित किया जाता है। विषयवस्तु के रुप में क्रमशः वर्णमाला, शब्द, वाक्य, अनुच्छेद आदि का ज्ञान कराया जाता है। संस्कृत भाषा शिक्षण के लिए संस्कृत के विद्वानों द्वारा ऐसी अनेक पुस्तकें तैयार की गई। ईश्वरचंद विद्यासागर कृत 'संस्कृत पाठ्यपुस्तक', जीवानंद विद्यासागर की 'संस्कृत शिक्षा मंजरी' बी० बी० कमल की 'सुबोध संस्कृतम् ' एस० डी० सातवेलकर की 'संस्कृत टीचर' आदि इस क्षेत्र में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन पुस्तकों के माध्यम से छात्रों को संस्कृत भाषा की ध्वनियों, वर्णों, श्लोकों, अनुच्छेदों आदि का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इन पाठ्यपुस्तकों का प्रयोग विद्यार्थी भी स्वअध्ययन के लिए करते हैं और शिक्षक भी अपने शिक्षण कार्य के लिए करते हैं। इस विधि से शिक्षण करते समय पाठ्य पुस्तक में वर्णित पाठ को ही केंद्र में रखा जाता है। शिक्षण प्रक्रिया सामान्यतः निम्नलिखित चरणों में संपन्न की जाती है।

1. पहले शिक्षक द्वारा पाठ का आदर्श संस्कृत वाचन किया जाता है।
2. इसके पश्चात छात्र द्वारा पाठ का अनुकरण वाचन किया जाता है।
3. शिक्षक द्वारा पाठ में आए कठिन शब्दों का विद्यार्थी की मातृभाषा में अर्थ निरूपण किया जाता है।
4. इसके बाद विद्यार्थियों को मौन वाचन करने के लिए कहा जाता है लेकिन यह आवश्यक नहीं है। यह शिक्षक निर्धारित करता है।

इस प्रकार संपूर्ण पाठ का शिक्षण कार्य कर लेने के बाद छात्रों को अभ्यास का अवसर दिया जाता है। व्याकरण के नियम एवं अनुवाद कार्य का भी अभ्यास कराया जाता है।

पाठ्यपुस्तक विधि की विशेषताएँ

इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

i. विद्यार्थी को संस्कृत वाचन का अभ्यास करने का पर्याप्त अवसर मिलता है
ii. विद्यार्थी के शब्द भंडार में वृद्धि होती है
iii. विद्यार्थी में संस्कृत भाषा एवं साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न होती है
iv. उच्चस्तरीय कक्षाओं को पढ़ाने के लिए यह सर्वोत्तम विधि है;
v. यह आवश्यक शैक्षिक सामग्रियों के अभाव को कम करता है।

पाठ्यपुस्तक विधि की सीमाएँ-

इस विधि की निम्म्लिखित सीमाएँ हैं-

i. इस विधि में मौखिक अभिव्यक्ति को महत्व नहीं दिया जाता है।
ii. इस विधि से संस्कृत भाषा का शिक्षण करने पर विद्यार्थियों को अपने उच्चारण दोष को सुधारने के कम अवसर मिलते हैं।
iii. इस विधि में व्याकरण को विशेष महत्व नहीं मिल पाता है।
iv. यह विधि छात्रों में नीरसता उत्पन्न करती है।

1.3.3 सुगम पद्धति अथवा निर्बाध विधि

इस विधि का विकास अंग्रेजी भाषा को विदेशी भाषा के रूप में सिखाने के लिए किया गया था। इस विधि के तीन मुख्य तत्व होते हैं:

i. मौखिक कार्य की बहुलता
ii. मातृभाषा की पूर्ण रूपेण उपेक्षा
iii. वस्तु और शब्द के मध्य संबंध की स्थापना।

यहा विधि वाल्टर एनफील्ड के 'मदर्स मेथड' पर आधारित है। इस विधि का प्रयोग परसा विद्यालय में ग्रीक एवं लैटिन पढ़ाने के लिए किया गया। यह प्रयोग अत्यंत सफल हुआ था। इसका उल्लेख इंग्लैंड की शिक्षा परिषद में किया गया था। शिक्षा परिषद के सदस्यों के अनुसार इस विधि द्वारा कुशल और सिद्धहस्त व्यक्ति छात्रों को अधिक दत्तचित्त बना सकते हैं। इस विधि के अनुसार पाठ को तैयार करते ही छात्र भाषा का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। फलतः उनका मस्तिष्क बड़ा ही आत्मनिर्भर एवं सृजनात्मक बन जाता है। संस्कृत शिक्षण के लिए इस विधि का सर्वप्रथम वर्णन प्रोफ़ेसर बी० पी० बोकिल ने अपनी पुस्तक न्यू अप्रोच टू संस्कृत में किया है। इस विधि का व्यवहारिक प्रयोग भी सर्वप्रथम प्रोफेसर बोकिल ने ही एलिफेंट ट्यून हाई स्कूल मुंबई में किया था। इस विधि से शिक्षण कार्य करते समय किसी अन्य भाषा का

सहारा नहीं लिया जाता है। छात्र को संस्कृत भाषा में ही सीखना होता है और अपने भावों की अभिव्यक्ति संस्कृत भाषा में ही करनी होती है। ताकि संस्कृत में उनका पूरा अधिकार हो जाए और छात्र संस्कृत भाषा में भी अपनी मातृभाषा जितना ही दक्ष हो जाए। इस विधि में शिक्षक छात्र से प्रश्न पूछता है और छात्र उसका उत्तर देते हैं। इस प्रकार, शिक्षक छात्र को सरल वाक्य के निर्माण हेतु प्रोत्साहित करता है। इस प्रणाली में वाक्य को भाषा की सबसे छोटी इकाई मानी जाती है। इस प्रणाली में मातृभाषा की पूर्ण रुप से उपेक्षा होती है। विद्यार्थी संस्कृत में ही बोलता है, संस्कृत ही सुनता है। इस प्रकार, उसके आसपास के वातावरण को संस्कृतमय कर दिया जाता है। विद्यार्थी पहले चार वाक्य बोलता है, फिर एक अनुच्छेद और फिर धीरे-धीरे इस भाषा में दक्षता प्राप्त कर लेता है।

सुगम पद्धति या निर्बाध विधि की विशेषताएँ

इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

1. इस विधि से संस्कृत शिक्षण विद्यार्थियों में भाषा विशेष के प्रति रुचि उत्पन्न करता है।
2. यह विधि छात्र को शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय बनाए रखती है।
3. इस विधि में बोलने पर अत्यधिक बल प्रदान किया जाता है इसलिए इसमें उच्चारण की शुद्धता का अभ्यास होता है।
4. इस विधि से शिक्षण करने पर छात्रों को सुनकर अर्थ को समझने का अभ्यास करने का पर्याप्त अवसर मिलता है। अभ्यास के कारण श्रवण कौशल का भी पर्याप्त विकास होता है।

सुगम पद्धति या निर्बाध विधि की सीमाएँ

इस विधि की निम्नलिखित सीमाएँ हैं-

1. इस विधि की उपयोगिता केवल मेधावी छात्रों के लिए मानी गई है।
2. इंग्लैंड की शिक्षा परिषद में तो इस विधि की सफलता के संबंध में जो आशंका व्यक्त की गई थी उसके अनुसार तो यह विधि मेधावी छात्रों के लिए भी उपयोगी होगी कि नहीं, यह संदेहास्पद है।
3. यह विधि समय साध्य है।
4. इस विधि में प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रुप से ध्यान देना पड़ेगा जो कि विद्यालय की समय सारणी को ध्यान में रखते हुए संभव नहीं है।
5. संस्कृत अध्यापकों का मातृभाषा में उपयोग करने की योग्यता का न होना भी इस विधि की एक सीमा है।

अभ्यास प्रश्न

10. भारत में पाठ्यपुस्तक विधि के प्रबल समर्थक कौन थे?
11. 'ग्राह्य मूल्य' से आप क्या समझते हैं?

12. पाठ्यपुस्तक विधि द्वारा संस्कृता शिक्षण करने के लिए ईश्वरा चंद विद्यासागरा ने किस पुस्तक की रचना की थी।
13. सुगम या निर्बाध विधि का प्रयोग कहाँ अत्यंत सफल हुआ था?
14. भारत में सुगम अथवा निर्बाध विधि के जनक कौन माने जाते हैं?
15. आंग्ल भाषा के प्रचार-प्रसार में पाठ्य्पुस्तकों की महती भूमिका निभाई। (सत्य/असत्य)।
16. 'सुबोध संस्कृतम्' पुस्तक एस० डी० सातवेलकर की रचना है। (सत्य/असत्य)।
17. 'पाठ्यपुस्तक विधि' से शिक्षण में विद्यार्थी के शब्द-भंडार में वृद्धि होती है। (सत्य/असत्य)।
18. निर्बाध विधि में मौखिक कार्य को अति अल्प मात्रा में स्थान दिया जाता है। (सत्य/असत्य)
19. 'न्यु एप्रोच टू संस्कृत' में वी० पी० बोकिल द्वारा लिखित पुस्तक का नाम है। (सत्य/असत्य)

1.3.4 व्याकरण-अनुवाद विधि

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इस विधि से शिक्षण करने के लिए व्याकरण एवं अनुवाद पद्धति का सहारा लिया जाता है। जिस भाषा का शिक्षण करना होता है उस भाषा के व्याकरण का प्रयोग किया जाता है। अनुवाद में दो भाषाओं की आवश्यकता होती है। एक को स्रोत भाषा कहते हैं तथा दूसरे को लक्ष्य भाषा। जिस भाषा के पाठ का अनुवाद किया जाता है उसे स्रोत भाषा एवं जिस भाषा में अनुवाद किया जाता है उसे लक्ष्य भाषा कहते हैं। जिस भाषा का शिक्षण करना होता है उस भाषा से विद्यार्थी की मातृभाषा एवं विद्यार्थी की मातृभाषा से जिसा भाषा का शिक्षण किया जा रहा है, उस भाषा में अनुवाद किया जाता है और करवाया जाता है। संस्कृत भाषा के संदर्भ में संस्कृत व्याकरण की सहायता ली जाती है। संस्कृत भाषा से हिंदी या विद्यार्थी की मातृभाषा में तथा हिंदी या विद्यार्थी की मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद किया जाता है एवं करवाया जाता है। इस विधि का भारत वर्ष में पहली बार प्रयोग डॉक्टर रामकृष्ण गोपाल भंडारकर ने किया था। उनके सम्मान में इसे डॉक्टर भंडारकर विधि भी कहा जा सकता है। डॉक्टर भंडारकर ने संस्कृत भाषा की दो पुस्तकें तैयार की थी। इन पुस्तकों में उन्होंने व्याकरण- अनुवाद पद्धति का अनुसरण किया था। कालांतर में वामन शिवराम आप्टे, मोरेश्वर रामचंद्र काले आदि विद्वानों ने भी इस पद्धति पर आधारित संस्कृत शिक्षण की पुस्तकों का विकास किया। इस पद्धति में विद्यार्थियों को पहले व्याकरण का ज्ञान कराया जाता है। फिर व्याकराण के नियमों के अभ्यास के लिए अनुवाद एवं अन्य अभ्यास कार्यों द्वारा संस्कृत भाषा का ज्ञान प्रदान किया जाता है। इस पद्धति कि विद्वानों द्वारा अक्सर इस बात को लेकर आलोचना की जाती है कि यह प्रारंभ में ही विद्यार्थियों को व्याकरण के भारी-भरकम नियमों को पढ़ाकर उनमेंनीरसताको जन्म देता है लेकिन यहा बात सत्य नहीं है। यह पद्धति मुख्यतः संस्कृत भाषा को छात्रों के समक्ष मनोवैज्ञानिक एवं सरल ढंग से प्रस्तुत करने के लिए समर्पित है। यह विधि विद्यार्थियों को व्याकरण के भारी-भरकम नियमों को रटवाने के बजाय उसके सरल नियमों को आधुनिकतम ढंग से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत कर उनके अवबोध शक्ति को जागृत करने पर बल देता है। इन नियमों का बोध हो जाने पर संस्कृत का हिंदी अथवा छात्र की मातृभाषा में तथा हिंदी अथवा छात्र की मातृभाषा से संस्कृत में अनुवाद के माध्यम से छात्रों को संस्कृत साहित्य का परिचय कराया जाता है।

व्याकरण-अनुवाद विधि की विशेषताएँ - इस विधि की निम्न्लिखित विशेषताएँ हैं:

i. स्वाध्याय के माध्यम से संस्कृत का ज्ञान प्राप्त करने वाले छात्रों के लिए यह विधि बहुत उपयोगी है

ii. यह विधि आधुनिक विद्यालयों के अनुकूल है

व्याकरण-अनुवाद विधि की सीमाएँ – इस विधि की सबसे बड़ी सीमा यह है कि यह छात्रों में नीरसता उत्पन्न करती है।

1.3.5 वार्तालाप विधि या संवाद विधि या संप्रेषणात्मक विधि

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है इस विधि में दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य संवाद के माध्यम से शिक्षा दी जाती है। पाठ को वार्तालाप के रुप में तैयार किया जाता है। छात्र उसका अध्ययन करते हैं, उसे समझते हैं तथा उसका अभिनय करते हैं। इस प्रकार छात्र उस भाषा में अपने भावों की अभिव्यक्ति करना सीख लेते हैं, विभिन्न अवसरों पर बोली जाने वाली भाषा के प्रयोग में दक्षता प्राप्त कर लेते हैं, ध्वनि के विविध तत्व, यथा- अनुतान, स्वराघात आदि का प्रयोग भी सीख लेते हैं। इसके साथ ही साथ भाषा के साथ आनन अभिव्यक्ति का प्रयोग भी विद्यार्थी सीख लेता है। इस विधि से संस्कृत शिक्षण करने के लिए विशेष प्रकार के पाठ्यपुस्तकों का निर्माण करना पड़ता है जिनमें अभिनय किए जाने योग्य संवाद का प्रचुर मात्रा में समावेश रहता है। इस प्रकार के पाठ का एक उदाहरण निम्नवत है:

अथ वार्तलापम्

विद्यालयस्य संस्कृतिमहोत्सवः

मोहनः - भो मित्र ! कुतः आगच्छसि?

सोहनः - विद्यालयात् आगच्छन् अस्मि।

मोहनः - इदानीं षडवादने?

सोहनः - आम, अद्य विद्यालये कार्यक्रमः आसीत्। अतः, अद्य विलम्बो जातः।

मोहनः - कः कार्यक्रमः आसीत् विद्यालये?

सोहनः - विद्यालये संस्कृतिमहोत्सवः आसीत्, महोत्सवे अस्मिन बहवः जनाः आगतवन्तः आसन्।

मोहनः - वाह्य जनाः अपि विद्यालये अद्य गतवन्तः किम्?

सोहनः - आम्, अद्य समेषां कृते आयोजनम् आसीत्, अहमपि प्रतिभागी रुपेण तत्र आसम्।

मोहनः - त्वं तु वाचालः नास्ति चेत् कथं तत्र प्रतिभागिता गृहीतवान्।

सोहन: - आम्, अहं वाचालः नास्मि परं गुरुमहोदयानाम् आदेशः आसीत्। यत् सर्वे छात्रा: महोत्सवे भागं ग्रहिष्यन्ति।

मोहनः - महोत्सवे का का प्रतियोगिता आयोजिता आसीत्।

सोहनः - मित्र ! वाद-विवादः, सम्भाषणं, काव्यपाठः, निबंधलेखनादि

प्रतियोगिता आयोजिता आसीत्।

मोहनः - तर्हि त्वं कस्यां प्रतोयोगितायामासीत्?

सोहनः – अहं तु सम्भाषण प्रतियोगितायामासम् एवंच प्रथमंस्थानमपि अप्राप्नुवम्।

मोहनः - सम्भाषणस्य कः विषयः आसीत्?

सोहनः - "भारतस्य संस्कृति-सभ्यता च" अयमेव विषयः आसीत्।

मोहनः - बहुशोभनम्।

सोहनः - धन्यवादः।

मोहनः - धन्यवादेन कार्यं न चलिष्यति, चलतु मिष्ठानं खादावः।

सोहनः - अवश्यम्। चलतु पुरतः एव मिष्ठान्न भंडार: अस्ति।

इति वार्तालापः

पाठ के अंत में या बीच-बीच में शिक्षक छात्र से प्रश्न पूछता रहता है जिससे शिक्षक एवं छात्रों के मध्य वार्तालाप होता रहता है। पाठ में, व्याकरण के विभिन्न नियमों के हुए प्रयोग की व्याख्या, शिक्षक पाठ के अंत में वार्तालाप के माध्यम से ही करता है। इस प्रकार, छात्रों को व्याकरण के नियमों की भी जानकारी हो जाती है।

वार्तलाप विधि या संवाद विधि या संप्रेषणात्मक विधि की विशेषताएँ

इस विधि की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं-

i. इस विधि से शिक्षण करने पर छात्रों को मौखिक अभिव्यक्ति के पर्याप्त अवसर मिलते हैं।
ii. विद्यार्थियों को उच्चारण की शुद्धता के अभ्यास का पर्याप्त अवसर मिलता है।
iii. विद्यार्थियों को स्वरों के उचित प्रयोग, अनुत्तान, स्वराघात आदि का भी ज्ञान हो जाता है।

वार्तालाप विधि या संवाद विधि या संप्रेषणात्मक विधि की सीमाएँ

इस विधि की निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

i. इस विधि से शिक्षण करने पर विद्यार्थियों में लेखन एवं पठन कौशल का विकास नहीं हो पाता है; तथा
ii. ऐसे प्रशिक्षित शिक्षक, जो कि संस्कृत में वार्तलाप कर सके, की कमी भी इसा विधिकी एक सीमा है।

1.3.6 आगमन-निगमन विधि

संस्कृत में व्याकरण शिक्षण की सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रचलित विधि आगमन-निगमन विधि है। वास्तव में यह दो विधियों आगमन विधि एवं निगमन विधि का समुच्चय है। इन दोनों विधियों का अलग-अलग एवं

संयुक्त रूप में भी प्रयोग किया जाता है। आगमन विधि में पहले उदाहरणों को बताया जाता है फिर तत्संबंधी व्याकरण के नियमों की शिक्षा दी जाती है। इसके विपरीत निगमन विधि में पाली व्याकरण के नियमों को बताया जाता है फिर उससे संबंधित उदाहरण दिए जाते हैं और उन नियमों का अभ्यास कराया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह भी कहा जा सकता है कि निगमन विधि आगमन विधि के ठीक विपरीत विधि है। जब इन दोनों विधियों का साथ-साथ प्रयोग किया जाता है तब आगमन विधि द्वारा नियमों को प्रतिपादित कर निगमन विधि द्वारा नियमों का अभ्यास कराया जाता है। अभ्यास के पश्चात उन नियमों की पुष्टि उदाहरण द्वारा की जाती है। उदाहरणार्थ, यदि छात्रों को संधि पढ़या जा रहा है तो पहले संधि का नियम बताया जाता है फिर उसके बाद छात्रों से संधि का अभ्यास कराया जाता है। तत्पश्चात कुछ शब्द देकर संधि के भेद पहचानने के लिए कहा जाता है।

- **आगमन-निगमन विधि की विशेषताएँ -** आगमन विधि का प्रयोग शिक्षण को रुचिकर बना देता है।
- **निगमन विधि की सीमाएँ -** निगमन विधि का पृथक प्रयोग शिक्षण को नीरस एवं अमनोवैज्ञानिक बना देता है।

संस्कृत शिक्षण की उपरोक्त वर्णित विधियों के इतर एक श्रव्य-भाषिक विधि की चर्चा की जाती है लेकिन मेरे विचारानुसार यह संवाद विधि का ही रूप है। इन विधियों के विवेचन के उपरांत यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कोई भी विधि पूर्ण नहीं है। यह सभी अपर्याप्त है। अतः, इन सभी विधियों को मिलाकर एक मिश्र विधि का प्रयोग संस्कृत शिक्षण के लिए किया जाना चाहिए। इस विधि का एकमात्र उद्देश्य संस्कृत भाषा के सभी पक्षों का विकास करना होना चाहिए

अभ्यास प्रश्न

20. संस्कृत शिक्षण के लिए व्याकरण अनुवाद विधि का प्रयोग भारता वर्ष में पहली बार किसने किया?
21. वार्तालाप विधि को अन्य किन नामों से जाना जाता है?
22. व्याकरण-अनुवाद विधि को डॉ० भंडारकर विधि भी कहा जाता है (सत्य/असत्य)।
23. निगमन विधि का प्रयोग शिक्षण को रुचिकर बना देता है (सत्य/असत्य)।
24. संस्कृत शिक्षण की प्रत्येक विधि अपूर्णा है। (सत्य/असत्य)
25. आगमन विधि का प्रयोग शिक्षण को नीरस बना देता है। (सत्य/असत्य)
26. प्रभावी संस्कृत शिक्षण के लिए सभी विधियों का मिश्रित प्रयोग किया जाना चाहिए। (सत्य/असत्य)

1.4 सारांश

प्रस्तुत इकाई में संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों का वर्णन किया गया है। इकाई के आरंभ में संस्कृत शिक्षण की पारंपरिक विधियों, जिनका प्रचलन गुरुकुलों में बहुतायत में होता था, का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। इन विधियों में मौखिक विधि, वाद-विवाद विधि, भाषण विधि, सूत्र विधि, मॉनिटरिंग विधि मॉनिटोरियल पद्धति को स्थान दिया गया है। हालाँकि ये अब बहुत अधिक प्रचलन में नहीं है लेकिन कुछ लोग अभी भी आवश्यकता पड़ने पर इसका प्रयोग करते हैं। इसके बाद संस्कृत शिक्षण हेतु महत्वपूर्ण विधियों यथा व्याकरण-अनुवाद विधि, वार्तालाप विधि, पाठ्यपुस्तक विधि, आदि की सारगर्भित चर्चा की गई है। इन विधियों के अध्ययन से प्रशिक्षु शिक्षक को संस्कृत शिक्षण के लिए किस विधि का प्रयोग करना है इसका निर्णय करने में सहायता मिलती है। इकाई के अंत में इस बात की भी चर्चा की गई है कि संस्कृत शिक्षण की कोई भी एक विधि पूर्ण नहीं है। अतः, शिक्षक को विभिन्न विधियों के मिश्रित रूप का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार, यह इकाई संस्कृत शिक्षण के विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को संस्कृत शिक्षण विधियों की सारगर्भित जानकारी प्रस्तुत करता है।

1.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. सत्य
2. असत्य
3. असत्य
4. सत्य
5. सत्य
6. मिलिंदपनहो, नागसेन
7. सूत्र विधि
8. नैतिक
9. पाणिनी , अष्टाध्यायी
10. डॉ० वैस्ट
11. विद्यार्थी को अपने पाठ्यक्रम को अपूर्ण छोड़ने पर प्राप्त होनेवाले लाभ को ग्राह्यमूल्य कहते हैं।
12. संस्कृत पाठ्यपुस्तक
13. परसा विद्यालय में ग्रीक एवं लैटिन पढ़ाने के लिए इसका प्रयोगा किया गया था। वह प्रयोग बहुत सफल हुआ था।
14. बी० पी० बोकिल
15. सत्य
16. असत्य
17. सत्य

18. असत्य
19. सत्य
20. डॉ० रामकृष्ण भंडारकर
21. संवाद विधि या संप्रेषणात्मक विधि
22. सत्य
23. असत्य
24. सत्य
25. असत्य
26. सत्य

1.7 संदर्भ एवं उपयोगी ग्रंथ

1. आप्टे, डी० जी० (1960). टीचिंग ऑफा संस्कृत इन सेकेण्ड्री स्कूल्स, आचार्य बुक डिपो, बड़ोदा।
2. चौबे, नारायाण विजय, (1985). संस्कृत शिक्षण विधि, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान।
3. त्रिपाठी, राधाबल्लभ (1999). संस्कृत साहित्य, 20वीं शताब्दी, राष्ट्रीय-संस्कृत-संस्थानम्, नई दिल्ली।
4. बोकिल, वी० पी० (1956). ए न्यू एप्रोच टू संस्कृत, चित्रशाला प्रकाशन, पूना।
5. मनुस्मृति, अध्याय 2, श्लोक 70, 71, 72।
6. मित्तल, संतोष (2000). संस्कृत शिक्षण, आर० लाल० बुक डिपो, मेरठ।
7. राउस ऐण्ड एप्पलेटन, (n.d.). लैटिन ऑन द डाइरेक्ट मेथड|
8. शर्मा, देवीदत्त (n.d.) संस्कृत का ऐतिहासिक एवं संरचनात्मक परिचय, हरियाणा ग्रंथ अकादमी।

1.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. संस्कृत शिक्षण की विभिन्न विधियों को सूचीबद्ध करें।
2. संस्कृत शिक्षण की पारंपरिक विधियों पर एक लघु निबंध लिखें।
3. संस्कृत शिक्षण के वार्तालाप विधि की संक्षिप्त चर्चा करें तथा वार्तालाप का कम से कम 20 वाक्यों में एक उदाहरण दें।
4. अपने द्वारा दिए गए वार्तालाप के उदाहरण में प्रयुक्त व्याकरण के दो नियमों की व्याख्या करें।
5. संस्कृत शिक्षण के पाठ्य पुस्तक विधि की विशेषताओं एवं सीमाओं का उल्लेख करें।

6. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें:
    i. पाठ्यपुस्तक विधि
    ii. सुगम अथवा निर्बाध विधि
    iii. आगमन-निगमन विधि
    iv. व्याकरण-अनुवाद विधि
7. पाठ्यपुस्तक विधि से संस्कृत शिक्षण करने के लिए निर्मित पुस्तकों, जिनका वर्णन इस इकाई में किया गया है, में से किसी एक के विशेषताओं का वर्णन करें।
8. व्याकरण-अनुवाद विधि पर आधारित एक संस्कृत पाठ योजना का निर्माण करें।
9. संस्कृत व्याकरण शिक्षण के लिए आगमन-निगमन विधि पर आधारित एक पाठ योजना का निर्माण करें।
10. संस्कृत शिक्षण के लिए सुगम पद्धति या निर्बाध विधि पर आधारित एक पाठ योजना के लिए निर्माण करें।

इकाई 2- भाषा एवं साहित्य का संबंध तथा संस्कृत भाषा शिक्षण में संस्कृत साहित्य की भूमिका

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 साहित्य का अर्थ
    2.3.1 साहित्य की अवधारणा
    2.3.2 साहित्य का वास्तविक स्वरूप
2.4 भाषा एवं साहित्य का सबंध
    2.4.1 भाषा का अभिप्राय एवं परिभाषा
    2.4.2 संस्कृत भाषा और साहित्य
    2.4.3 भारत की सांस्कृतिक भाषा
    2.4.4 संस्कृत साहित्य
2.5 भाषा एवं साहित्य में अन्तर
    2.5.1 संस्कृत साहित्य का परिचय
    2.5.2 भाषा अध्ययन
    2.5.3 संस्कृत भाषा का परिचय
2.6 भाषा एवं साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से सृजनात्मकता एवं जीवन कौशलों का विकास
    2.6.1 भाषा एवं साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से सृजनात्मकता एवं कौशलों का विकास
2.7 सारांश
2.8 शब्दावली
2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

"ध्यान्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है।"- स्वीट

भाषा सार्थक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके द्ववारा इसके प्रयोक्ता या श्रोता आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते है। प्रायः विश्व में पाए जाने वाले सभी जड़ और चेतन प्राणियों के भावाभिव्यक्ति के सभी साधनों को सामान्य रूप से भाषा कह दिया जाता है; किन्तु भाषा विज्ञान में जिस भाषा को ग्रहण किया जाता है वह सांकेतिक आदि से भिन्न मानवीय व्यक्त वाणी है।

2.2 उद्देश्य

किसी भाषा के वाचिक और लिखित (शास्त्रसमूह) को साहित्य कह सकते हैं। दुनिया में सबसे पुराना वाचिक साहित्य हमें आदिवासी भाषाओं में मिलता है। इस दृष्टि से आदिवासीसाहित्य सभी साहित्य का मूल स्रोत है।
भारत का संस्कृत साहित्य ऋग्वेद से आरम्भ होता है। व्यास, वाल्मीकि जैसे पौराणिक ऋषियों ने महाभारत एवं रामायण जैसे महाकाव्यों की रचना की। भास, कालिदास एवं अन्य कवियों ने संस्कृत में नाटक लिखे।

भक्ति साहित्य में अवधी में गोस्वामी तुलसीदास, ब्रज भाषा में सूरदास, मारवाड़ी में मीराबाई, खड़ीबोली में कबीर, रसखान, मैथिली में विद्यापति आदि प्रमुख हैं। अवधी के प्रमुख कवियों में रमई काका सुप्रसिद्ध कवि हैं। हिन्दी साहित्य में कथा, कहानी और उपन्यास के लेखन में प्रेमचन्द का महान योगदान है। ग्रीक साहित्य में होमर के इलियड और ऑडसी विश्वप्रसिद्ध हैं। अंग्रेज़ी साहित्य में शेक्स्पियर का नाम कौन नहीं जानता।

संस्कृत भाषा में ही हमारी संस्कृति के तत्व विद्यमान हैं। अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण में वह केवल संस्कृत का ही अध्ययन कर पाता है। उसमें सन्निहित संस्कृति को नहीं ग्रहण कर पाता। वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण में उसके अध्ययन का एक विकल्प यह भी होती है कि उस भाषा में निहित संस्कृतिपूर्ण परिचय करे।

इस इकाई से आप जानेंगे-

- साहित्य की अवधारणा
- साहित्य की परिभाषा
- भाषा का अभिप्राय एवं परिभाषा
- संस्कृतभाषाऔरसाहित्य
- भारतकीसांस्कृतिकभाषा

- भाषा एवं साहित्य में अन्तर
- भाषा एवं साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से सृजनात्मकता एवं जीवन कौशलों का विकास
- भाषा एवं साहित्य से जुड़े अन्य तथ्य

2.3 साहित्य का अर्थ

साहित्य का सहज अर्थ है अपनी सभ्यता-संस्कृति,अपने परिवेश को अपने शब्दों में अपने दृष्टिकोण के साथ पाठकों, श्रोताओं के मध्य प्रस्तुत करना, पर यदि दृष्टिकोण,शब्द कृत्रिम आधुनिकता या आवेश से बाधित हो तो उसे साहित्य का दर्जा नहीं दे सकते। साहित्य, जो सोचने पर मजबूर कर दे,उत्कंठा से भर दे। जब तक साहित्य के वास्तविक रूप का यथार्थ ज्ञान नहीं होगा, तब तक इस बात की उचित मीमांसा एन हो सकेगी कि उसके विषय में अब तक हिन्दी संसार के कवियों और महाकवियों ने समुचित पथ अवलंबन किया या नहीं और साहित्य विषयक अपने कर्तव्य को उसी रीति से पालन किया या नहीं, जो किसी साहित्य को समुन्न्त और उपयोगी बनाने में सहायक होती है।

2.3.1. साहित्य की अवधारणा

साहित्य शब्द को परिभाषित करना कठिन है। जैसे पानी की आकृति नहीं, जिस साँचे में डालो वह ढ़ल जाताहै, उसी तरहका तरल है यहशब्द। कविता, कहानी, नाटक, निबंध, रिपोर्ताज, जीवनी, रेखाचित्र, यात्रा-वृतांत, समालोचना बहुत से साँचेहैं। परिभाषा इसलिये भी कठिन हो जाती है कि धर्म,राजनीति,समाज, समसामयिक आलेखों, भूगोल, विज्ञान जैसे विषयों पर जो लेखन है उसकी क्या श्रेणी हो? क्या साहित्य की परिधि इतनी व्यापक है?

संस्कृत में एक शब्द है वांड्मय। भाषा के माध्यम से जो कुछभी कहा गया, वह वांड्मय है। साहित्य के संदर्भ में संस्कृत कीइस परिभाषा में मर्म है – ‘‘शब्दार्थो सहितौ काव्यम्’’।

यहाँ शब्दऔर अर्थ के साथ भाव की आवश्यकता मानी गयी है। इसीपरिभाषा को व्यापक करते हुए संस्कृत के ही एक आचर्यविश्वनाथ महापात्र नें ‘‘साहित्य दर्पण’’ नामक ग्रंथ लिख कर ‘‘साहित्य’’ शब्द को व्यवहार में प्रचलितकिया। संस्कृत के हीएक आचार्य कुंतक व्याख्या करते हैं कि जब शब्द और अर्थ केबीच सुन्दरता के लिये स्पर्धा लगी हो, तो साहित्य कीसृष्टि होती है। वहभावविहीन रचना जो छंद और मीटर के अनुमापों मेंशतप्रतिशत सही भी बैठती हो, वैसी ही कांतिहीन हैं जैसेअपरान्ह में जुगनू। अर्थात, भाव किसी सृजन को वह गहरायीप्रदान करते हैं जो किसी रचना को साहित्य की परिधि में लाताहै। कितनी सादगी से निदा फ़ाज़ली कह जाते हैं

मैं रोया परदेस में, भीगा माँ का प्यार
दुख नें दुख से बात की, बिन चिट्ठी बिन तार।

रामधारी सिंह ‘दिनकर’ की निम्नलिखित अमर पंक्तियाँ, साहित्य के इस आयाम का अनुपम उदाहरण हैं:

आरती लिये तू किसे ढूंढता है मूरख,
मन्दिरों, राजप्रासादों में, तहखानों में?
देवता कहीं सड़कों पर गिट्टी तोड़ रहे,
देवता मिलेंगे खेतों में, खलिहानों में।
फावड़े और हल राजदण्ड बनने को हैं,
धूसरता सोने से श्रृंगार सजाती है;
दो राह,समय के रथ का घर्घर-नाद सुनो,
सिंहासन खाली करो कि जनता आती है

संक्षेप में ‘‘साहित्य’’ शब्द, अर्थ और भावनाओं की वह त्रिवेणीहै जो जनहित की धारा के साथ उच्चादर्शों की दिशा में प्रवाहित है।

2.3.2. साहित्य का वास्तविक स्वरूप

साहित्य का वास्तविक रूप देखते हैं कि साहित्य किसे कहते है। इस कोटि में कौन सा साहित्य माना जा सकता है। वैसे तो लघु कथा, कहानी, उपन्यास, आत्म चरित्र, निबन्ध आदि सभी वाँगमय या साहित्य के अंतर्गत आते हैं, किन्तु वास्तविक साहित्य के विद्वानों ने 3 भेद किये हैं -

i. क्षणिक
ii. अक्षर
iii. प्रासादिक

अन्य प्रकार का लिखित ब्योरा (धोबी की डायरी, हिसाब की बही) आदि साहित्य नहीं कहलाये जा कहते।

जिस वाँगमय में सत्यं, शिवं, सुन्दरं की मात्रा समान तथा पूर्ण रूप से निहित होती है वही साहित्य साहित्य की कोटि में आ सकता है।

क्षणिक वाँगमय में आकर्षण होता हैं। उसमें सुंदरम् का गुण विशेष रूप से व्याप्त रहता है, इसीलिए उसमें आकर्षण होते हुए उसका अस्तित्व भी क्षणिक रहता है। इस प्रकार का साहित्य समाज में संकल्प-विकल्प की प्रवृत्ति निर्माण करके चंचलत्व उत्पन्न करता है। अतएव साहित्यिक दृष्टि से इस प्रकार के साहित्य का कोई मूल्य नहीं हैं।

वास्तविक साहित्य वही हैं जो समाज को उन्नत अवस्था में ले जावे। इस प्रकार का साहित्य अक्षर वाँगमय हो सकता है। अक्षर वाँगमय आदर्श होता है। आदर्श होने के कारण ही वह अक्षर, अमिट या

स्थिर कहलाता है। जिस वाँगमय में सत्यता का गुण अधिकाँश में हो, वही अक्षर या आदर्श साहित्य कहलाता है। जिस साहित्य का प्रभाव पाठक पर एक मार्ग प्रदर्शन के रूप में कार्य करता है, तथा अनेक भ्रमोत्पादक आकर्षक साधनों से पाठक सत्य से दूर हो जाता हैं, ऐसी अवस्था में नायक के सहारे, उसके चरित्र चित्रण के आधार पर वह सत्यता की खोज करके उसके अधिक समकक्ष पहुँचने का प्रयास करता है। इसे हम उच्चतर साहित्य की कोटि में रख सकते हैं।

इस प्रकार के साहित्य के भण्डार से पशुता से मानवता तथा मानवता से देवता के कोटि तक पहुँचने की क्षमता प्रदान करने का समर्थ इसी प्रकार के साहित्य में हो सकती है।

इसके अतिरिक्त एक प्रासादिक वाँगमय होता है जिसमें यह दैवी शक्ति रहती है कि पाठक को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करके उसको उन्नत अवस्था में पहुँचाती है। इसे हम उच्चतम साहित्य कहते हैं।

पाठक स्वयं का विकास जिन अनुभव सिद्ध, दैवी स्फूर्ति से सृजित वाँगमय को आधारित करके अपना जीवन लक्ष्य सिद्ध करता है, वही है प्रासादिक वाँगमय। जैसे-मीरा, कबीर, तुकाराम, एकनाथ आदि अशिक्षित किन्तु सिद्ध-सन्तों का साहित्य मानव को बिना प्रयास के ही साधक से सिद्ध बना देता है। इसी प्रकार का आध्यात्मिक साहित्य अन्य, महापुरुषों का प्रासादिक साहित्य कहलाता है।

किन्तु आधुनिक युग में प्रायः देखने में यह आता है कि साहित्यक केवल ऐसे ही साहित्य का सृजन करते हैं जैसी लोगों की अभिरुचि होती है। यह केवल धनोपार्जन की दृष्टि से हितकर हो सकता है, किन्तु वास्तविक सच्चे साहित्यकारों का कर्तव्य यह नहीं कहलाता कि जैसी रुचि हो वैसा साहित्य निर्माण करें। यह तो इसी प्रकार हुआ कि जिस प्रकार रोगी जो चाहे वही दवा डॉक्टर देवें किन्तु प्रायः ऐसा नहीं हुआ करता। डॉक्टर जो चाहता है वही दवा रोगी को दी जाती है।

उसी प्रकार साहित्यकारों को जिस प्रकार का समाज निर्माण करना है उसी प्रकार का साहित्य सृजन उन्हें करना चाहिये।

एक ही बात को कलात्मक पूर्ण ढंग से प्रदर्शित करना यह चतुर साहित्य कलाकार की चतुरता है।

गूढ़ विषय को सरलता से प्रतिपादन करके पाठक के हृदय में बैठने की कला कुछ इने-गिने व्यक्तियों को ही साध्य होती है।

कला पूर्ण तथा रसप्लावन युक्त साहित्य का तर-तम रूप ही मानवीय समाज का भविष्य उज्ज्वल तथा उच्च धरातल पर पहुँचने का रहस्य हो सकता है।

हमें उच्च कोटि के साहित्य से ही प्रेम करना चाहिये, न कि केवल मनोरंजन के लिये लघुकथा व उपन्यास पढ़ कर अपना दिल बहला लिया।

इस प्रकार के साहित्य से अर्थ तथा समय की हानि के अतिरिक्त बहुमोल जीवन का भी नाश होने की पूर्ण संभावना होती है।

2.4 भाषा एवं साहित्य का सबंध

भाषा और साहित्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। भाषा है तो साहित्य है और जब साहित्य होता है तब भाषा स्वतः ही विकासमान होती है। भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त करते है

और इसके लिये हम वाचिक ध्वनियों का उपयोग करते हैं। भाषा मुख से उच्चारित होने वाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह है जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है। किसी भाषा की सभी ध्वनियों के प्रतिनिधि स्वन एक व्यवस्था में मिलकर एक सम्पूर्ण भाषा की अवधारणा बनाते हैं। व्यक्त नाद की वह समष्टि जिसकी सहायता से किसी एक समाज या देश के लोग अपने मनोगत भाव तथा विचार एक दूसरे पर प्रकट करते हैं। मुख से उच्चारित होने वाले शब्दों और वाक्यों आदि का वह समूह जिनके द्वारा मन की बात बतलाई जाती है।

इस समय सारे संसार में प्रायः हजारों प्रकार की भाषाएँ बोली जाती हैं जो साधारणतः अपने भाषियों को छोड़ और लोगों की समझ में नहीं आतीं। अपने समाज या देश की भाषा तो लोग बचपन से ही अभ्यस्त होने के कारण अच्छी तरह जानते हैं, पर दूसरे देशों या समाजों की भाषा बिना अच्छी तरह सीखे नहीं आती। भाषा विज्ञान के ज्ञाताओं ने भाषाओं के आर्य, सेमेटिक, हेमेटिक आदि कई वर्ग स्थापित करके उनमें से प्रत्येक की अलग अलग शाखाएँ स्थापित की हैं और उन शाखा कों के भी अनेक वर्ग उपवर्ग बनाकर उनमें बड़ी बड़ी भाषाओं और उनके प्रांतीय भेदों, उपभाषाओं अथवा बोलियों को रखा है। जैसे हमारी हिंदीभाषा भाषा विज्ञान की दृष्टि से भाषाओं के आर्यवर्ग की भारतीय आर्य शाखा की एक भाषा है; और ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेल खंडी आदि इसकी उपभाषाएँ या बोलियाँ हैं। पास पास बोली जाने वाली अनेक उपभाषाओं या बोलियों में बहुत कुछ साम्य होता है; और उसी साम्य के आधार पर उनके वर्ग या कुल स्थापित किए जाते हैं। यही बात बड़ी बड़ी भाषाओं में भी है जिनका पारस्परिक साम्य उतना अधिक तो नहीं, पर फिर भी बहुत कुछ होता है। संसार की सभी बातों की भाँति भाषा का भी मनुष्य की आदिम अवस्था के अव्यक्त नाद से अब तक बराबर विकास होता आया है; और इसी विकास के कारण भाषाओं में सदा परिवर्तन होता रहता है। भारतीय आर्यों की वैदिक भाषा से संस्कृत और प्राकृतों का, प्राकृतों से अपभ्रंशों का और अपभ्रंशों से आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास हुआ है।

2.4.1. भाषा का अभिप्राय एवं परिभाषा

भाषा कोई अमूर्त संकल्पना नहीं अपितु सामाजिक व्यवहार की वस्तु है। समाज में इसके प्रयोग में आने से कई रूप उभरने लगते हैं, जिससे भाषा भेद या भाषा प्रकार झलकने लगते हैं। वास्तव में भाषा अपने आप में समरूपी होती है, किंतु प्रयोग में आने से वह विषम रूपी हो जाती है। भाषा की यह समरूपता प्रारंभ में रहती है, किंतु इसके विकास के समय इसे विभिन्न संदर्भों और स्थितियों से गुजरना पड़ता है तो वह बाह्य रूप से विषम रूप कारण करने लगती है, हांलाकि आंतरिक संरचना की से यह समरूपी ही होती है। इसका कारण यह है कि मनुष्य का मस्तिष्क इतना सृजनशील है कि वह विभिन्न संदर्भों, स्थितियों, प्रसंगों, प्रयोजनों और उद्देश्यों में अत्यधिक भाषा-रूपों का प्रस्पुफटन करता है। यही विभिन्न भाषा-रूप अपने आप में वैविध्यपूर्ण होते हैं।

यह विविधता और विषमता भाषा के विकास-क्रम के अंतर्गत किसी काल-विशेष, स्थान-विशेष, व्यक्ति-विशेष, प्रयुक्ति-विशेष आदि आयामों या संदर्भों में दिखाई देती है। कई बार भाषा-भाषी समुदायों का एक वर्ग किसी एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाकर बस जाता है तो उस स्थान पर कई भाषाओं का प्रयोग होने

लगता है। इससे व्यक्ति और समाज द्विभाषी अथवा बहुभाषी हो जाता है। इसी आधार पर यहाँ भाषा का विकास, भाषा के विविध प्रयोग और द्विभाषिकता अथवा बहुभाषिकता के परिप्रेक्ष्य में विवेचन किया जा रहा है।

भाषा को प्राचीन काल से ही परिभाषित करने की कोशिश की जाती रही है। इसकी कुछ मुख्य परिभाषाएं निम्नलिखित हैं-

- भाषा शब्द संस्कृत के भाष् धातु से बना है जिसका अर्थ है बोलना या कहना अर्थात् भाषा वह है जिसे बोला जाय।
- (प्लेटो ने सोफिस्ट में विचार और भाषा के संबंध में लिखते हुए कहा है कि विचार और भाषआ में थोड़ा ही अंतर है। विचार आत्मा की मूक या अध्वन्यात्मक बातचीत है पर वही जब ध्वन्यात्मक होकर होठों पर प्रकट होती है तो उसे भाषा की संज्ञा देते हैं।
- स्वीट के अनुसार ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।
- वेंद्रीय कहते हैं कि भाषा एक तरह का चिह्न है। चिह्न से आशय उन प्रतीकों से है जिनके द्वारा मानव अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक कई प्रकार के होते हैं जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्र ग्राह्य और स्पर्श ग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोत्रग्राह्य प्रतीक ही सर्वश्रेष्ठ है।
- ब्लाक तथा ट्रेगर- भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतिकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह सहयोग करता है।
- स्त्रुत्वा – भाषा यादृच्छिक भाष् प्रतीकों का तंत्र है जिसके द्वारा एक सामाजिक समूह के सदस्य सहयोग एवं संपर्क करते हैं।
- इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका - भाषा को यादृच्छिक भाष् प्रतिकों का तंत्र है जिसके द्वारा मानव प्राणि एक सामाजिक समूह के सदस्य और सांस्कृतिक साझीदार के रूप में एक सामाजिक समूह के सदस्य संपर्क एवं संप्रेषण करते हैं।
- ''भाषा यादृच्छिक वाचिक ध्वनि-संकेतों की वह पद्धति है, जिसके द्वारा मानव परम्परा विचारों का आदान-प्रदान करता है।''

स्पष्ट ही इस कथन में भाषा के लिए चार बातों पर ध्यान दिया गया है-

i. भाषा एक पद्धति है, यानी एक सुसम्बद्ध और सुव्यवस्थित योजना या संघटन है, जिसमें कर्ता, कर्म, क्रिया, आदि व्यवस्थिति रूप में आ सकते हैं।
ii. भाषा संकेतात्कम है अर्थात् इसमे जो ध्वनियाँ उच्चारित होती हैं, उनका किसी वस्तु या कार्य से सम्बन्ध होता है। ये ध्वनियाँ संकेतात्मक या प्रतीकात्मक होती हैं।
iii. भाषा वाचिक ध्वनि-संकेत है, अर्थात् मनुष्य अपनी वागिन्द्रिय की सहायता से संकेतों का उच्चारण करता है, वे ही भाषा के अंतर्गत आते हैं।

iv. भाषा यादृच्छिक संकेत है। यादृच्छिक से तात्पर्य है - ऐच्छिक, अर्थात् किसी भी विशेष ध्वनि का किसी विशेष अर्थ से मौलिक अथवा दार्शनिक सम्बन्ध नहीं होता। प्रत्येक भाषा में किसी विशेष ध्वनि को किसी विशेष अर्थ का वाचक 'मान लिया जाता' है। फिर वह उसी अर्थ के लिए रूढ़ हो जाता है। कहने का अर्थ यह है कि वह परम्परानुसार उसी अर्थ का वाचक हो जाता है। दूसरी भाषा में उस अर्थ का वाचक कोई दूसरा शब्द होगा।

हम व्यवहार में यह देखते हैं कि भाषा का सम्बन्ध एक व्यक्ति से लेकर सम्पूर्ण विश्व-सृष्टि तक है। व्यक्ति और समाज के बीच व्यवहार में आने वाली इस परम्परा से अर्जित सम्पत्ति के अनेक रूप हैं। समाज सापेक्षता भाषा के लिए अनिवार्य है, ठीक वैसे ही जैसे व्यक्ति सापेक्षता। और भाषा संकेतात्मक होती है अर्थात् वह एक 'प्रतीक-स्थिति' है। इसकी प्रतीकात्मक गतिविधि के चार प्रमुख संयोजक हैः दो व्यक्ति- एक वह जो संबोधित करता है, दूसरा वह जिसे संबोधित किया जाता है, तीसरी संकेतित वस्तु और चौथी-प्रतीकात्मक संवाहक जो संकेतित वस्तु की ओर प्रतिनिधि भंगिमा के साथ संकेत करता है।

2.4.2 संस्कृत भाषा और साहित्य

संस्कृत भाषा और साहित्य का विश्व में अपना एक विशिष्ट स्थान है। विश्व की समस्त प्राचीन भाषाओं और उनके साहित्य (वाङ्मय) में संस्कृत का ख़ास महत्व है। यह महत्व अनेक कारणों और दृष्टियों से है। भारत के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, अध्यात्मिक, दर्शनिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन एवं विकास के सोपानों की संपूर्ण व्याख्या संस्कृत वाङ्मय के माध्यम से आज उपलब्ध है।

2.4.3. भारत की सांस्कृतिक भाषा

सहस्राब्दियों से संस्कृत भाषा और इसके वाङ्मय की भारत में सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त रही है। भारत की यह सांस्कृतिक भाषा रही है। सहस्राब्दियों तक समग्र भारत को सांस्कृतिक और भावात्मक एकता में आबद्ध रखने को इस भाषा ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसी कारण भारतीय मनीषा ने इस भाषा को 'अमरभाषा' या 'देववाणी' के नाम से सम्मानित किया है।

साहित्य निर्माण

ऋग्वेद काल से लेकर आज तक इस भाषा के माध्यम से सभी प्रकार के वाङ्मय का निर्माण होता आ रहा है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी के छोर तक किसी न किसी रूप में संस्कृत का अध्ययन-अध्यापन अब तक होता चला आ रहा है। भारतीय संस्कृति और विचारधारा का माध्यम होकर भी यह भाषा अनेक दृष्टियों से धर्मनिरपेक्ष रही है। धार्मिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक और मानविकी आदि प्राय: समस्त प्रकार के वाङ्मय की रचना इस भाषा में हुई है।

ऋग्वेदसंहिता

ऋग्वेदसंहिता के कतिपय मंडलों की भाषा संस्कृत वाणी का सर्वप्राचीन उपलब्ध स्वरूप है। ऋग्वेदसंहिता इस भाषा का पुरातनतम ग्रंथ है। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऋग्वेदसंहिता केवल संस्कृत भाषा

का प्राचीनतम ग्रंथ नहीं है, -पितु वह आर्य जाति की संपूर्ण ग्रंथराशि में भी प्राचीनतम ग्रंथ है। दूसरे शब्दों में, समस्त विश्व वाङ्मय का वह (ऋक्संहिता) सबसे पुरातन उपलब्ध ग्रंथ है। दस मंडलों के इस ग्रंथ का द्वितीय से सप्तम मंडल तक का अंश प्राचीनतम और प्रथम तथा दशम मंडल अपेक्षाकृत अर्वाचीन है। ऋग्वेदकाल से लेकर आज तक उस भाषा की अखंड और अविच्छिन्न परंपरा चली आ रही है। ऋक्संहिता केवल भारतीय वाङ्मय की ही अमूल्य निधि नहीं है, वह समग्र आर्य जाति की, समस्त विश्व वाङ्मय की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विरासत है।

विश्व की प्राचीन प्रागैतिहासिक संस्कृतियों का जो अध्ययन हुआ है, उसमें कदाचित् आर्य जाति से संबद्ध अनुशीलन का विशिष्ट स्थान है। इस वैशिष्ट्य का कारण यही ऋग्वेदसंहिता है। आर्य जाति की आद्यतम निवास भूमि, उनकी संस्कृति, सभ्यता, सामाजिक जीवन आदि के विषय में अनुशीलन हुए हैं। ऋक्संहिता उन सबका सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रामाणिक स्रोत रहा है। पश्चिम के विद्वानों ने संस्कृत भाषा और ऋक्संहिता से परिचय पाने के कारण ही तुलनात्मक भाषा-विज्ञान के अध्ययन को सही दिशा दी तथा आर्य भाषाओं के भाषाशास्त्रीय विवेचन में प्रौढ़ि एवं शास्त्रीयता का विकास हुआ। भारत के वैदिक ऋषियों और विद्वानों ने अपने वैदिक वाङ्मय को मौखिक और श्रुतिपरंपरा द्वारा प्राचीनतम रूप में अत्यंत सावधानी के साथ सुरक्षित और अधिकृत अनाए रखा। किसी प्रकार के ध्वनिपरक, मात्रापरक यहाँ तक कि स्वरपरक परिवर्तन से पूर्णत: बचाते रहने का नि:स्वार्थ भाव में वैदिक वेदपाठी सहस्राब्दियों तक अथक प्रयास करते रहे।

विकसित स्वरूप

ऋक्संहिताकालीन साधु भाषा तथा 'ब्राह्मण', 'आरण्यक' और 'दशोपनिषद्' की साहित्यिक वैदिक भाषा के अनंतर उसी का विकसित स्वरूप लौकिक संस्कृत' या 'पाणिनीय संस्कृत' हुआ। इसे ही 'संस्कृत' या संस्कृत भाषा कहा गया। पर आज के कुछ भाषाविद संस्कृत को संस्कार द्वारा बनाई गई कृत्रिम भाषा मानते हैं। ऐसा मानते हैं कि इन संस्कृत का मूलाधार पूर्वतर काल को उदीच्य, मध्यदेशीय या आर्यावर्तीय विभाषाएँ थीं। 'विभाषा' या 'उदीचाम्' शब्द से पाणिनि सूत्रों में इनका उल्लेख उपलब्ध है। इनके अतिरिक्त भी 'प्राच्य' आदि बोलियाँ थीं। परंतु 'पाणिनि' ने भाषा का एक सार्वदेशिक और सर्वभारतीय परिष्कृत रूप स्थिर कर दिया। धीरे धीरे पाणिनि संमत भाषा का प्रयोग रूप और विकास प्राय: स्थायी हो गया। पतंजलि के समय तक 'आर्यावर्त' (आर्यनिवास) के शिष्ट जनों में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। पर शीघ्र ही वह समग्र भारत के द्विजातिवर्ग और विद्वत्समाज की सांस्कृतिक और आकर भाषा हो गई।

आर्यभाषा परिवार

ऐतिहासिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से संस्कृत भाषा आर्य भाषा परिवार के अंतर्गत रखी गई है। आर्य जाति भारत में बाहर से आई या यहाँ इसका निवास था, इत्यादि विचार अनावश्यक होने से यहाँ नहीं किया जा रहा है, पर आधुनिक भाषा विज्ञान के पंडितों की मान्यता के अनुसार भारत यूरोपीय भाषा-भाषियों की जो नाना प्राचीन भाषाएँ थीं, वे वस्तुत: एक मूलभाषा की देशकालानुसारी विभिन्न शाखाएँ थीं। उन सबकी उद्गमभाषा या मूलभाषा को आद्य आर्य भाषा कहते हैं। कुछ विद्वानों के मत में-वीरा-मूल निवास स्थान के

वासी सुसंगठित आर्यों को ही 'वीरोस' या वीरास् (वीरा:) कहते थे। वीरोस् (वीरो) शब्द द्वारा जिन पूर्वोक्त प्राचीन आर्य भाषा समूह भाषियों का द्योतन होता है, उन विविध प्राचीन भाषा-भाषियों को विरास (संवीरा:) कहा गया है। अर्थात् समस्त भाषाएँ पारिवारिक दृष्टि से आर्य परिवार की भाषाएँ हैं। संस्कृत का इनमें अन्यतम स्थान है। उक्त परिवार की 'केंतुम्' और 'शतम्' दो प्रमुख शाखाएँ हैं। प्रथम के अंतर्गत ग्रीक, लातिन आदि आती हैं। संस्कृत का स्थान 'शतम्' के अंतर्गत भारत-ईरानी शाखा में माना गया है।

आर्य परिवार में कौन प्राचीन, प्राचीनतर और प्राचीनतम है, यह पूर्णत: निश्चित नहीं है। फिर भी आधुनिक अधिकांश भाषाविद ग्रीक, लातिन आदि को आद्य आर्य भाषा की ज्येष्ठ संतति और संस्कृत को उनकी छोटी बहिन मानते हैं। इतना ही नहीं भारत-ईरानी-शाखा की प्राचीनतम अवस्ता को भी संस्कृत से प्राचीन मानते हैं। परंतु अनेक भारतीय विद्वान् समझते हैं कि 'जिद-अवस्ता' की अवस्ता का स्वरूप ऋक्भाषा की अपेक्षा नव्य है। जो भी हो, इतना निश्चित है कि ग्रंथ रूप में स्मृति रूप से अवशिष्ट वाङ्मय में ऋक्संहिता प्राचीनतम है और इसी कारण वह भाषा भी अपनी उपलब्धि में प्राचीनतम है। उसकी वैदिक संहिताओं की बड़ी विशेषता यह है कि हजारों वर्षों तक जब लिपि कला का भी प्रादुर्भाव नहीं था, वैदिक संहिताएँ मौखिक और श्रुति परंपरा द्वारा गुरु-शिष्यों के समाज में अखंड रूप से प्रवहमान थीं। उच्चारण की शुद्धता को इतना सुरक्षित रखा गया कि ध्वनि ओर मात्राएँ, ही नहीं, सहस्रों वर्षों पूर्व से आज तक वैदिक मंत्रों में कहीं पाटभेद नहीं हुआ। उदात्त अनुदात्तादि स्वरों का उच्चारण शुद्ध रूप में पूर्णत: अविकृत रहा। आधुनिक भाषा वैज्ञानिक यह मानते हैं कि स्वरों की दृष्टि से ग्रीक, लातिन आदि के 'केंतुम्' वर्ग की भाषाएँ अधिक संपन्न भी हैं और मूल या आद्य आर्य भाषा के अधिक समीप भी। उनमें उक्त भाषा की स्वर संपत्ति अधिक सुरक्षित हैं। संस्कृत में व्यंजन संपत्ति अधिक सुरक्षित है। भाषा के संघटनात्मक अथवा रूपात्मक विचार की दृष्टि से संस्कृत भाषा को विभक्ति प्रधान अथवा 'श्लिष्टभाषा' कहा जाता है।

सर्व प्राचीन उपलब्ध व्याकरण

प्रामाणिकता के विचार से इस भाषा का सर्वप्राचीन उपलब्ध व्याकरण पाणिनि की अष्टाध्यायी है। कम से कम 600 ई. पू. का यह ग्रंथ आज भी समस्त विश्व में अतुलनीय व्याकरण है। विश्व के और मुख्यत: अमरीका के भाषाशास्त्री संघटनात्मक भाषा विज्ञान की दृष्टि से अष्टाध्यायी को आज भी विश्व का सर्वोत्तम ग्रंथ मानते हैं। 'ब्लूमफील्ड' ने अपने 'लैंग्वेज' तथा अन्य कृतियों में इस तथ्य की पुष्ट स्थापना की है। पाणिनि के पूर्व संस्कृत भाषा निश्चय ही शिष्ट एवं वैदिक जनों की व्यवहार भाषा थी। असंस्कृत जनों में भी बहुत सी बोलियाँ उस समय प्रचलित रही होंगी। पर यह मत आधुनिक भाषाविज्ञों को मान्य नहीं है। वे कहते हैं कि संस्कृत कभी भी व्यवहार भाषा नहीं थी। जनता की भाषाओं को तत्कालीन प्राकृत कहा जा सकता है। देवभाषा तत्वत: कृत्रिम या संस्कार द्वारा निर्मित ब्राह्मण पंडितों की भाषा थी, लोकभाषा नहीं। परंतु यह मत सर्वमान्य नहीं है।

पाणिनि से लेकर पतंजलि तक सभी ने संस्कृत का लोक की भाषा कहा है, लौकिक भाषा बताया है। अन्य सैकड़ों प्रमाण सिद्ध करते हैं कि 'संस्कृत' वैदिक और वैदिकोत्तर पूर्व पाणिनिकाल में लोकभाषा और

व्यवहार भाषा थी। यह अवश्य रहा होगा कि देश, काल और समाज के संदर्भ में उसकी अपनी सीमा रही होगी। बाद में चलकर वह पठित समाज की साहित्यिक और सांस्कृतिक भाषा बन गई। तदनंतर यह समस्त भारत में सभी पंडितों की, चाहे वे आर्य रहें हों या आर्येतर जाति के, सभी की, सर्वमान्य सांस्कृतिक भाषा हो गई और आसेतु हिमाचल इसका प्रसार, समादर और प्रचार रहा एवं आज भी बना हुआ है।

विश्वभाषा

लगभग सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से यूरोप और पश्चिमी देशों के मिशनरी एवं अन्य विद्याप्रेमियों को संस्कृत का परिचय प्राप्त हुआ। धीरे-धीरे पश्चिम में ही नहीं, समस्त विश्व में संस्कृत का प्रचार हुआ। जर्मन, अंग्रेज़, फ्राँसीसी, अमरीकी तथा यूरोप के अनेक छोटे बड़े देश के निवासी विद्वानों ने विशेष रूप से संस्कृत के अध्ययन अनुशीलन को आधुनिक विद्वानों में प्रजाप्रिय बनाया। आधुनिक विद्वानों और अनुशीलकों के मत से विश्व की पुराभाषाओं में संस्कृत सर्वाधिक व्यवस्थित, वैज्ञानिक और संपन्न भाषा है। वह आज केवल भारतीय भाषा ही नहीं, एक रूप से विश्वभाषा भी है। यह कहा जा सकता है कि भूमंडल के प्रयत्न-भाषा-साहित्यों में कदाचित् संस्कृत का वाङ्मय सर्वाधिक विशाल, व्यापक, चतुर्मुखी और संपन्न है। संसार के प्राय: सभी विकसित और संसार के प्राय: सभी विकासमान देशों में संस्कृत भाषा और साहित्य का आज अध्ययन-अध्यापन हो रहा है।

आर्य भाषाओं के विकास में योगदान

संस्कृत का परिचय होने से ही आर्य जाति, उसकी संस्कृति, जीवन और तथाकथित मूल आद्य आर्य भाषा से संबद्ध विषयों के अध्ययन का पश्चिमी विद्वानों को ठोस आधार प्राप्त हुआ। प्राचीन ग्रीक, लातिन, अवस्ता और ऋक्संस्कृत आदि के आधार पर मूल आद्य आर्य भाषा की ध्वनि, व्याकरण और स्वरूप की परिकल्पना की जा सकी, जिससे ऋक्संस्कृत का अवदान सबसे अधिक महत्व का है। ग्रीक, लातिन आदि भाषाओं के साथ संस्कृत का पारिवारिक और निकट संबंध है, पर भारत-ईरानी-वर्ग की भाषाओं के साथ[6] संस्कृत की सर्वाधिक निकटता है। भारत की सभी आद्य, मध्यकालीन एवं आधुनिक आर्य भाषाओं के विकास में मूलत: ऋग्वेद एवं तदुत्तरकालीन संस्कृत का आधारिक एवं औपादानिक योगदान रहा है।

आधुनिक भाषा वैज्ञानिक मानते हैं कि ऋग्वेद काल से ही जन सामान्य में बोलचाल की तथाभूत प्राकृत भाषाएँ अवश्य प्रचलित रही होंगी। उन्हीं से पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तथा तदुत्तरकालीन आर्य भाषाओं का विकास हुआ। परंतु इस विकास में संस्कृत भाषा का सर्वाधिक और सर्वविध योगदान रहा है। यहीं पर यह भी याद रखना चाहिए कि संस्कृत भाषा ने भारत के विभिन्न प्रदेशों और अंचलों की आर्येतर भाषाओं को भी काफी प्रभावित किया तथा स्वयं उनसे प्रभावित हुई; उन भाषाओं और उनके भाषणकर्ताओं की संस्कृति और साहित्य को तो प्रभावित किया ही, उनकी भाषाओं, शब्दकोश उनकी ध्वनिमाला और

लिपिकला को भी अपने योगदान से लाभान्वित किया। भारत की दो प्राचीन लिपियाँ- ब्राह्मी (बाएँ से लिखी जानेवाली) और खरोष्ठी (दाएँ से लेख्य) थीं। इनमें ब्राह्मी को संस्कृत ने मुख्यत: अपनाया।

संपन्नध्वनिमाला

भाषा की दृष्टि से संस्कृत की ध्वनिमाला पर्याप्त संपन्न है। स्वरों की दृष्टि से यद्यपि ग्रीक, लातिन आदि का विशिष्ट स्थान है, तथापि अपने क्षेत्र के विचार से संस्कृत की स्वरमाला पर्याप्त और भाषानुरूप है। व्यंजनमाला अत्यंत संपन्न है। सहस्रों वर्षों तक भारतीय आर्यो के आद्यषुतिसाहित्य का अध्यनाध्यापन गुरु शिष्यों द्वारा मौखिक परंपरा के रूप में प्रवर्तमान रहा, क्योंकि कदाचित उस युग में[7] लिपिकला का उद्भव और विकास नहीं हो पाया था। संभवत: पाणिनि के कुछ पूर्व या कुछ बाद से लिपि का भारत में प्रयोग चल पड़ा और मुख्यत: 'ब्राह्मी' को संस्कृत भाषा का वाहन बनाया गया। इसी ब्राह्मी ने आर्य और आर्यतर अधिकांश लिपियों की वर्णमला और वर्णक्रम को भी प्रभावित किया। मध्यकालीन नाना भारतीय द्रविड़ भाषाओं तथा तमिल, तेलगु आदि की वर्णमाला पर भी संस्कत भाषा और ब्राह्मी लिपि का पर्याप्त प्रभाव है। ध्वनिमाला और ध्वनिक्रम की दृष्टि से पाणिनि काल से प्रचलित संस्कृत वर्णमाला आज भी कदाचित् विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय वर्णमाला है। संस्कृत भाषा के साथ-साथ समस्त विश्व में प्रत्यक्ष या रोमन अकारांतक के रूप में आज समस्त संसार में इसका प्रचार हो गया है।

2.4.4 संस्कृत साहित्य

यहाँ साहित्य शब्द का प्रयोग 'वाङ्मय' के लिए है। ऊपर वेद संहिताओं का उल्लेख हुआ है। वेद चार हैं- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इनकी अनेक शाखाएँ थीं, जिनमें बहुत-सी लुप्त हो चुकी हैं और कुछ सुरक्षित बच गई हैं, जिनके संहिता ग्रंथ हमें आज उपलब्ध हैं। इन्हीं की शाखाओं से संबद्ध ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद नामक ग्रंथों का विशाल वाङ्मय प्राप्त है। वेदांगों में सर्वप्रमुख 'कल्पसूत्र' हैं, जिनके अवांतर वर्गों के रूप में और सूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्र (शुल्ब सूत्र भी हैं, का भी व्यापक साहित्य बचा हुआ है। इन्हीं की व्याख्या के रूप में समयानुसार धर्म संहिताओं और स्मृतिग्रंथों का जो प्रचुर वाङ्मय बना, मनुस्मृति का उनमें प्रमुख स्थान है। वेदांगों में शिक्षा-प्रातिशाख्य, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छंद शास्त्र से संबद्ध ग्रंथों का वैदिकोत्तर काल से निर्माण होता रहा है। अब तक इन सबका विशाल साहित्य उपलब्ध है।ऋग्वेद से लेकर आज तक संस्कृत भाषा के माध्यम से सभी प्रकार के वाङ्मय का निर्माण होता आ रहा है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी के छोर तक किसी न किसी रूप में संस्कृत का अध्ययन अध्यापन अब तक होता चल रहा है। भारतीय संस्कृति और विचारधारा का माध्यम होकर भी यह भाषा अनेक दृष्टियों से धर्मनिरपेक्ष (सेक्यूलर) रही है। इस भाषा में धार्मिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक और मानविकी (ह्यूमैनिटी) आदि प्राय: समस्त प्रकार के वाङ्मय की रचना हुई।

संस्कृत भाषा का साहित्य अनेक अमूल्य ग्रंथरत्नों का सागर है, इतना समृद्ध साहित्य किसी भी दूसरी प्राचीन भाषा का नहीं है और न ही किसी अन्य भाषा की परम्परा अविच्छिन्न प्रवाह के रूप में इतने दीर्घ

काल तक रहने पाई है। अति प्राचीन होने पर भी इस भाषा की सृजन-शक्ति कुण्ठित नहीं हुई, इसका धातुपाठ नित्य नये शब्दों को गढ़ने में समर्थ रहा है।

आज ज्योतिष की तीन शाखाएँ-गणित, सिद्धांत और फलित विकसित हो चुकी हैं और भारतीय गणितज्ञों की विश्व की बहुत सी मौलिक देन हैं। पाणिनि और उनसे पूर्वकालीन तथा परवर्ती वैयाकरणों द्वारा जाने कितने व्याकरणों की रचना हुई जिनमें पाणिनि का व्याकरण-संप्रदाय 2500 वर्षों से प्रतिष्ठित माना गया और आज विश्व भर में उसकी महिमा मान्य हो चुकी है। पाणिनीय व्याकरण को त्रिमुनि व्याकरण भी कहते हैं, क्योंकि पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि इन तीन मुनियों के सत्प्रयास से यह व्याकरण पूर्णता को प्राप्त किया। यास्क का निरुक्त पाणिनि से पूर्वकाल का ग्रंथ है और उससे भी पहले निरुक्तिविद्या के अनेक आचार्य प्रसिद्ध हो चुके थे। शिक्षाप्रातिशाख्य ग्रंथों में कदाचित् ध्वनिविज्ञान, शास्त्र आदि का जितना प्राचीन और वैज्ञानिक विवेचन भारत की संस्कृत भाषा में हुआ है- वह अतुलनीय और आश्चर्यकारी है। उपवेद के रूप में चिकित्साविज्ञान के रूप में आयुर्वेद विद्या का वैदिकाल से ही प्रचार था और उसके पंडिताग्रंथ (चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, भेडसंहिता आदि) प्राचीन भारतीय मनीषा के वैज्ञानिक अध्ययन की विस्मयकारी निधि है। इस विद्या के भी विशाल वाङ्मय का कालांतर में निर्माण हुआ। इसी प्रकार धनुर्वेद और राज, गांधर्ववेद आदि को उपवेद कहा गया है तथा इनके विषय को लेकर ग्रंथ के रूप में अथवा प्रसंगतिर्गत सन्दर्भों में पर्याप्त विचार मिलता है।

2.5 भाषा एवं साहित्य में अन्तर

भाषा वैज्ञानिक हमें शब्द देते हैं, लेकिन साहित्यकार उन शब्दों को चुनकर एक रचना को जन्म देते हैं। भाषा वैज्ञानिक वाक्य संरचना का ज्ञान कराते हैं, लेकिन साहित्यकार वाक्य का अर्थ सुरक्षित रखते हुए रचना में लालित्य पैदा करते हैं।भाषा वैज्ञानिक लेखन में भाषा अनुशासन का पाठ पढाते हैं लेकिन साहित्यकार किसी भी भाषायी अनुशासन से परे शब्दों के जोड-तोड के जादू से पाठक के दिलों में समा जाते हैं।

2.5.1 संस्कृत साहित्य का परिचय

संस्कृत संसार की प्राचीनतम परिष्कृत भाषा है। भारतीय मनीषियों का समसत चिंतन-मनन, शोध और उसका विश्लेषण संस्कृत भाषा में ही है। भारत के साहित्यिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, नैतिक, राजनैतिक और ऐतिहासिक जीवन की व्यवस्था भी इसी भाषा में प्राप्त होती है। संस्कृत भाषा का साहित्य अत्यंत विस्तृत एवं समृद्ध है। साहित्य शब्द का अर्थ है शब्द और अर्थ का समन्वय। 'सहितयो: शब्दार्थयो: भावं साहित्यम्'। व्यापक अर्थ में साहित्य से अभिप्राय उन ग्रंथों से है जो किसी भाषा विशेष में रचे गए हैं। अंग्रेजी भाषा में 'लिटरेचर' शब्द से भी यही अर्थ ग्रहण किया जाता है। लेकिन यदि हम उसका संकुचित अर्थ लें तो साहित्य शब्दका प्रयोग कावयादि के लिए भी किया जाता है। काव्य आदि केवल मनोरंजन के साधन नहीं है। मानव समाज एवं जीवन के लिए काव्य की बहुत उपादेयता है।

वाहक संस्कृत साहित्य की अपनी कुछ विशिष्ट विशेषताएँ हैं, जिनके कारण वह आज भी गौरवान्वित है। प्राचीनता, व्यापकता, विशालता धार्मिकता, सांस्कृतिक तत्व रसोन्मेषकारिणी कला इन सभी दृष्टियों से संस्कृत साहित्य अनुपम रहा है। प्राचीनता की दृष्टि से देखने से यह पता चलता है कि पाश्चात्य एवं पूर्ववर्ती सम्पूर्ण विद्वत् जगत 'ऋग्वेद' को विश्व का सर्वप्राचीन ग्रंथ स्वीकार करता है। सामान्यतया संस्कृत साहित्य में धार्मिक ग्रंथों का बाहुल्य माना जाता है। मनुष्य के प्राप्तव्य चार लक्ष्यों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का सुन्दर समन्वित विकास संस्कृत साहित्य में उपलब्ध होता हैं।

संस्कृत साहित्य जीवन के केवल आध्यात्मिक पक्ष को ही चित्रित नहीं करता, बल्कि लौकिक अथवा भौतिक पक्ष को भी समान रूप से चित्रित करता है। संस्कृत साहित्य में 'सत्यं शिवं सुंदरम्' का अद् भुत एवं प्रीतिकर समन्वय एवं सामंजस्य उपलब्ध होता है। 'वाक्यं रसात्मकम् काव्यम्' के रूप में भी संस्कृत साहित्य ने औचित्स तथा आनंद को एक साथ स्थापित किया।

इतने प्राचीन व्यापक तथा विशाल संस्कृत साहित्य के स्वरूप तथा समय आदि की दृष्टि से इसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है।

i. वैदिक संस्कृत
ii. लौकिक संस्कृत

वैदिक साहित्य

यह सर्वविदित तथ्य है कि संस्कृत विश्व की प्राचीनतम भाषा मानी जाती है और वैदिक संस्कृति संसार की प्राचीनतम संस्कृति संसार की प्राचीनतम संस्कृति। वैदिक साहित्य के सर्वप्रथम ग्रंथ वेद हैं। भारतीय संस्कृति के इतिहास में इसका अत्यंत महत्वपूर्ण एवं गौरवपूर्ण स्थान है। वेद शब्द विद्-ज्ञान सत्तायां लामे च विचारणे विद् धातु में घञ् प्रत्यय जोड़कर बनाया गया है जिसका अर्थ ज्ञान है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने अपनी ऋग्वेद भाप्य भूमिका में वेद शब्द को 'विदत्ति जानन्ति, विद्यते भवन्ति', आदि इस प्रकार व्याख्या की है। अर्थात् जिनके द्वारा या जिनमें सारी सत्य विधाएँ जानी जाती हैं,विद्यमान, हैं या प्राप्त की जाती हैं, वही वेद है।

सायणाचार्य ने वेद की व्याख्या करते हुए बताया है कि इष्ट की प्राप्ति तथा अनष्टि परिहार के अलौकिक उपाय को बतलाने वाला ग्रंथ वेद है। वेदों को संहिता भी कहा जाता है। वेद की व्युत्पत्तियों से यह सिद्ध होता है कि वेद ज्ञान के वे अक्षय कोष है, जिनमें सभी विषयों का समावेश है। मनुसमृति में कहा गया है कि वेद समस्त धर्म का मूल है। वेद-परमात्मा के नि:श्वास माने जाते हैं। वेदों का साहित्यिक महत्त्व भी कुछ कम नहीं है। महाकाव्य, गीतिकाव्य, ऐतिहासिककाव्य, गद्य, नाट्य, आख्यान साहित्य इत्यादि काव्य की सभी विधाओं की उत्पत्ति में वेदों का सक्रिय योगदान रहा है। सभी प्रकार का ज्ञान विज्ञान वेदों में ही निहित है। इहलौककि और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति के स्थान वेद ही हैं।

वैदिक साहित्य के चार वेदों के अलावा ब्राह्मण, आरणयक और वेदांग भी वैदिनक साहित्य में समाविष्ट हैं।

i. ऋग्वेद
ii. सामवेद
iii. यजुर्वेद
iv. अथर्ववेद

सामवेद में ऋग्वेद के मंत्रों को स्वर सहित उच्च ध्वनि से गाने की विधि दी गई है। इसमें देवताओं की स्तुति की जाती है। यजुर्वेद में इस बात का विवरण है कि ऋचाओं यानी ऋग्वेद के अंगों का यज्ञों में किस प्रकार और किस प्रयोजन से विधिवत प्रयोग किया जाए।

अर्थवेद में जीवन के भौतिक तत्वों का वर्णन है।

ब्राह्मण ग्रंथ वेदों की रचना के बाद लिखे गए और इनके रचना काल के बारे में भी निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। ब्राह्मण ग्रंथ वेदों के वर्व्य को बढ़ाते हैं और व्याख्या द्वारा उनका विस्तार करते हैं। चारों वेदों के नौ ब्राह्मण ग्रंथ हैं।

आरण्यक ग्रंथों में यज्ञ की आध्यात्मिकता का वर्णन है। आज आठ आरण्यक ग्रंथ उपलब्ध है। उपनिषदों को वेदों का निचोड़ कहा जाता है, जो आत्मतत्त्व और ब्रहमज्ञान का विवेचन करते हैं।

वेदांग वैदिक साहित्य की अंतिम कड़ी हैं। कुल छह वेदांग हैं जिनके कर्ण्य का आगे उल्लेख किया जा रहा है।

i.	शिक्षा	-	वेद पाठ के उच्चारण की शिक्षा
ii.	कल्प	-	यज्ञ के विधि-विधान, कर्मानुष्ठान का ज्ञान
iii.	व्याकरण	-	वेद की भाषा का रचना और अर्थ संबंधी विवेचन
iv.	निरूक्त	-	शब्द ज्ञान और शब्द की व्युत्पत्ति
v.	ज्योतिष	-	यज्ञ की सफलता के लिए अनुकूल तिथि, समय की गणना
vi.	छान्द	-	वैदिक छान्दों का वर्णन।

लौकिक साहित्य

लौकिक साहित्य के बाद लगभग ई.पू. 500 से लौकिक साहित्य का समय शुरू होता है। लौकिक साहित्य में निम्नलिखित शामिल हैं-

इतिहास ग्रंथ- वाल्मीकिकृत रामायण और व्यासकृत महाभारत को इतिहास ग्रंथ माना जाता है ये दोनों लौकिक संस्कृत की दो प्रथम कृतियाँ है और रामायण को संस्कृत का ‘आदि काव्य’ कहा जाता है।

रामायण का रचना काल भी पर्याप्त विवाद का विषय रहा है। भारतीय तथा पश्चात्य विद्वानों ने रामायण के रचना काल को निर्धारित करने का पर्याप्त प्रयत्न किया, लेकिन किसी एक समय को मानने में सभी एकमत नहीं हैं। परम्परागत विश्वासों से परे यदि हम तार्किक बुद्धि का आश्रय लें, तो रामायण का वर्तमान

परिनिष्ठित स्वरूप ईसा पूर्व 5वीं शत तक स्थिर होने के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं अर्थात् बुद्ध से पहले वाल्मीकि रामायण का वर्तमान रूप स्थिर हो चुका था।

भारतीय जनमानस की धार्मिक आस्था का मुख्य आधार यह रामायण तत्कालीन राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, परिस्थितियों पर विशद प्रकाश डालता है। भारत में राष्ट्रीय जीवन के निर्माण में रामायण का बहुत बड़ा योगदान है।

महाभारत में तत्कालीन साहित्यिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक आदि विषयों का समावेश है। महाभारत एक अत्यंत श्रेष्ठ आचार संहिता का भी निदर्शन उपस्थित करता है। महाभारत के रचयिता परम्परा से व्यास मुनि माने जाते हैं। इनका पूरानाम कृष्ण द्वैपायन व्यास था। महाभारत के अंत:साक्ष्य से प्रमाणित है कि व्यास कौरवों और पांडवों के जीवन की सभी प्रमुख घटनाओं से प्रत्यक्षत: परिचित रहे। वर्तमान महाभारत में एक लाख श्लोक प्राप्त होते हैं इसलिए इसका नाम 'शंतसाहस्री संहिता' भी है। महाभारत का रचना काव्य अत्यंत विवादास्पद रहा है। ये श्लोक संभवत: एक ही बार नहीं किये गये बल्कि सैकड़ों वर्षो की अवधि में इसके श्लोक जुड़ते गये, जिस कारण इसके तीन रूप बने। प्रारंभिक लघु रूप (जय), विस्तृत रूप (भारत) और वर्तमान रूप (महाभारत)।

पुराण- इतिहास ग्रंथों के बाद लौकिक साहित्य में महत्वपूर्ण ग्रंथ पुराण हैं। पुराण धार्मिक ग्रंथ हैं। ये अवतारों और धार्मिक कथाओं के काव्य हैं। 'पुराण' का तात्पर्य है 'प्राचीन'। इससे इनकों रचना काव्य का थोड़ा संकेत मिलता है। ई.पू. 300 से लेकर ई 15वीं सदी तक पुराण लिखे गये और इनके कलेवर में प्रक्षेपण (परवर्ती लेखकों द्वारा अंश जोड़ा जाना) के कारण विस्तार, परिवर्तन भी होता गया। आज 18 पुराण प्राप्त हैं- मत्स्य, कूर्म, वराह, वामन, भागवत, ब्रह्मांड, ब्रह्ममैवर्त, विष्णु, नारद, गरुड, वायु, अग्नि, पद्म, लिंग, स्कंद और भविष्यत्। इनमें भागवत सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है, जो परवर्ती कृष्ण भक्ति साहितय का प्रेरणा स्रोत है। विष्णु और नारद पुराण में भक्ति के दार्शनिक पक्ष का विवेचन है।

संस्कृत काव्य- सहित्य शास्त्रियों ने रस को काव्य की आत्मा स्वीकार किया है। इस काव्य के मुख्यता दो भेद किए गए हैं। दृश्य काव्य तथा श्रव्य काव्य जिसका विवरण नीचे दिया गया है।

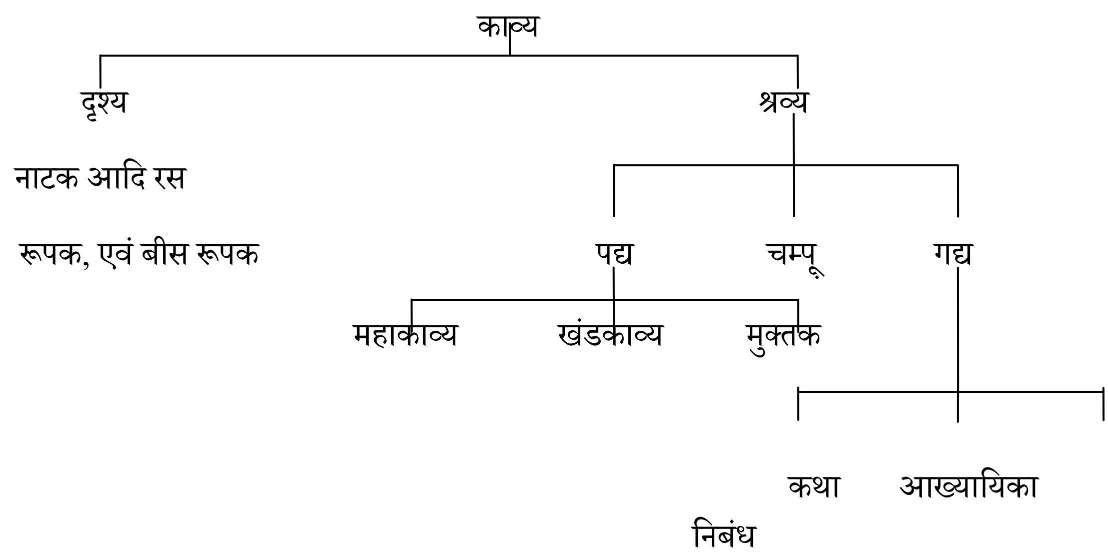

संस्कृत के साहित्यकारों में कालिदास का नाम अग्रगण्य है। इनका समय विवादसपद है और अनुमानत: वे ई.पहली सदी से छठी सदी के बीच रहे होंगे। कुमार संभव और रघुवंश इनके महाकाव्य हैं। 'अभिज्ञान शाकुंतलम','मालविकाग्नि मित्रम' और 'विक्रमोर्वशीयम' इनके नाटक हैं और 'मेघदूत' और 'ऋतु संहार' इनकी काव्य कृतियाँ हैं। अन्य प्रमुख साहित्यकार हैं भारवि (किरातार्जुनीयम्) माघ (शिशुपाल वधम्)।

कवि बाणभट्ट ने गद्य में 'कादम्बरी' नामक कथा लिखी, जो विश्व का पहला उपनयास माना जा सकता हैं। उन्हीं का 'हर्ष चरित' संसार की पहली जीवनी भी है।

ज्योतिष, गणित, चिकित्सा शास्त्र आदि क्षेत्रों में लौकिक संस्कृत में मौलिक और विपुल साहित्य प्राप्त होता है।

2.5.2 भाषा अध्ययन

भारतीय वाङ्मय के अध्ययन-अनुशीलन से विदित होता है कि ऋषि मुनियों के समय तक व्याकरण शास्त्र की अनेक विधाएँ प्रकाश में आ चुकी थीं। गार्ग्य, गालव, शाकटायन, शाकल्य आदि भाषा शास्त्रियों द्वारा प्रवर्तित व्याकरण शास्त्र की यह महान् थाती पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि के हाथों में आयी। भाषा का जो विस्तृत स्वरूप तत्कालीन भारत की करोड़ो जनता द्वारा बोला जाता था, उसे इस मुनित्रय ने अपनी महान् कृतियों में बाँधा। उनके बाद संस्कृत के सैकड़ों वैयाकरणों ने वार्तिक, वृत्ति, व्याख्या और टीकाओं द्वारा व्याकरण ज्ञान की इस परंपरा को आगे बढ़ाया। वार्तिक, वृत्ति आदि मूल व्याकरण ग्रंथों की व्याख्या करते हैं और व्याकरण के दार्शनिक चिंतन के पक्ष को उभारते हैं।

पाणिनि और उनकी कृत्ति अष्टाध्यायी- वेदों की संस्कृत भाषा में काल गति के कारण परिवर्तन हुए और विविध प्रयोगों के स्थान पर मानकीकरण की आवश्यकता पड़ी। पाणिनि ने इसी परिप्रेक्षण में प्रख्यात संस्कृत व्याकरण 'अष्टाध्यायी' का प्रणयन किया, जो लौकिक संस्कृत का अत्यंत संक्षिप्त, सूत्रबद्ध, वैज्ञानिक व्याकरण है। इसकी वैज्ञानिकता ने विश्व भर के भाषावैज्ञानिकों को चमत्कृत कर दिया। यह माना जाता है कि पाणिनि के व्याकरण के सूत्र सीधे कंप्यूटर के प्रोग्राम के रूप में व्यवहार में लाये जा सकते हैं।

कात्यायन

महाभारत में कात्यायन को एक वर्तिकार के रूप में स्मरण किया जाता हैं किंतु कात्यायन का नाम व्याकरणशास्त्र के महान् प्रतिभाशाली आचार्य पाणिनि और महाभाप्यकार पतंजलि के साथ लिया जाता है। इस मुनित्रय की व्याप्ति और ख्याप्ति व्याकरण शास्त्र के चारों ओर बिखरी पड़ी है। कात्यायन ने पाणिनि व्याकरण की पूर्ति के लिए वार्तिकों की रचना की थी। इन वार्तिकों की मानयता पाणिनि के सूत्रों जैसी ही है। इनका पूरा नाम वररुचि था। कात्यायन शाखा का अध्ययन महाराष्ट्र में प्रचलित है, इसलिए लगता है कि कात्यायन दाक्षिणात्य थे। इनका समय 2700 वर्ष वि. रखा गया है।
इन्होंने काव्य, नाटक, व्याकरण, धर्मशास्त्र आदि कई विषयों पर ग्रंथ लिख हैं जिनमें प्रमुख वार्तिक पाठ, स्वर्गारोहण काव्य, भ्राज संज्ञक श्लोक, स्मृति कात्यायन और उभय सारिका भाज।

पतंजलि

पतंजलि एक महान् विचारक मनस्वी विद्वान थे। व्याकरण के क्षेत्र में नए युग का आरंभ कर अपनी असामान्य प्रतिभा की छाप वे आगे की पीढ़ियों पर छोड़ गये। उनको पाणिनीय व्याकरण का अद्धितीय व्याखाता कहा जाता है। पाणिनि के वे कटु आलोचक थे। इस प्रकार की निर्भीकता और स्वच्छ आचरण ही पंडित्य का अलंकरण होता है। पाणिनि के विवेक, व्यक्तित्व और विचारों ने पतंजलि को इतना ऊँचा उठाया, इसकी अपेक्षा यह कहना अधिक उपयुक्त है कि उन्होंने पाणिनि को चमकाया।
इन वैयाकरणों के अतिरिक्त वररुचि, शवरस्वामी, हर्षवर्धन, शांतनवाचार्य और शन्तनु आदि वैयाकरणों ने लिंगानुशासन, गणपाठ, उणादि सूत्र, फिट् सूत्र और धातु पाठ आदि विभिन्न ग्रंथों को लिखकर व्याकरण शास्त्र का सर्वांगीण विकास किया।

2.5.3 संस्कृत भाषा का परिचय

वाक्य संरचना- हिंदी की तरह संस्कृत में भी वाक्य कर्ता, कर्म, क्रिया आदि पदबंधों से मिलकर बनता है।

राम: फलं खादति।
राम फल खाता है (या) खां रहा है।
(संस्कृत में फल कर्म तथा द्वितीया विभक्ति है)

संस्कृत में पदक्रम बहुत लचीला है। इसे बिना अर्थ में परिवर्तन किए हम अंग्रेजी Mohan killed कोSohan Sohan killed Mohan के पदक्रम से नहीं बदल सकते, क्योंकि कर्ता और कर्म बदल जाते हैं। संस्कृत में हम पदक्रम बदलकर वाक्य बना सकते हैं और उनके अर्थ में कोई परिवर्तन नहीं होता है जैसे:

रामेण रावण: हत:।
रामेण हत: रावण:।
रावण रामेण: हत:।

अर्थात रावण राम से मारा गया (या) राम ने रावण को मारा।

संस्कृत के इन वाक्यों में राम कर्ता है तथा वाच्य के कारण तृतीया विभक्ति में है। 'रावण' कर्म है तथा प्रथमा में है।

इसका एक प्रमुख कारण है संस्कृत का हर संज्ञा शब्द अपने कारकीय संबंध के साथ प्रकट होता है। 'बालक:' कर्ता कारक है,'बालकम्' कर्म कारक है। इसलिए वाक्य में पद वाक्य में कहीं भी आएँ, अपने कारकीय संबंध प्रकट करते हैं और अर्थ की अभिव्यक्ति में कोई कठिनाई नहीं होती।

संस्कृत के संज्ञा रूप

संस्कृत भाषा के सभी शब्दों का निर्माण धातु (root) याने शब्द के मूल रूप तथा प्रत्ययों के जोड़ से होता है। संज्ञा पदों का निर्माण सुप् प्रत्यय (सुबंत) जोड़ने से होता है और क्रिया पदों का निर्माण तिङ् प्रत्यय (तिड़ंत) जोड़ने से। धातु रूप की अंतिम ध्वनि के आधार पर अलग-अलग प्रत्यय जुड़ते हैं।

संज्ञा पद और कारक

संस्कृत के संज्ञा शब्द सभी तीन वचनों में प्रयुक्त होते हैं।

कर्ता	**एकवचन**	**-**	**बालक:एक लड़का**	
	द्विवचन	**-**	**बालकौदो लड़के**	
	बहुवचन	**-**	**बालका:**	**कई लड़के (तीन या अधिक)**

हर वचन के आठ कारक हैं। यहाँ हम 'राम' शब्द के तीन वचनों में आठ कारकों के रूप देखेंगे। मूल रूप/राम्/मानकर हम उन कारक चिह्नों को भी दिखा रहे हैं, जिन्हे हम विभक्ति कहते हैं।

अकारान्त पुल्लिंग शब्द रूप –'राम' शब्द

कारक	विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन	विभक्ति चिह्न		
कर्ता	प्रथमा	राम:	रामौ	रामा:	अ:	औ	आ:
कर्म	द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्	अम्	औ	आन्:

करण	तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः	एन	आभ्याम् ऐः
संपदान	चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः	आय	आभ्याम् एभ्यः
अपादान	पंचमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः	आत्	आभ्याम एभ्यः
संबंध	षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणात् अस्य	अयोः	आनाम्
अधिकरण	सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु ए	अयोः	एसु
संबोधन	अष्टमी	हे राम!	हे रामौ!	हे रामाः! अ	औ	आः

नोटः र के कारण ।न। का ।ण। बनता है, ।स। का ।प। बनता है।

इस तरह हर संज्ञा शब्द के तीन वचनों और आठ कारकों में कुल 24 रूप बनते हैं।

संज्ञा शब्दों की तरह सर्वनामों के भी 24 रूप बनते है। पुल्लिंग सः (वह) के रूप देखिए।

कर्ता	**सः**	**तौ**	**ते**
कर्म	**तम्**	**तौ**	**तान्**
करण	**तेन**	**ताभ्याम्**	**तैः**

वाक्य में सर्वनाम और विशेषण की संज्ञा से अन्विति होती है। अर्थात् निम्नलिखित वाक्यों में समान लिंग और वचन के सर्वनाम और संज्ञा शब्द ही प्रयुक्त हो सकते हैं। उदाहरण के लिए-

पुल्लिंग	सः ज्येष्ठः बालः	वह बड़ा लड़का है।
	तौ ज्येष्ठौ बालौः	वे दो बड़े लड़के हैं।
	ते ज्येष्ठाः बालाः	वे बड़े लड़के हैं।
स्त्रीलिंग	सा ज्येष्ठा बाला	वह बड़ी लड़की है।
	ते ज्येष्ठे बाले	वे (दो) बड़ी लड़कियाँ हैं।
	ताः ज्येष्ठाः बालाः	वे बड़ी लड़कियाँ है।

इसी तरह तक बालं (उस लड़के को), तेन बालेन (उस लड़के ने) आदि रूपों में भी इस श्लिष्टा को देख सकते हैं।

संस्कृत के क्रिया रूप

श्लिष्टता के लक्षण संस्कृत में सब से अधिक क्रिया में प्रकट होते हैं। हिंदी जैसी आधुनिक भाषाएँ क्रिया रचना दृष्टि से अश्लिष्ट (analytic) कही जाती हैं, क्योंकि यहाँ क्रिया रचना बहुत आसान है। उदाहरण

के लिए हिंदी में क्रिया के मूल रूप (धातु) में काल के लिंग वचन के रूप जोड़ने पर क्रिया की निष्पत्ति हो जाती है। जैसे

धातु	काल (लिंग, वचन शब्दों के साथ)	
कर, लिख, पढ़, सुन	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
जा, आ, बता	एक, ता है	ती है
सी, खे, खो, बो	बहु तो हैं	ती हैं

हिंदी में काल के रूप भी सीमित है। प्रमुखकाल है नित्य वर्तमान (करता है), सामान्य वर्तमान (कर रहा है), भविष्यत (करेगा), सामान्य भृत (किया)। इसके साथ कुछ काल वृत्ति सूचक रूप हैं करता था, करता हो, करता होगा, करता होता आदि।

स: (बाल:) पठति- लड़का पढ़ता है का उदाहरण लें। इसके नौ रूप इस तरह बनेंगे।

	एकवचन	द्विवचन		बहुवचन
III Person	अन्य पुरुष	पठति	पठत:	पठन्ति
II Person	मध्य पुरुष	पठति	पठथ:	पठथ:
I Person	उत्तम पुरुष	पठामि	पठाव:	पठाम:

कृ धातु से हर क्रिया 3 वाक्यों में आ सकती है। जैसे वह के संदर्भ में दो वाक्यों का अवलोकन कीजिए। पुल्लिंग, तीन वचनों में

कर्तृवाच्य (वह करता है)	**करोति**	**कुरुत:**	**कुर्वन्ति**
कर्म वाच्य (किया जाता है)	**कुर्यते**	**कुर्येते**	**कुर्यन्ते**

संस्कृत में दो पद हैं- परस्मैपद, जहाँ दूसरों के संदर्भ में चर्चा की जाए और आत्मने पद, जहाँ अपने संदर्भ में चर्चा की जाए।

काल वृत्ति और प्रयोग

'स: पठन्ति'- वह पढ़ता है सामान्य वर्तमान की क्रिया है। अगर इसी को हम भूतकाल में कहना चाहें तो रूप बनेंगे।

अपठत् **अपठताम्** **अपठन्**

भविष्यत काल के भी 9 रूप इसी तरह बनेंगे

पठिष्यति **पठिष्यत:** **पठियन्ति**

हर काल या वृत्ति के इन नौ रूपों कोलेकर कहा जाता है। वर्तमान काल लट् लकार है, भविष्यत् काल लृट् लकार है सामान्य भूतकाल लड् लकार है। लोट् लकार आज्ञार्थ है। इस तरह हर क्रिया के दस लकार है और सामान्य धातु, प्रेरणार्थक, इच्छार्थक, अतिशयता एवं पुनरुक्ति ये पाँच प्रयोग हैं।

इस तरह 9 पुरुष-वचन रूपों, 15 काल आदि रूपों, 3 वाच्यों और 2 पदों के संयोजन से संस्कृत में हर क्रिया धातु के लगभग 540 बन सकते हैं। इसकी तुलना में हिंदी में करता, क्रिया, करेगा, करे आदि के विभिन्न लिंग-वचन-पुरुष भेदों के लगभग 27 ही रूप बनते हैं।

अंत में संस्कृत की क्रिया रचना की एक और विशेषता की चर्चा करेंगे, जो विभेदीकरण प्राकृत में ही समाप्त हो गया। संस्कृत के क्रिया धातु लगभग 200 हैं, जिन्हें दस अलग वर्गों में बाँटा गया है। ये गण कहलाते हैं। भू (होना) धातु से भ्वादि गण, अद् (खाना) धातु से अदादि गण आदि। इसकी रूपावलियाँ भिन्न हैं। इस कारण छात्र को हर गण के अनुसार सारे रूप जानना आवश्यक हो जाता है। पालि भाषा में 10 की जगह 6 गण रह गये और प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिंदी में सिर्फ़ एक ही धातु रूप रह गया। अर्थात हिंदी में धातु रूप जो भी हो (कर, लड्, हो, खो, खो आदि) उनके क्रिया रूप हर जगह एक जैसे बनते हैं।

2.6 भाषा एवं साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से सृजनात्मकता एवं जीवन कौशलों का विकास

2.6.1 भाषा एवं साहित्य की विभिन्न विधाओं के माध्यम से सृजनात्मकता का विकास

भाषा एवं साहित्य के शिक्षण का परम उद्देश्य है छात्रों में साहित्यिक सृजनात्मक का विकास करना। वस्तुतः इसी उद्देश्य की पूर्ति में भाषा एवं साहित्य शिक्षण की सच्ची सफलता है। सामान्यतः लिखी एवं बोली गई भाषा को समझ लेना तथा अपने विचारों को लिखकर एवं बोलकर दूसरे तक पहुंचा देना- भाषा शिक्षण के उद्देश्य हैं। किन्तु, छात्रों की सृजनात्मतक प्रतिभा तथा शक्ति को विकसित कर देना भाषा एवं साहित्य शिक्षण को पूर्णता एवं सार्थकता प्रदान करना है। छात्रों के अंदर सुसुप्त साहित्य-सृजन की प्रतिभा एवं संभावनाएं अनुकूल परिवेश तथा मार्गदर्शन पाकर विकसित एवं सक्रिय हो उठती है।

योग्य एवं कल्पनाशील शिक्षक अपनी प्रतिभा, लगनशीलता तथा संवेदना के बल पर छात्रों की सृजनात्मक प्रतिभा को विकसित एवं परिष्कृत कर पाने में सफल होता है। इतना ही नहीं, वह कतिपय साहित्यिक क्रियाशील को भी प्रोत्साहित करता है तथा उनके माध्यम से छात्रों में साहित्य-सृजन की शक्ति का सम्यक् रूप से विकास करता है। स्पष्ट है कि इस काम में शिक्षक की प्रतिभा, योग्यता, सक्रियता तथा साहित्य-सृजन में उसकी दक्षता ही सबसे अधिक काम करती है। संवेदनशील, साहित्यिक तथा योग्य शिक्षक को इस दिशा में अधिक सफलता मिलती है। शिक्षक का भाषा पर अधिकार होना इस काम के लिए अति आवश्यक है। साहित्यिक रुचि रखनेवाला तथा साहित्य-सृजन में प्रवीन शिक्षक छात्रों में साहित्यिक सृजनात्मकता का प्रेरणा स्रोत होता है।

यहां हम कपिपय क्रियाशील के संबंध में विशेष रूप से विचार रखते हैं। इन क्रियाशीलनों के माध्यम से छात्रों में साहित्यिक सृजनात्मकता का विकास किया जा सकता है।

i. **निबंध लेखन तथा प्रतियोगिता -** छात्रों को स्वतंत्र रूप से निबंध-लेखन के लिए प्रोत्साहित करना बहुत ही उपयोगी होता है। इस क्रिया में भाषा एवं साहित्य के शिक्षक का मार्गदर्शन आवश्यक है। प्रारंभ में शिक्षक अपनी देखरेख में निबंध तैयार करवाता है। और बाद में छात्रों को स्वतंत्र रूप से लिखने के लिए अनुप्रेरित करता है। उनके लिखे निबंधों का वह संशोधन तथा परिष्कार भी कर देता है। इसके अतिरिक्त छात्रों के बीच निबंध प्रतियोगिता का आयोजन सृजनात्मकता के विकास में बहुत ही सहायक होता है।

ii. **मार्गदर्शन-युक्त पुस्तकालय का उपयोग** - विद्यालय के पुस्तकालयों के सही उपयोग से भी छात्रों में सृजनात्मक को वृद्धि होती है। शिक्षक के सही मार्गदर्शन में छात्र अपेक्षित काव्य, निबंध अथवा कथा-साहित्य का अध्ययन जब करते हैं, तब उनमें साहित्य के प्रति रुचि उत्पन्न होती है एवं वे साहित्य सृजन की ओर प्रवृत्त होते हैं।

iii. **कविता-लेखन तथा प्रतियोगिता -** योग्य एवं सृजनशील शिक्षक के मार्गदर्शन में कविता-लेखन तथा प्रतियोगिता का आयोजन छात्रों में सृजनात्मकता का निश्चित रूप से विकास करता है। इससे छात्रों में कविता-सृजन की शक्ति का विकास होता है।

iv. **कहानी-प्रतियोगिता-** कहानी-प्रतियोगिता का भी अपना महत्व है। विषय अथवा कथा-वस्तु का आशिंक रूप दे दिया जाता है तथा छात्रों से कहानी लिखने या पूर्ण करने को कहा जाता है। फिर उनके बीच प्रतियोगिता का भी आयोजन किया जाता है। पुरस्कार एवं प्रशंसा के द्वारा उन्हें इस दिशा में प्रोत्साहित किया जाता है।

v. **नाटक-प्रतियोगिता-** छात्रों के बीच नाटक-लेखन-प्रतियोगिता का आयोजन बहुत ही उपोदय होता है। योग्य शिक्षक छात्रों को सर्वप्रथम दैनिक जीवन में होने वाली बातचीत को लखनीब्रद्ध करने को कहता है। आगे चलकर किसी कहानी के पात्रों के बीच की बातों को कथोपकथन के रूप मे लिखने को कहता है। अंत में काल्पनिक कथानक को कथोपकथन के रूप में प्रस्तुत करवाता है। इसके उपरांत नाटक-लेखन-प्रतियोगिता कर आयोजन कर छात्रों में नाटक-लेखन-क्षमता को विकसित एवं परिष्कृत किया जाता है।

vi. **साहित्य-महारथियों की जयंतियां-** तुलसी, कबीर, सूरदास, मीरा, बिहारी, प्रसाद, भारतेंदु, माखनलाल चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त, पंत, दिनकर, बच्चन प्रभृति साहित्य-महारथियों की जयंतियां विद्यालय में मनाई जाएं। इससे छात्रों को उनके साहित्य पढ़ने, उनसे परिचित होने तथा उनसे अनुप्रमाणित होने का अवसर प्राप्त होता है। साहित्य-सृजन की शक्ति का इन आयोजन के द्वारा भी विकास होता है।

vii. **भाषण-प्रतियोगिता-** छात्रों के बीच योग्य एवं कल्पनाशील शिक्षक के मार्गदर्शन में भाषण-प्रतियोगिता बहुत ही उपयोगी होती है। इसमें ध्यान यह रखना होता है कि भाषण अथवा वाद-विवाद का विषय साहित्यिक हो।

viii. **कवि-सम्मेलन-** कवि-सम्मेलनों का आयोजन कर छात्रों को अपनी कविताओं के पाठ का अवसर देना बहुत ही लाभदायक होता है। वे एक ओर जहां बड़े कवियों की कविताओं से प्रभावित अनुप्रेरित होते हैं, वहीं दूसरी ओर अपनी कविताओं का पाठ कर प्रोत्साहित तथा आत्मविश्वास से पूर्ण होते हैं। उनमें साहित्य-सृजन की शक्ति का निश्चित रूप से विकास होता है।

ix. **कवि-दरबार-** कवि-दरबार में मृत अथवा जीवित महान कवियों की वेशभूषा में छात्र और शिक्षक ही भाग लेते हैं। इन अनुकृत करने वाले छात्रों तथा शिक्षकों में से जो जिस कवि का अभिनय करता है, वह उसकी प्रसिद्ध कविता का यथा-साध्य उसी के अंदाज में पाठ करता है। इससे छात्रों में आत्मविश्वास तथा कविता के प्रति रुचि की वृद्धि होती है जो सृजनात्मकता के विकास में सहायक है।

x. **प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का अध्ययन तथा उनके पर कविता की रचना-** प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का अध्ययन अपने आप में एक महत्वपूर्ण कार्य है। इस प्रक्रिया में छात्रों को काव्यानंद तो प्राप्त होता ही है, उन्हें साहित्य-सृजन की प्रेरणा भी प्राप्त होती है। इससे उनमें भावोद्रक भी होता है तथा मानक छंद का भी परिचय प्राप्त होता है।

xi. **समस्या-पूर्ति-** समस्या पूर्ति की क्रिया में समस्या को छंद के एक चरण अथवा अंश में प्रस्तुत किया जाता है। जो लोग इसमें भाग लेनेवाले होते हैं, वे ऐसे छंद अथवा कविता की रचना करते हैं जिसमें समस्या की पूर्ति तो होती ही है, साथ ही वह प्रस्तुत छंद चरण अथवा अंश भी सम्मिलित रहता है। छात्रों के बीच समस्यापूर्ति की क्रिया को चलाकर हम उनमें कल्पना-शक्ति तथा सृजनात्मकता का विकास निश्चित रूप से कर सकते हैं।

xii. **विशेष अवसरों के अनुकूल कविता, कहानी, नाटक तथा निबंध का लेखन -** स्वतंत्रता-दिवस, गणतंत्र-दिवस, गांधी जयंती, होली, दिवाली, आदि विशेष अवसरों पर छात्रों को अपनी रुचि के अनुरूप कविता, कहानी, नाटक तथा निबंध लिखने को प्रोत्साहित किया जाए। इससे भी उनमें स्वतंत्र सृजनात्मकता का विकास संभव है।

xiii. **यात्रा तथा प्रकृति-वर्णन-** छात्रों को दर्शनीय तथा प्राकृतिक सौंदर्यपूर्ण स्थानों का भ्रमण कराया जाए। यात्रा के उपरांत उनसे यात्रा-वर्णन लिखने को कहा जाए। साथ-साथ प्राकृतिक सौंदर्य का वर्णन भी उनसे करवाया तथा लिखवाया जाए। इससे उनकी भाषा तो परिष्कृत होगी ही, उनकी पर्यवेक्षण शक्ति तथा सृजन-क्षमता का भी विकास हो सकेगा। इस क्रिया में सामूहिक प्रयास भी बहुत उपादेय होगा।

xiv. **कहानी, निबंध एवं कविता-लेख कला का अध्ययन -** आधुनिक युग में कहानी, निबंध तथा कविता-लेखन की सुंदर, सुबोध एवं वैज्ञानिक कला का विकास हो गया है। इस दिशा में अनेक पुस्तकें भी प्रकाशित हो चुकी हैं। योग्य शिक्षक के निर्देशन में इन पुस्तकों का अध्ययन छात्रों की सृजनात्मक शक्ति का सही दिशा में विकास कर सकता है।

xv. **रेडियो एवं टेलीविजन का श्रवण-दर्शन -** रेडियो तथा टेलीविजन से अनेक साहित्यिक कार्यक्रम प्रतिदिन सुनाए एवं दिखाए जाते हैं। शिक्षक के सही मार्गदर्शन में यदि इन कार्यक्रमों को

लगातार कुछ बड़ी अवधि तक छात्र सुनें-देखें तो निश्चय ही उनकी सृजनात्मक-शक्ति का विकास होगा।

उक्त सभी संसाधनों तथा उपायों की सफलता शिक्षक की योग्यता, संवेदनशीलता, परिश्रमशीलता, कल्पनाशीलता तथा साहित्यिक प्रवृत्ति पर निर्भर करती है। सही मार्गदर्शन में यदि उक्त क्रियाशीलन विद्यालय में चलाए जाएं तो छात्रों में साहित्यिक सृजनात्मक-शक्ति एवं प्रतिभा का विकास निश्चयपूर्वक किया जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

1. साहित्य का क्या अभिप्राय है?
2. संस्कृत साहित्य का वर्णन करें।
3. भाषा और साहित्य में क्या सम्बन्ध हैं?
4. संस्कृत भाषा का परिचय दीजिए?
5. भाषा अध्ययन से आप क्या समझते है?
6. भाषा एवं साहित्य द्वारा किस प्रकार सृजनात्मक कौशल की वृद्धि होती है?

2.7 सारांश

किसी भी भाषा में साहित्य का विकास उस भाषा की परिनिष्ठित अवस्था का सूचक होता है। एक बार जब कोई साहित्यिक रचना उस भाषा में हो जाती है तब अन्यान्य रचनाएँ भी पूरक, समवर्ती या प्रतिस्पर्धा के रूप में होने लगती है। भाषा-शिक्षण करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को भाषा की विविध संकल्पनाओं से परिचित होना अत्यावश्यक है।

भारतीय वाङ्मय के अध्ययन-अनुशीलन से विदित होता है कि ऋषि मुनियों के समय तक व्याकरण शास्त्र की अनेक विधाएँ प्रकाश में आ चुकी थीं। गार्ग्य, गालव, शाकटायन, शाकल्य आदि भाषा शास्त्रियों द्वारा प्रवर्तित व्याकरण शास्त्र की यह महान् थाती पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि के हाथों में आयी।

भाषा का जो विस्तृत स्वरूप तत्कालीन भारत की करोड़ो जनता द्वारा बोला जाता था, उसे इस मुनित्रय ने अपनी महान् कृतियों में बाँधा। उनके बाद संस्कृत के सैकड़ों वैयाकरणों ने वार्तिक, वृत्ति, व्याख्या और टीकाओं द्वारा व्याकरण ज्ञान की इस परंपरा को आगे बढ़ाया। वार्तिक, वृत्ति आदि मूल व्याकरण ग्रंथों की व्याख्या करते हैं और व्याकरण के दार्शनिक चिंतन के पक्ष को उभारते हैं। यह सर्वविदित तथ्य है कि संस्कृत विश्व की प्राचीनतम भाषा मानी जाती है और वैदिक संस्कृति संसार की प्राचीनतम संस्कृति संसार की प्राचीनतम संस्कृति। वैदिक साहित्य के सर्वप्रथम ग्रंथ वेद हैं। भारतीय संस्कृति के इतिहास में इसका अत्यंत महत्वपूर्ण एवं गौरवपूर्ण स्थान है।

भाषा एवं साहित्य के शिक्षण का परम उद्देश्य है छात्रों में साहित्यिक सृजनात्मक का विकास करना। वस्तुतः इसी उद्देश्य की पूर्ति में भाषा एवं साहित्य शिक्षण की सच्ची सफलता है। सामान्यतः लिखी एवं बोली गई भाषा को समझ लेना तथा अपने विचारों को लिखकर एवं बोलकर दूसरे तक पहुंचा देना- भाषा शिक्षण के उद्देश्य हैं।

किन्तु, छात्रों की सृजनात्मतक प्रतिभा तथा शक्ति को विकसित कर देना भाषा एवं साहित्य शिक्षण को पूर्णता एवं सार्थकता प्रदान करना है। छात्रों के अंदर सुसुप्त साहित्य-सृजन की प्रतिभा एवं संभावनाएं अनुकूल परिवेश तथा मार्गदर्शन पाकर विकसित एवं सक्रिय हो उठती है। योग्य एवं कल्पनाशील शिक्षक अपनी प्रतिभा, लगनशीलता तथा संवेदना के बल पर छात्रों की सृजनात्मक प्रतिभा को विकसित एवं परिष्कृत कर पाने में सफल होता है।

2.8 शब्दावली

1. **साहित्य -** साहित्य का सहज अर्थ है अपनी सभ्यता-संस्कृति,अपने परिवेश को अपने शब्दों में अपने दृष्टिकोण के साथ पाठकों, श्रोताओं के मध्य प्रस्तुत करना . पर यदि दृष्टिकोण,शब्द कृत्रिम आधुनिकता या आवेश से बाधित हो तो उसे साहित्य का दर्जा नहीं दे सकते।
2. **भाषा -** भाषा वह साधन है जिसके द्वारा हम अपने विचारों को व्यक्त करते है और इसके लिये हम वाचिक ध्वनियों का उपयोग करते हैं

2.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. झा, डॉ- नागेन्द्र, प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति, अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली, 2013
2. शर्मा, डॉ- उषा, संस्कृत शिक्षण, स्वाति पब्लिकेशन्स, जयपूर
3. शर्मा, डॉ- नन्दराम, संस्कृत शिक्षण, साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन, 2007
4. शर्मा , डॉ- उमाशंकर, संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्बा बुक्स, 2008

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. साहित्य की अवधारणा स्पष्ट करते हुए संस्कृत साहित्य का वर्णन करें।
2. संस्कृत भाषा एवं संस्कृत साहित्य का विस्तारपूर्वक व्याख्या करें।
3. ''भाषा एवं साहित्य एक ही सिक्के के दो पहलु है'' इस तर्क से क्या आप सहमत है? व्याख्या करें।
4. संस्कृत भाषा के वाक्य संरचना एवं पद-क्रियाका उदाहरण स्वरूप वर्णन करें।
5. भाषा की विधाओं द्वारा सृजनात्मक कौशल का विकास होता है? उदाहरण देकर स्पष्ट करें।
6. साहित्य द्वारा जीवन कौशल का किस प्रकार विकास संभव है? विस्तृत व्याख्या करें।

इकाई 3- संस्कृत भाषा तथा संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं का शिक्षण

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 पद्य शिक्षण
3.3.1 पद्य शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य
3.3.2 पद्य शिक्षण की विधियाँ
3.3.3 पद्य पाठ योजना
3.4 गद्य शिक्षण
3.4.1 गद्य शब्द की व्युत्पत्ति
3.4.2 गद्य पाठ के प्रकार
3.4.3 गद्य-शिक्षण अध्ययन की पद्धतियाँ
3.4.4 गद्य पाठयोजना
3.5 व्याकरण शिक्षण
3.5.1 व्याकरण शिक्षण के उद्देश्य
3.5.2 व्याकरण शिक्षण की विधियाँ
3.5.3 व्याकरण पाठ योजना
3.6 नाटक शिक्षण
3.6.1 नाटक शिक्षण के उद्देश्य
3.6.2 नाटक शिक्षण की विधियाँ
3.6.3 नाटक पाठ योजना
3.7 सारांश
3.8 शब्दावली
3.9 संदर्भ ग्रंथ सूची
3.10 निबंधात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

संस्कृत भाषा को राष्ट्रीय एकता की रीढ की हड्डी कहा जा सकता है क्योंकी तकनीकी तथा आध्यात्मिक शिक्षा के मध्य खाई को जोड़ने रूपी मनोरथ सिद्धि के लिए संस्कृत भाषा के समृद्ध साहित्य में चार वेदों से यात्रा आरम्भ होते अनेक रत्न प्राप्त हुये हैं जैसे- षट्दर्शनों पर आधारित उपनिषद्, भगवद्गीता, रामायण, महाभारत, अठारह पुराण। साहित्य क्षेत्र में रघुवंश, किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवध जैसे महाकाव्य पद्य साहित्य के अनमोल रत्न हैं तो कादम्बरी की समकक्षता करने वाला गद्य साहित्य में कोई अन्य ग्रन्थ नहीं हैं। हितोपदेश और पंचतन्त्र की शिक्षात्मक कहानियाँ सर्वप्रथम संस्कृत में लिखी गयी। नाटक-कला के आविष्कार का श्रेय भी इसी भाषा को दिया गया है। भास के तेरह नाटक उत्कृष्ट नाटक कला के ज्वलन्त उदाहरण है। इसी भाषा में पाणिनी का 'अष्टाध्यायी' के रूप में संस्कृत भाषा का व्याकरण के क्षेत्र में विवेचन एक आश्चर्यजनक बौद्धिक चमत्कार है। कोषकार्य के क्षेत्र में अमरसिंह का 'अमर कोष' एक कीर्ति स्तम्भ के रूप में विद्यमान है। भाषा के क्षेत्र में अनुसन्धान 'निघन्टु' के आने के साथ प्रारम्भ हुआ। ऐतिहारिक क्षेत्र में कल्हण का 'राजतरंगिणी' बाणभट्ट का 'हर्षचरितम्' आदि रचनाएँ प्राप्त होती है। तो साथ ही साथ विधि एवं राजनीति के क्षेत्र में 'मनुस्मृति एवं अर्थशास्त्र' जैसे ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। इसके अलावा संस्कृत भाषा का समृद्ध साहित्य भारतीयदर्शनशास्त्र, भौगोलिक एवं खगोलशास्त्र, गणित, ज्योतिषशास्त्र, आयुर्वेद, चिकित्साशास्त्र, सामाजशास्त्र, कामशास्त्र, संगीत शास्त्र जैसे अमूल्य रत्नों से दैदीप्यमान है।

छात्रों। अब आप समझ ही गये होगें कि संस्कृत भाषा का अध्ययन-अध्यापन क्यों जरूरी है। इतना समृद्ध साहित्य विश्व की किसी भी भाषा में नहीं मिलता है। संस्कृतभाषा के अध्ययन से न केवल बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास अपितु चारित्रिक व नैतिक विकास भी सर्वोपरि है। इसी भाषा में 'तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु', 'सत्यमेव जयते नानृतम्' इत्यादि सूक्तियाँ कई सारगर्भित सुभाषित मिलते हैं जिनमें हमेशा लोगों के कल्याण की कामना की जाती है। यथा-

''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्।।''

इस प्रकार इस संस्कृत भाषा के साहित्य में गद्यात्मक-पद्यात्मक-रचनात्मक-व्याकरण-नाटकादि विविध रूपों में कृतियाँ विद्यमान में हैं। और प्रत्येक को पढ़ाने के लिए अलग-अलग तरीके हैं। प्रत्येक का स्वरूप अलग है, विशेषताएँ पृथक है, उद्देश्य भिन्न हैं, पढ़ाने की विधियाँ भी समान नहीं हैं। इसलिए इस इकाई के माध्यम से हमें इनका विस्तृत रूप जानने का अवसर मिलेगा

प्रिय छात्रों! इस इकाई के माध्यम से हम पद्य शिक्षण, गद्य शिक्षण, व्याकरण शिक्षण एवं नाटक शिक्षण के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।

3.2 उद्देश्य

1. इस इकाई के द्वारा आप पद्य के स्वरूप संस्कृत पद्य शिक्षण के उद्देश्य, पद्यशिक्षण की विधियों व पाठयोजना से अवगत हो सकेगें।
2. इस इकाई के द्वारा छात्र गद्य के स्वरूप संस्कृत गद्य शिक्षण के उद्देश्य, गद्य शिक्षण की विशेषताओं, प्रकारों, विधियों व पाठयोजना आदि से अवगत होगें
3. इस इकाई के माध्यम से छात्र व्याकरण का सामान्य स्वरूप, व्याकरण शिक्षण के उद्देश्य, विधियों व पाठयोजना से अवगत होगें।
4. इस इकाई द्वारा छात्र नाटक का स्वरूप समझ सकेगें। संस्कृत नाटक शिक्षण के उद्देश्यों, विधियों व पाठ्योजना आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
5. प्रत्येक विधा की पाठयोजना दिये गये उदाहरण को अनुसरण करते हुये बनाना सीख सकेगें।
6. पाठयोजना के सभी सोपानों से अवगत होगें।

3.3 पद्य शिक्षण

सभी विधाओं में सबसे पहले हम पद्य शिक्षण का ज्ञान प्राप्त करेगें और इसके लिए हमें इस चार्ट के माध्यम से पहले काव्य के स्वरूप को समझना होगा-

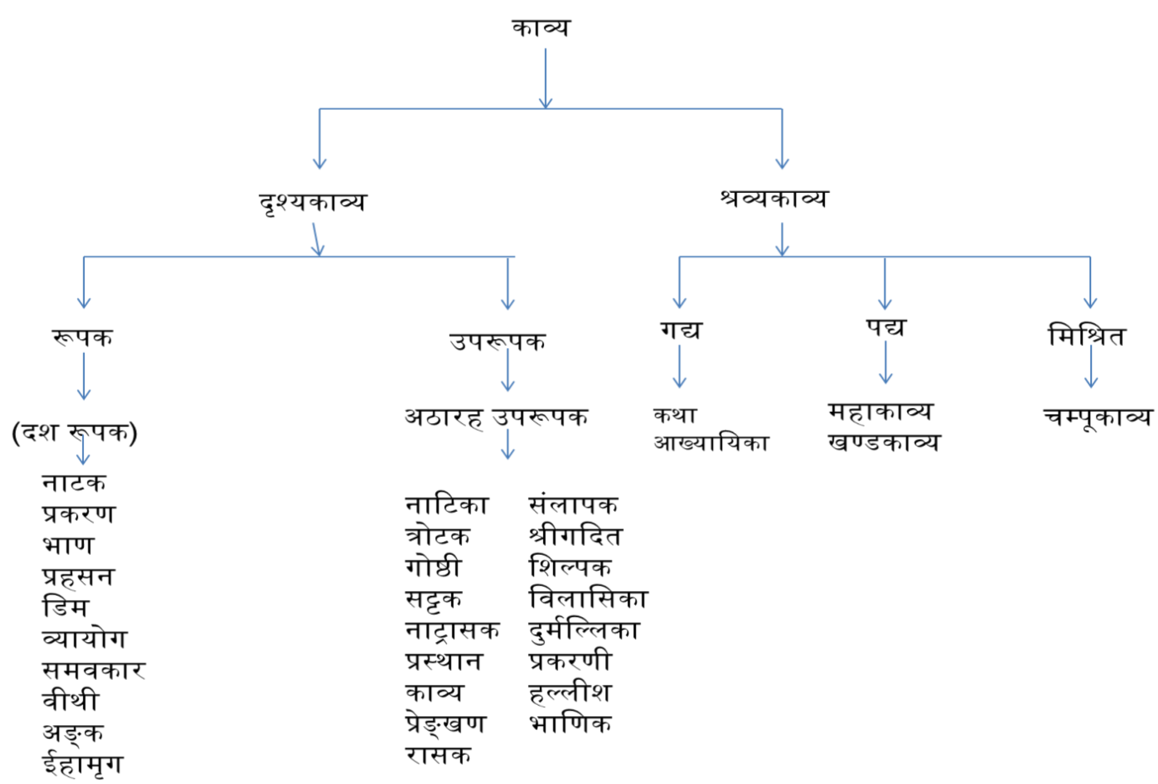

वस्तुतः 'छन्दोबध्द पदं पद्यम्' अर्थात् छन्दनियमों का परिपालन की गई श्लोक रूप रचनाएँ पद्य कहलाती हैं। वस्तुतः पद्य का आविर्भाव वाल्मीकि ऋषि के मुख से निकले हुये उस श्लोक से मानी जाती है जो क्रौञ्ची के विलाप को सुनकर अनायास ही बोल दिया गया-

''मा निषाद! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।''

रमणीय पदों को छन्दनियमानुसार समुचुत क्रम में योजित करना ही पद्य है। पद्य शिक्षण का प्रधान लक्ष्य रसास्वादन होता है।

3.3.1 पद्य शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य

पद्य शिक्षण के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं-

a. संस्कृत पद्य साहित्य के प्रति अभिरुचि जाग्रत करना।
b. गति-याति-लय-भावाभिनय द्वारा श्लोक पढ़ने में दक्षता प्राप्त करना।
c. श्रवणवाचनपठनलेखनादि कौशलों का विकास करना।
d. उच्चारणज्ञान में दक्षता उत्पादन करना।
e. छात्रों में कल्पना शक्ति एवं तर्कशक्ति का विकास करना।
f. छन्द सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना
g. अलङ्कार सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना
h. सर्जनान्मक शक्ति का संवर्धन करना
i. श्लोकों को कण्ठस्थ करने के लिए प्रेरणा देना

पद्य शिक्षण की विशेषताओं के वारे में यदि देखा जाये तो पद्यों में निहित रस की अनुभूति छात्रों को कराना साथ ही नैतिक मूल्य एवं आचरण सम्बन्धी व्याख्यान, महानुभावों के चरित्र का ज्ञान कराना। दैनन्दिन जीवन से पद्यों को जोड़ना। बोध-शक्ति की दृष्टि से विषय सामग्री का चयन सरल से जटिल के क्रम की ओर करना।

3.3.2 पद्य शिक्षण की कई विधियाँ

पद्य शिक्षण को पढ़ाने की कई विधियाँ हैं जिनमें कुछ प्रमुख विधियाँ इस प्रकार हैं-

i. परम्परागतविधि
ii. दण्डान्वयविधि
iii. खण्डान्वयविधि
iv. गीतनाट्यविधि
v. व्याख्याविधि
vi. आधुनिकविधि

परम्परागत पद्धति का ही दूसरा नाम भाषाऽनुवाद विधि भी है। इसमें अध्यापक स्वयं आदर्श वाचन करता है, पदविभागअन्वयादि करके उसका भावार्थ छात्रों को समझाता है।

दण्डान्वय विधि में सर्वप्रथम विशेषण का अन्वेषण किया जाता है फिर विशेष्यके साथ संयोजन किया जाता है। उसके बाद क्त्वा, ष्वुल, ल्यप् आदि प्रत्ययों का अन्वेषण किया जाता है। इस प्रकार प्रधान वाक्य का अन्वेषण करके आश्रित्यवाक्य को प्राप्त करते है। अन्वयप्रबोध में दण्डान्वय की परिभाषा इस प्रकार है-

''आद्ये विशेषणं योज्यं विशेष्यं तदनन्तरम्।
क्त्वाणमुल्ल्यप्प्रभृत्येवं पूर्वं दण्डान्वये भवेत्।।''

दण्डान्वयविधि में प्रधान वाक्य के अन्वेषण के लिए विभक्ति, प्रत्ययादि का ज्ञान होना जरूरी है। प्रधानक्रियापद से सम्बन्धित कृदन्तक्रियापदों को पूर्व में जोड़कर प्रधानक्रियापद को अन्त में स्थापित करते हैं। लक्षण में दिये गये प्रत्ययों का वाक्य में प्रयोग इस प्रकार होता है-

क्त्वान्तम्-गृहं **गत्वा** पश्यति (घर **जाकर के** देखता है)

ल्यबन्तम्-नेत्रे **निमील्य** निन्द्राति(नेत्र **बन्द करके** सोता है)

णमुलन्तम्- कथां स्मारं स्मारं हसति (कथा को याद कर -करके हँसता है)

उदाहरण-

आशीर्भिरभ्यर्च्य मुनिः क्षितीन्त्रदं प्रीनः प्रतस्थे पुनराश्रमाय।
तं पृष्ठतः प्रष्ठमियाय नम्रो हिंस्त्रेषुदीप्ताप्त धनुः कुमारः।।

विशेषण	विशेष्य	कृदन्तक्रियापद	प्रधानक्रियापद
प्रीतः	मुनिः	पुनः	
	क्षितीन्त्रदम्		
	आशीर्भिः	अभ्यर्च्य	प्रतस्थे
	आश्रमाय		
हिंस्त्रेषुदीप्ताप्तधनुः			
नम्र	कुमारः		
प्रष्ठं	तं	पृष्ठतः	इयाय

खण्डान्वय विधि में संज्ञा एवं सर्वनाम को पहचानने के लिए पहले कौन किसको, किसके द्वारा किस के लिए (कः, कम्, केन, कस्मै) इन्यादि पदों के प्रयोग द्वारा प्रश्न पूछे जाते हैं। विशेषणों के संज्ञान के लिए आदि पदों का प्रयोग किया जाता है। क्रिया (कीदृशः, किम्भूतः, कथम्भूतः) कथं, कदा, कुत्र, कुतः) लिए

तथा क्रिया विशेषणों के ज्ञान के (किं करोति) ज्ञान के लिए इत्यादि पदों का प्रयोग करते हुये प्रश्न पूछे जाते हैं। इस विधि का दूसरा नाम आ (किमर्थम्कांक्षा विधि भी है। इसका लक्षण निम्नलिखित है-

"कर्तुकर्मक्रियास्तावत् श्लोके योज्यास्ततः परम्,
किमो रूपं पुरस्कृत्य तृतीयादि नियोजयेत्।
ल्यवन्तञ्च तुमन्तञ्च क्त्वान्तं कर्मविभूषितम् ,
खण्डान्वये पुनः प्रश्नपूर्वयमन्ते प्रयोजयेत्"।

छात्रों इस लक्षण का अर्थ आपको ऊपर सन्दर्भानुसार बतला दिया गया है। अब इसका एक उदाहरण समझते हैं-

रामो राजमणिः सदा विजयते,रामं रमेशं भजे ,
रोमोणाभिहता निशाचरचम् रामाय तस्मै नमः।
रामान्नास्ति परायणं परतरं, रामस्य दारोऽस्म्यहम्,
रामे चित्तलयः सदा भवतु मे हे राम,! मामुद्धर।।

i. प्रथमपादे क्रियापदं किम्?(विजयते)
(प्रथमपाद में क्रियापद क्या है?)
ii. कः विजयते? (रामः विजयते)
(कौन विजयी होता है)?
iii. रामः कदा विजयते? (रामः सदा विजयते)
(राम कब विजयी होते हैं)?
iv. कीदृशः रामः सदा विजयते? (राजमणिः रामः सदा विजयते)
कौन से राम सदा विजयी होते हैं?
v. भजेकः भजे? (अहं भजे)
(कौन भजन कर?)
vi. अहं कं भजे? (अहं रामं भजे)
(मैं किसको भजूँ)
vii. अहं कीदृशं रामंभजे? (अहं रमेशं रामं भजे)
(मैं कौनसे राम का भजन करूँ?)

अभिहता

i. केन अभिहता? (रामेण अभिहता)
(किसके द्वारा मारे गये?)

ii. रामेण का अभिहता? (रामेण निशाचरचम् अभिहता)?
(राम के द्वारा कौन मारे गये?)

नमः

i. कस्मै नमः? (तस्मै नमः)
(किसको नमस्कार है?)

ii. तस्मै कस्मै नमः? (तस्मै रामाय नमः)
(उसको किसको नमस्कार है?)

नस्ति

i. किम् नास्ति? (परतरं नास्ति)
(क्या नहीं है?)

ii. कीदृशं परतरं नास्ति? (परायणं परतरं नास्ति)
किस प्रकार का परतर नहीं है?

iii. कस्मान् परायणं परतरं नास्ति (रामान् परायणं परतरं नास्ति)

किसके परायण से परतर नहीं है?

आस्मि

i. कः आस्मि? (दासः अस्मि)
(कौन हूँ)

ii. कस्य दासः अस्मि?(रामस्य दासः अस्मि)
(किसका दास हूँ)

भवतु

i. कदा भवतु? (सदा भवतु)
(कब हो?)

ii. कः सदा भवतु? (चित्तलयः सदा भवतु)
(क्या सदा हो?)

iii. कस्य चित्तलयः सदा भवतु? (मे चित्तलयः सदा भवतु)
किसका चित्त सदा लीन हो?

iv. कस्मिन् मेचित्तलयः सदा भवतु?(रामे मे चित्तलयः सदा भवतु)
(किसमें मेरा चित्त सदा लीन हो?)

उद्धार

i. कः उद्धर? (भो राम! उद्धर)

कौन उद्धार करे?

ii. भो राम! कम् उद्धर? (भो राम! माम् उद्धर)
(हे राम! किसका उद्धार करो)

प्रिय छत्रों! दण्डान्वय व खण्डान्वय विधि का प्रयोग पद्य पढाते समय कैसे करना है? यह आप उदाहरणों से भलीभाँति समझ जायेगें। गीतनाट्यविधि में गीत कविता या पद्य को अभिनय सहित गाकर पढ़ाया जाता है। व्याख्या विधि में श्लोक का पदविभाग, अन्वय, क्रियापदज्ञान, प्रतिपादिकार्थज्ञान, शब्दज्ञान, धातुज्ञान, वचनज्ञान, लिङ्गज्ञान, व्युत्पत्ति, कोषज्ञान आदि के बारे में चर्चा की जाती है। व्याख्या का लक्षण इस प्रकार है-

"पदच्छेदः पदार्थोक्ति विग्रहो वाक्ययोजना।
आक्षेपोऽथ समाधानं व्याख्यानं पञ्चधा स्मृतम्।।"

आजकल विशिष्ट प्रशिक्षण महाविद्यालयों में आधुनिक प्रणाली का आश्रय लिया जाता है। आधुनिक प्रणाली में हर्बट महोदय की पञ्चपदी प्रणाली पर आधारित है। इसमें निम्न सोपान होते हैं-

सामान्य परिचय-विद्यालय का नाम, कक्षा, वर्ग, छात्रसंख्या,दिनाङ्क, विषय, प्रकरण, छात्राध्यापक का नाम

1. सामान्योद्देश्य
2. विशिष्टोद्देश्य
3. सहायक समाग्री
4. पूर्वज्ञान विशिष्ट सामग्री
5. प्रस्तावना
6. उद्देश्यकथन
7. प्रस्तुतीकरण
    i. आदर्शवाचन
    ii. अनुवाचन
    iii. अशुद्धिसंशोधन
8. पाठ विकास
    i. शब्दार्थ
    ii. भाषानुवाद
    iii. अन्वय(दण्डान्वय/खण्डान्वय)
    iv. वस्तुविश्लेषणात्मकप्रश्न
    v. अध्यापककथन और तुलना
9. सौन्दर्यानुभूत्यात्मक प्रश्न

10. सस्वरवाचन
11. कक्ष्याकार्य
12. गृहकार्य

छात्रों! अब हम पद्य पाठयोजना का निर्माण करना सीखेगें। इसके लिए हम किसी भी पद्य का चयन कर उपरि लिखित सोपानानुसृत्य पाठयोजना बना सकते हैं। उदाहरण के लिए एक पाठयोजना प्रस्तुत है।

3.3.3 पद्य पाठ योजना

विद्यालय का नामः	वर्गाः
कक्षाः	मध्यायुः
छात्रसंख्याः	अवधिः
कालांशः	दिनाङ्कः
विषयः	प्रकरणः

छात्राध्यापक/छात्राध्यापिका का नामः ....

सामान्य उद्देश्य

1. गति,यति, लय एवं भार के अनुसार छन्द पाठ करने की योग्यता उत्पन्न करना।
2. कविता के मुख्य भावों को ग्रहण करने की योग्यता प्रदान करना।
3. काव्य-सौन्दर्य की अनुभूति करने की क्षमता प्रदान करना।
4. छात्रों को कविता की विभिन्न शैलियों से परिचित कराना।
5. स्वयं काव्य-रचना करने के लिए छात्रों को प्रोत्साहित करना।
6. छात्रों की कल्पना शक्ति का विकास करते हुए उन्हें काव्यगत रस एवं भाव का आनन्द लेने के योग्य बनाना।

विशिष्ट उद्देश्य- छात्रों के समस्त कौशलों का विकास करना। यथा-

1. आदर्शवाचन के माध्यम से श्रवणकौशल का विकास।
2. अनुवाचन के माध्यम से पठनकौशल का विकास।
3. प्रश्नोत्तर के माध्यम से कथनकौशल का विकास।
4. कक्ष्याकार्य- गृहकार्य के माध्यम से लेखनकौशल का विकास।
5. छात्रों को विषयगत विशिष्टज्ञान प्रदान करना।

सहायक सामग्री- लपेटश्यामफलक, संकेतिका, चॉक, मार्जनी आदि।

2. **विशिष्ट सामग्री-** पाठ से सम्बन्धित चित्र, मॉडल (प्रतिकृति) आदि।

पूर्वज्ञान - छात्र जानते हैं कि राम और कृष्ण अधिकांश भारतीयों द्वारा भगवान के रूप में पूजे जाते हैं। वे रामनवमी एवं जन्माष्टमी का महत्व जानते हैं। वे यह भी जानते हैं कि महाभारत का युद्ध कौरवों तथा पाण्डवों में हुआ एवं श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया।

लक्षिताधिगम	छात्राध्यापक क्रिया	छात्र क्रिया	शिक्षणप्रतिफल
	प्रस्तावना		
1.छात्रों में पाठ के प्रति रुचि जागृत करना। 2. छात्रों के पूर्ण ज्ञान का नवीन ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करना।	प्र.1. हम रामनवमी क्यों मानते हैं ? प्र.2. जन्माष्टमी मनाने का क्या कारण है? प्र.3. महाभारत का युध्द किस-किसके बीच हुआ? प्र.4. भगवान कृष्ण ने अर्जुन को क्या उपदेश दिया था? प्र.5. यह उपदेश क्या था?	उ. राम का जन्मदिन है। उ. कृष्ण का जन्मदिन है। उ. कौरव एवं पाण्डवों के बीच। उ. गीता का उपदेश दिया था। उ. समस्यात्मक प्रश्न	छात्र विषय केन्द्रित होते हैं।
	उद्देश्यकथन		
पाठ की जानकारी देना	आज हम गीता के दो श्लोकों का अध्ययन करेगें जो भगवान कृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिए गए।	छात्र विशिष्टज्ञान प्राप्ति के लिए उत्सुक होते हैं।	छात्रों को उद्देश्य का ज्ञान होता है।
	प्रस्तुतीकरण		
	यदा यदा हि धर्मस्य, ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य. तदात्मानं सृजाम्यहम्।। परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय, संभावामि युगे युगे।।	छात्र श्लोकों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं।	पाठ्यवस्तु का ज्ञान होता है।
	आदर्शवाचन		
श्रवण-वाचन कौशल का विकास	छात्राध्यापक दोनों श्लोकों का उचित लय एवं भावपूर्ण मुद्रा में आदर्श- वाचन करता है।	छात्र ध्यानपूर्वक सुनते है।	छात्रों को दोनों कौशलों की

<table>
<tr><td></td><td></td><td></td><td>जानकारी प्राप्त होती है।</td></tr>
<tr><td>लोअताधिगम

पठन कौशल का विकास

संशोधन क्षमता का विकास

नूतन पदों का परिचय</td><td>छात्राध्यापक्रिया
अनुवाचन
कतिपथ छात्रों द्वारा व्यक्तिगत रूप से एक- एक करके श्लोकों का सस्वरवाचन छात्राध्यापक द्वारा करवाया जाता है।
अशुद्धि संशोधन
छात्रों के द्वारा अनुवाचन में होने वाली अशुद्धियों का संशोधन छात्राध्यापक श्यामपट्ट के माध्यम से करता है।
शब्दार्थ
<table>
<tr><th>शब्द</th><th>अर्थ</th></tr>
<tr><td>ग्लानि</td><td>ह्रास,अवनति</td></tr>
<tr><td>भारत</td><td>अर्जुन</td></tr>
<tr><td>अभ्युत्थानम्</td><td>उन्नति</td></tr>
<tr><td>आत्मानम्</td><td>स्वयं को</td></tr>
<tr><td>परित्राणाय</td><td>रक्षा के लिए</td></tr>
<tr><td>साधूनां</td><td>सज्जनों को</td></tr>
<tr><td>दुष्कृताम्</td><td>पापियों को</td></tr>
<tr><td>विनाशाय</td><td>नाश के लिए</td></tr>
<tr><td>संस्थापनार्थाय</td><td>स्थापना करने के लिए</td></tr>
</table></td><td>छात्रक्रिया

छात्रक्रम से अनुवाचन करते है।

छात्रा अशुद्धियों को शुद्ध करते हैं तथा शुद्ध उच्चारण करते है।

छात्र काठिन्य निवारण को समझते हैं और अपनी उत्तरपुस्तिका में लिखते हैं।</td><td>शिक्षणप्रतिफल

छात्र वाचन में प्रवीण होते हैं।

शुद्धोच्चारण का विकास होता है।</td></tr>
<tr><td>भाषानुवाद क्षमता का विकास</td><td>भाषानुवाद
अध्यापक छात्रों के सहयोग से दोनों श्लोकों का अनुवाद करता है।</td><td>छात्र अनुवाद में सहयोग करके ध्यानपूर्वक सुनते है।</td><td>अनुवादकौशल से छात्रों का परिचत होना</td></tr>
</table>

खण्डान्वय विधि से परिचय	**अन्वय** खण्डान्वय विधि द्वारा छात्राध्यापक सरलता से श्लोंकों का अन्वय करता है।	छात्र छात्राध्यापक द्वारा पूछे गए प्रश्नों को ध्यानपूर्वक उत्तर देते हैं।	पद्य की विधियों से छात्रों का परिचय होना।

लक्षिताधिम	छात्राध्यापकक्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
(i) अधीतज्ञान का परीक्षण (ii) विषय के प्रति ध्यानाकर्षण	**वस्तुविश्लेषणात्मकप्रश्न** **प्र.1.** इन श्लोकों का वक्ता कौन है? प्र.2. भगवान श्रीकृष्ण किससे कहते है? प्र.3. भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को किस नाम से सम्बोधित करते हैं?	छात्र प्रश्नों का सोच-समझकर एवं ध्यानपूर्वक देते हैं।	अधीतज्ञान परीक्षण
(i) श्रवणकौशल (ii) विकास तुलनात्मक विकास अधीतज्ञान का दृढ़ीकरण	**अध्यापककथन एवं तुलना** छात्राध्यापक दोनों श्लोकों का अर्थ सम्पूर्ण भावात्मक तरीके से एवं दूसरे श्लोकों के साथ तुलना करके बताता है। **सौन्दर्यानुभूत्यात्मक प्रश्न** प्र.1. दोनों श्लोक कहाँ से लिए गए हैं? प्र.2. श्लोकों के वक्ता एवं श्रोता कौन हैं? प्र.3. 'अभ्युत्थानम्' इसका अर्थ क्या है? प्र.4. भगवान किसकी रक्षा के लिए जन्म लेते है? प्र.5. भगवान किसके नाश के लिए उत्पन्न होते हैं? प्र.6. भगवान के अवतार का और क्या कारण है?	छात्र एकाग्र होकर श्लोकों का अर्थ समझते हैं एवं तुलना के द्वारा दूसरे श्लोक के बारे में ज्ञान प्राप्त करते हैं। छात्र प्रश्नों का उत्तर देते हैं।	श्लोकों की तुलना कैसे की जाती है इसकी जानकारी होना। छात्रों के ज्ञान में परिपक्वता

लक्षिताधिम	छात्राध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
द्रुतपठनकौशल का विकास	छात्राध्यापक सम्पूर्ण यति गति एवं लय के साथ दोनों श्लोकों का वाचन छात्रों के सहित करता है।	छात्र छात्राध्यापक के साथ सस्वर वाचन करते है।	सस्वरवाचन की क्षमता
	कक्ष्याकार्य		छात्रों की अभ्यास प्रवृत्ति
अभ्यासप्रवृत्ति का विकास और अधिगमज्ञान का परीक्षण	1. छात्राध्यापक कुछ वस्तुनिष्ठ प्रश्न पूछता है। 2. उपसर्ग सन्धि, समास से सम्बन्धित कुछ प्रश्न पूछता है।	छात्र अभ्यासकार्या विचार करके करते हैं।	विकसित होती है। अवकाश का सदुपयोग
स्वाध्यायप्रवृत्ति का विकास अवकाश का सदुपयोग	**गृहकार्य** 1. श्लोकों का अर्थ अपनी भाषा में लिखकर लायें। 2. दोनों श्लोकों को कण्ठस्थ करकर लायें।	सभी छात्र घर पर गृहकार्य करते हैं तथा अवकाश का सदुपयोग करते हैं।	

3.4 गद्य शिक्षण

संस्कृत शिक्षण की विविध विधाओं में गद्य शिक्षण भी प्रमुख है। गद्य में कवि को अपनी शैली के विकास में व्यक्तिगत गुणों का ही आश्रय लेना पड़ता है इसलिए गद्य को कवियों की कसौटी कहा जाता है-'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'। गद्य शिक्षण द्वरा कथाओं, आख्यायिकाओं, उपन्यासों, निबन्धों, संस्मरणों, आत्मकथाओं को शिक्षक सरल भाषाशैली द्वारा छात्रों तक संप्रेषित करने में सक्षम होते हैं। छात्र भी आसानी से भावग्रहण कर लेते है। संस्कृत भाषा में कई गद्य कथायें भाषा के उत्कृष्टतम अलंकृत रूप में भी झलकती है। अतएव 'कादम्बरी रसास्वादं विना? आहारोऽपि न रोचते' यह सूक्ति संस्कृत जगत में गद्य विधा के लिए दैदीप्यमान है। इन रसाप्लावित हृदयाह्लादकारी गद्यों को नवपीढी तक संप्रेषित करने के लिए संस्कृत भाषा में गद्यशिक्षण का ज्ञान अनिवार्य है। अतः इस पाठ्यक्रम में 'गद्यशिक्षण' भी चयनित बिन्दुओं में अग्रगण्य है।

3.4.1 गद्य शब्द की व्युत्पत्ति

गद्य शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की 'गद्' धातु से हुई है जिसका अर्थ है- 'स्पष्ट कहना। आचार्य विश्वनाथ के अनुसार 'वृत्तबन्धोज्झितं गद्यम्' अर्थात् 'छन्द बन्धहीन' शब्दार्थ योजना गद्य है। गद्य की परिभाषा देते हुए दण्डी ने 'अपाद' शब्द का उल्लेख किया है अर्थात् जिस रचना में छन्दशास्त्र के गण, मात्राओं आदि का बन्धन न हो वह गद्य है। संस्कृत गद्य साहित्य का उद्भव भी वैदिक काल से हुआ है। कृष्ण यजुर्वेद ब्राह्मण

ग्रन्थों तथा उपनिषदों में गद्य मिलते हैं। निरुक्त तथा महाभारत में भी गद्य की रचना मिलती है। पतञ्जलि मुनि का विश्व विख्यात व्याकरण ग्रन्थ महाभाष्य भी गद्य में ही लिखा गया है। संस्कृत भाषा का गद्य साहित्य निम्न वर्गों में बाँटा गया है-

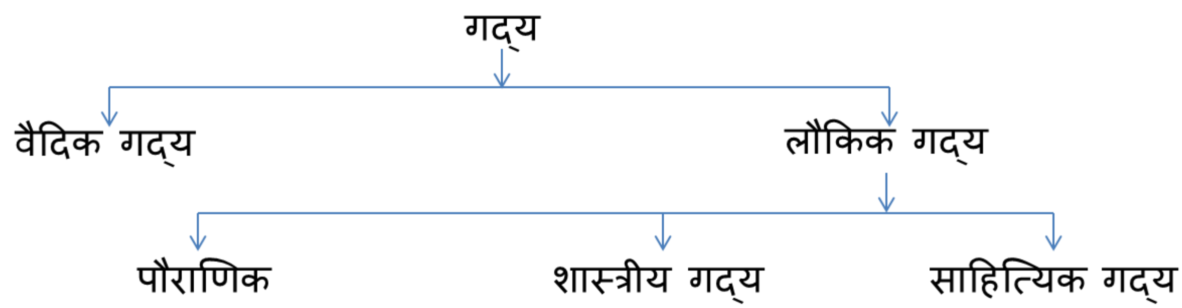

संस्कृत गद्य काव्य के तीन उन्नायक माने जाते हैं। दण्डी, सुबन्धु तथा बाणभट्ट। इस काल में गद्य का चरम विकास हुआ। दशकुमारचरित, वासवदत्ता, कादम्बरी जैसी गद्य रचनायें गद्य साहित्य की अमूल्य निधियाँ हैं।

प्रिय छात्रों, यह तो सर्वविदित है ही कि प्रत्येक विधा कि अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। गद्य शिक्षण की भी कुछ विशेषताएँ हैं। जैसे-

1. संस्कृत साहित्य में गद्य के अन्तर्गत हम कथाओं तथा आख्यायिकाओं को रख सकते हैं।
2. संस्कृत गद्य के माध्यम से शब्दों की संरचना, उपसर्ग, प्रत्यय, संधि, समास आदि का ज्ञान सरलता से हो जाता है।
3. संस्कृत गद्य द्वारा सभी प्रकार के विचारों, कोमलभावों, दार्शनिक तत्त्वों और उपदेशात्मक शिक्षाप्रद मूल्यों को आभिव्यक्त किया जा सकता है।
4. संस्कृत गद्य की सबसे बड़ी विशेषता उसकी संक्षिप्तता है। जैसे- 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' इस छोटी सी सूक्ति का काफी विस्तार किया जा सकता है।
5. प्रिय छात्रों, अब तक आप गद्य के सामान्य स्वरूप, वर्ग व विशेषताओं से अवगत हो चुके होगें। अब जानना है कि किस स्तर पर गद्य शिक्षण पढ़ाने से किन उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है। गद्य शिक्षण के उद्देश्य शैक्षिक स्तरों के अनुसार निश्चित किये गये हैं।

प्राथमिक स्तर (कक्षा 6, 7 व 8)

i. छात्रों के शब्द भण्डार में वृद्धि हो, ताकि वे नये शब्दों का अर्थ समझकर उनका उचित प्रयोग कर सकें।

ii. छात्र पाठगत ध्वनियों, शब्दों एवं वाक्यों का शुद्ध उच्चारण कर सकें।
iii. उन्हें वे संस्कृत भाषा का परिचय प्राप्त कर सकें।
iv. छात्र पाठगत भावों एवं विचारों को ग्रहण कर सकें।

माध्यमिक स्तर (कक्षा 9, 10, 11 व 12)

i. छात्रों को विविध गद्य शैलियों से परिचित कराना।
ii. छात्रों के शब्द भण्डार और सूक्ति भण्डार में वृद्धि करना
iii. छात्रों को पाठ्यगत आदर्शों से प्रेरणा लेकर अपने चरित्र का निर्माण कर सकने की योग्यता प्रदान करना
iv. छात्रों में लेखक के भाव के अनुसार गद्य- पाठ का वाचन करने की क्षमता का विकास करना।
v. छात्रों में संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग उत्पन्न करना, व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने में सहायता देना व उनमें कल्पनात्मक शक्ति का विकास करना।

उच्चस्तर (स्नातक कक्षाएँ)

i. कल्पना, तर्क, निरीक्षण व समीक्षा शक्ति का उच्चस्तरीय विकास करना।
ii. संस्कृत गद्य की विभिन्न शैलियों का ज्ञान परिषुष्ट करना
iii. संस्कृत में भावाभिव्यक्ति की क्षमता को सुदृढ़ करना।
iv. सर्जनात्मक शक्ति का विकास करना।
v. संस्कृत साहित्य की दूसरे साहित्य से तुलनात्मक अध्ययन की क्षमता का विकास करना।
vi. नवीन साहित्यिक प्रवृत्तियों से परिचित करवाना।

3.4.2 गद्य पाठ के प्रकार

संस्कृत गद्य शिक्षण पढ़ाने से स्तरानुसार छात्र किन-किन उद्देश्यों में सफलता प्राप्त कर सकेगें, इससे आप सभी परिचित हो चुके हैं। अब गद्य पाठ के प्रकारों व गद्य पाठ दो प्रकार के होते हैं।

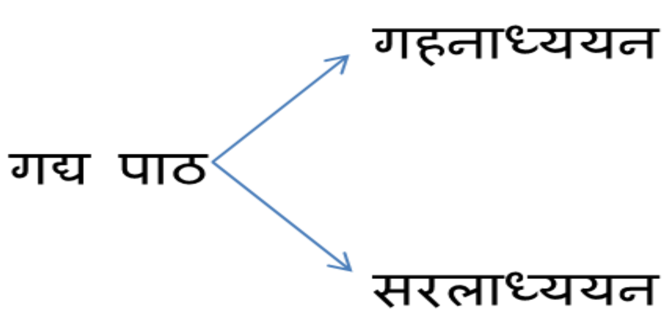

गहनाध्ययन में वर्णन, जीवनी, निबन्ध, यात्रा, वर्णन, संस्मरण आदि विधाओं के पाठ होते हैं। ये पाठ अर्थग्रहण, विषयवस्तु का ज्ञान, भाषा तत्त्वों का ज्ञान, वाचन, रुचि, अभिव्यक्ति अधिवृत्ति आदि उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।

सरलध्ययन में कहानी, संवाद, एकांकी आदि विधाओं के पाठ होते हैं। इसकी भाषा सरल होती है। बालक की पढ़ने में रुचि का विकास करना, द्रुतगति से मौन वाचन के योग्य बनाना, अर्थग्रहण,सारांश ग्रहण, केन्द्रीय भाव बोध, चारित्रिक विकास करना आदि मुख्य उद्देश्य हैं।

गहनाध्ययन में प्रस्तुत सामग्री का सूक्ष्म रूप से अध्ययन करवाया जाता है जबकि सरलाध्ययन में प्रस्तुत सामाग्री का शीघ्रता से अध्ययन करके तद्गत भावों को ग्रहण करने की योग्यता उत्पन्न करना है।

गद्यांश में कठिन शब्दों का अर्थ विविध विधियों के माध्यम से छात्रों द्वारा निकलवा सकते हैं-

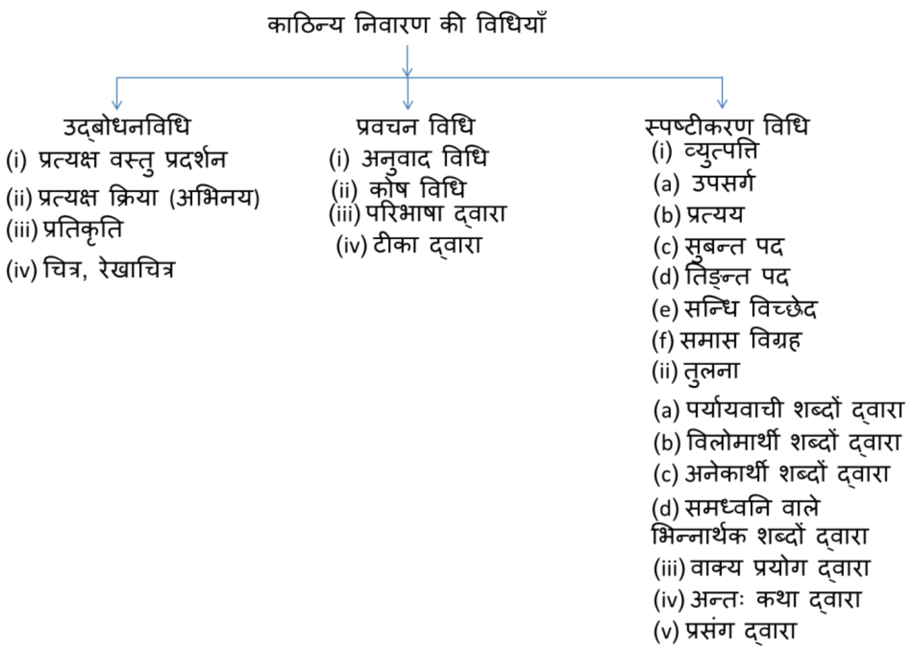

गद्य पढ़ाते समय

प्रिय छात्रों! यदि आप गद्य पढते समय कठिन शब्दों का अर्थ छात्रों को सरल ढंग से समझाना चाहते है तो उपर्युक्त विधियचों का सहारा ले सकते हैं। किसी शब्द का अर्थ प्रत्यक्ष वस्तु दिखाकर जैसे 'इयं नासिका, इदम् उदरम्, इदंपत्रम्' समझा सकते है। 'आगच्छति, गच्छति, हसति' आदि क्रियाओं को प्रत्यक्ष अभिनय द्वारा स्पष्ट किया जा सकता हैं। जिनके साक्षात् दर्शन करवाना दुर्लभ है. उनको प्रतिकृति बनाकर 'ताजमहलम्, बुद्धः'समझा सकते हैं। जिनके चित्र हम बना सकते हैं अथवा रेखाओं द्वारा चित्रांकित कर सकते हैं, उन्हें चित्र व रेखाचित्र बनाकर समझाया जा सकता है। इस प्रकार नवीन शब्दों का अर्थ समझाने के लिए दृश्य-श्रव्य या अभिनय द्वारा अर्थावगमन कराने में उद्बोधन विधि सहायक है।

प्रवचन विधि में शिक्षक किसी न किसी रीति से स्वयं अर्थ बता सकता है। जैसे- संस्कृत भाषा का मातृभाषा में अनुवाद करके समझा सकता है। शब्द कोष बढाने व पर्यायवाची शब्दों का ज्ञान कराने के लिए कोष विधि का प्रयोग किया जा सकता है। जैसे-

1. अर्णव- सागरः, 'समुन्द्रोऽब्धिरकूपारः पारावरः सरित्पतिः'
उदन्वान्, उदधिः सिन्धुः सरस्वान् सागरोऽर्णवः इत्यमरः।

पारिभाषिक शब्दों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए शब्द की परिभाषा बताना आवश्यक होता है जैसे- जातकर्म,उपवास उच्च स्तर पर गद्य शिक्षण में शब्दों की व्याख्या करने, उनका भाव बताने के लिए टीका विधि का प्रयोग किया जाता है। इसमें प्रसंगवश कोष विधि, व्युत्पत्ति विधि, प्रसंग विधि, प्रयोग विधि का यथास्थान आवश्यकतानुसार समावेश रहता है।

जहाँ पर अन्य विधियाँ काम नहीं करतीं, वहाँ कठिन शब्दों का अर्थ व्युत्पत्ति, तुलना, वाक्य प्रयोग और प्रसंग द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। इसमें शब्द की गहराई पर विचार किया जाता है. अमुक शब्द में कौनसा उपसर्ग है? धातु क्या है? प्रत्यय क्या है? इन सब का अलग-अलग अर्थ क्या है? इस पर विचार किया जाता है।

3.4.3 गद्य-शिक्षण की पद्धतियाँ

गद्य-शिक्षण का अध्ययन किन-किन पद्धतियों के माध्यम कराया जा सकता है, इस विषय पर चिन्तन के फलस्वरूप अधोलिखित पद्धतियाँ उभरती हैं-

- गद्य शिक्षणपद्धतिः →
  - परम्परागतपद्धति
  - प्रश्नोत्तरपद्धति
  - कथा- कथनपद्धति
  - आधुनिकी पद्धति

परम्परागत पद्धति में अध्यापक स्वयं एक-एक वाक्य को पढ़ते हूये कठिन पदों का अर्थ समझाते हुये व्याख्या करते हैं। **प्रश्नोत्तर पद्धति**में प्रत्येक वाक्यानुसार प्रश्न पूछते हुये, छात्रों से उत्तर प्राप्त हुये अध्यापक पाठ प्रवर्धन करते हैं। **कथा कथन पद्धति** में पाठनीय कथा से सम्बन्धित एक कथा पहले अध्यापक द्वारा सुनाई जाती है और छात्रों में कथा के प्रति रुचि उत्पन्न की जाती है। आधुनिक **हर्बटपञ्चपदी प्रणाली** पर आधारित है। पाठ पढाने से पहले पूर्व ज्ञान पर आधारित प्रस्तावना की जाती है। उसके बाद आदर्श वाचन, अनुकरण वाचन, त्रुटि संशोधन किया जाता है। फिर पाठ विकास किया जाता है जिसमें छात्र क्रिया प्रधान होती है। फिर सारकथन, मौनवाचन, पुनरावृत्ति प्रश्न, कक्षाकार्य, गृहकार्य, मूल्याङ्कन आदि सोपानों का परिपालन किया जाता है।

अब हम संस्कृत गद्य शिक्षण के सोपानों के विषय में जानेगें। सबसे पहले छात्राध्यापक का नाम, जिस विद्यालय में पढ़ाते हैं, उस विद्यालय का नाम, पढ़ायी जाने कक्षा, छात्रसंख्या, वर्ग इत्यादि सामान्य आवश्यक विवरण लिखा जाता है। फिर पढ़ायी जाने वाली गद्य के उद्देश्य-

(1) सामान्य उद्देश्य (2) विशिष्ट उद्देश्य

(3) सहायकसामाग्री (4) पूर्वज्ञान

(5) प्रस्तावना (6) उद्देश्य-कथन

(7) विषयोपस्थापन-

(क) पाठ्य-सामग्री (अन्विति का उल्लेख)

(ख) शिक्षक द्वारा आदर्श वाचन

(ग) छात्रों द्वारा अनुवाचन

(घ) अशुद्धिसंशोधन

(8) विस्तृत व्याख्या

(क) काठिन्य निवारण

(ख) बोध प्रश्न

(9) मौनवाचन

(10) कक्षाकार्य

(11) पुनरावृत्ति प्रश्न

(12) गृहकार्य

गद्य शिक्षण के सोपानों तक अब आप जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। अब इन सोपानों को क्रमबद्ध तरीके से व्यवस्थित करते हुये हम एक गद्य पाठयोजना आपके लिए उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत कर रहे हैं-

3.4.4 गद्य पाठयोजना

विद्यालय का नामः	वर्गः
कक्षाः	मध्यायुः
छात्रसंख्याः	अवधिः
कालांशः	दिनाङ्कः
विषयः	प्रकरनः

छात्राध्यापक/छात्राध्यापिका का नामः

वर्गः

सामान्य उद्देश्यः-

i. छात्रों को इस योग्य बनाना कि वे पाठगत ध्वनियों, शब्दों एवं वाक्यों का शुद्ध उच्चारण कर सकें।
ii. वे पाठगत भावों एवं विचारों को ग्रहण कर सकें।
iii. नूतनपदों का परिचय प्राप्त कर सकें।
iv. पाठ के प्रति उनमें अनुराग उत्पन्न हो सके।
v. उन्हें इस योग्य बनाना कि वे पाठगत आदर्शों से प्रेरणा लेकर अपने चरित्र का निर्माण कर सकें।

विशिष्ट उद्देश्य-

1. छात्रों के समस्त कौशलों का विकास करना यथा-

i. आदर्शवाचन के माध्यम से श्रवणकौशल का विकास।
ii. अनुवाचन के माध्यम से पठनकौशल का विकास।
iii. प्रश्नोत्तर के माध्यम से कथनकौशल का विकास।
iv. कक्ष्याकार्य- गृहकार्य के माध्यम से लेखनकौशल का विकास।

2. छात्रों को विषयगत विशिष्टज्ञान प्रदान करना।

सहायक सामग्री- (i) सामान्य- लपेटश्यामफलक, संकेतिका, चॉक, मार्जनी आदि।

विशिष्ट- पाठ से सम्बन्धित चित्र, मॉडल (प्रतिकृति) आदि।

पूर्वज्ञान- छात्र सूर्योदय के विषय में सामान्य रूप से पूर्वपरिचित हैं।

लक्षिताधिगम	छात्राध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
	प्रस्तावना		
(1) छात्रों में पाठ के प्रति रुचि जाग्रत होती है।	प्र1. सूर्य अस्त कब होता है?	उ. सायंकाल को	छात्र विषय केन्द्रित होते हैं।
(2) छात्रों को पूर्वज्ञान का नवीन ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित होता है।	प्र2 सूर्य उदय कब होता है?	उ. प्रातः काल को	
	प्र3. प्रातः काल किसका प्रकाश होता है?	सूर्य का प्रकाश	
	प्र4. सूर्य के उदय होने पर क्या- क्या होता है?	समस्यात्मक प्रश्न	
	उद्देश्यकथन		
पाठ की जानकारी देना।	आज हम 'सूर्योदय' इस पाठ के विषय में विस्तृत रूप से अध्ययन करेगें।	छात्र विशिष्ट ज्ञान प्राप्ति के लिए उत्सुक होते हैं।	छात्रों को उद्देश्य का ज्ञान होता है।
	प्रस्तुतीकरण		
	प्रातः काल सूर्योदय होता है। सूर्योदय से पहले शशि आकाश में शीतल रश्मि से संसार को आनन्दित करती है। धीरे-धीरे उषाकाल होता है। उसके बाद सूर्य आकाश में अन्धकार को दूर करके उदय होता है। पक्षी कलरव मचाते हैं। सभी व्यक्ति जाग कर अपनें-अपनें कामों में लग जाते हैं। बालक विद्यालय जाने के लिए, कई लोग घूमने के लिए, भक्त पूजा के लिए जाते हैं। एवं सभी लोग सूर्योदय से उपकारित होते हैं।	छात्र पाठ को सावधानी से/ध्यानपूर्वक सुनते हैं।	पाठ्यवस्तु का ज्ञान होता है।

<table>
<tr><th>लक्षिताधिगम</th><th>छात्राध्यापक क्रिया</th><th>छात्रक्रिया</th><th>शिक्षण प्रतिफल</th></tr>
<tr><td>श्रवण, वाचन कौशल का विकास</td><td>आदर्शवाचन
छात्राध्यापक आरोह-अवरोह पूर्वक विरामादि चिन्हों का प्रयोग करके गद्य का आदर्शवाचन करते हैं।</td><td>छात्रध्यानपूर्वक सुनते हैं।</td><td>छात्रों को दोनों कौशलों की जानकारी प्राप्त होती है।</td></tr>
<tr><td>पठन कौशल का विकास</td><td>अनुवाचन
छात्राध्यापक अनुकरणवाचन के लिए कतिपय छात्रों को आदेश देता है।</td><td>छात्र क्रम से अनुवाचन करते हैं।</td><td>छात्र वाचन में प्रवीण होते हैं।</td></tr>
<tr><td>संशोधन क्षमता का विकास।</td><td>अशुद्धि संशोधन
छात्रों के द्वारा अनुवाचन में होने वाली अशुद्धियों का संशोधन छात्राध्यापक श्यामपट्ट के माध्यम से करता है।</td><td>छात्र अशुद्धियों को शुद्ध करते हैं तथा शुद्ध उच्चारण करते हैं।</td><td>संशोधन क्षमता</td></tr>
<tr><td>नूतनपदों का परिचय</td><td>काठिन्यनिवारण
<table><tr><th>शब्द</th><th>अर्थ</th></tr><tr><td>सूर्योदय</td><td>भानूदय</td></tr><tr><td>शशि</td><td>चन्द्र</td></tr><tr><td>उषाकाल</td><td>सूर्योदयकाल</td></tr><tr><td>कलख</td><td>शब्दविशेष</td></tr></table></td><td>युक्ति
सन्धिविच्छेद

कोष

चित्रयुक्ति शब्दप्रकृति ज्ञापन</td><td>सूर्य+उदय(गुण सन्धि)
हिमांशु, शाशङ्क, निशाकर

(प्र.पु.ए.वचन) अध्यापक चित्र स्थापित करता है।</td></tr>
<tr><td>भाषानुवाद क्षमता का विकास</td><td>भाषानुवाद
अध्यापक छात्रों के सहयोग से भाषानुवाद करता है।</td><td>छात्र अनुवाद में सहयोग करके ध्यानपूर्वक सुनते हैं।</td><td>अनुवादकौशल से छात्रों का परिचित होना।</td></tr>
</table>

लक्षिताधिगमः	छात्राध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षण प्रतिफल
	बोधात्मकप्रश्न		
(i) अधीतज्ञान का परीक्षण। (ii) विषय के प्रति ध्यानाकर्षण	1. सूर्य कब उदय होता है? 2. शशि शीतलरश्म से क्या करती है? 3. सूर्य किसको दूर करके उदय होता है? 4. सभी कार्यों में कौन लग जाते हैं?	छात्र प्रश्नों का उत्तर देते हैं।	अधीतज्ञान परीक्षण।
	छात्राध्यापक कथन/सारकथन		
संक्षेपीकरण	छात्राध्यापक पाठ का संक्षेप सरल संस्कृतभाषा मे करता है।	प्रस्तुत गद्यांश का सार छात्र सुनते हैं।	संक्षेपरूप से पाठ के आशय का ज्ञान।
	मौनवाचन		
द्रुतपठनकौशल का विकास	छात्राध्यापक मौनवाचन के लिए छात्रों को आदेश देता है। कक्षा का निरीक्षण अनुशासन के लिए करता है।	सभी छात्र बिना बोले गद्यखण्ड का कौन वाचक करते हैं।	मौनपठन की क्षमता।
अधीतज्ञान का दृढीकरण	**पुनरावृत्ति प्रश्न** 1. धीरे-धीरे कौन आता है? 2. सूर्य आकाश में क्या करके उदय होता है? 3. सभी लोग सुबह जागकर क्या करते है? 4. सूर्योदय से सभी लोग कैसे उपकारित होते है?	छात्र उत्तर देते हैं।	छात्रों के ज्ञान में परिपक्वता
	कक्ष्याकार्य		
अभ्यासप्रवृत्तिका विकास और अधिगमपरीक्षण का ज्ञान	1. रश्मि इसके तृतीयाविशक्ति के रूपों को बोलिये। 2. कुछ वस्तुनिष्ठप्रश्न पूछता है।	छात्र अभ्यासकार्य विचार करके करते हैं।	अभ्यासप्रवृत्ति विकसित होती है।

स्वाध्याय प्रवृत्ति का विकास। अवकाश का सदुपयोग।	**गृहकार्य** 1. सूर्योदय के ऊपर पाँच वाक्यों की रचना करो। 2. रिक्तस्थानपूर्ति, वस्तुनिष्ठप्रश्न, शुद्धाशुद्धप्रयोग, शब्दसम्मिलन	सभी छात्र गृह में अवकाश का सदुपयोग करते हैं।	अवकाश सदुपयोग

3.5 व्याकरण शिक्षण

प्रिय छात्रों! संस्कृत शिक्षण की विविध विधाओं में से आप गद्यशिक्षण एवं पद्यशिक्षण के बारे में अध्ययन करेगे। व्याकरण के विषय में कहा गया है- 'मुखं व्याकरणं स्मृतम्'। अर्थात् छः वेदाङ्गों में व्याकरण को वेदों के मुख की उपमा दी गई है। जिस प्रकार मानव शरीर बिना मुख के निरर्थक है, उसी प्रकार बिना व्याकरण के सारे शास्त्र निरर्थक हैं।

भाषा चाहे लिखित हो या मौखिक दोनों में ही शुद्ध भाषा का अत्यधिक महत्व है। भाषा विचार-विनमय का सफल साधन तभी बन सकती है, जब वह शुद्ध हो। भाषा को शुद्ध रखने के लिए विशेष नियमों का अनुसरण करना पड़ता है। अतः भाषा सीखने वालो की सुविधा के लिए ऐसे नियमों का समावेश आवश्यक है। संस्कृत साहित्य में व्याकरण के अनेकग्रन्थ मिलते हैं। वास्तव में कहा जाए तो भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करने के लिए व्याकरण का ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है।

व्याकरण की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने तरीके से दी है जो निम्न है-

i. महर्षि पाणिनि के मतानुसार व्याकरण शब्दानुशासन है। इसमें भाषा का रूप व्यस्थित होता है।
ii. महर्षि पतञ्जलि ने भी अपने महाभाष्य में इसे 'शब्दानुशासनं' कहा है।
iii. डॉ. स्वीट के मतानुसार व्याकरण, भाषा का विश्लेषण अथवा उसका विज्ञान है।

सार रूप व्याकरणशास्त्र को परिभाषित करें तो- "वह विधा या शास्त्र जिसमें किसी भाषा के शब्दों के शुद्ध रूपो और वाक्यों के प्रयोग के नियमों आदि का निरूपण होता, उसे व्याकरण कहते है।"

छात्रों! व्याकरणशास्त्र का विस्तृत अध्ययन करने के लिए व्याकरणशब्द की व्युत्पत्ति, व्याकरणशिक्षण के उद्देश्य, व्याकरणशिक्षण की आवश्यकता, व्याकरण शिक्षण की विधियाँ एवं व्याकरण शिक्षण के सोपान आदि बिन्दुओं पर विस्तृत रूप से चर्चा करेगें।

व्याकरण शब्द की व्युत्पत्ति-

छात्रों! व्याकरण शब्द की व्युत्पत्ति बताई गयी है- वि+आ+कृ+ल्युट्। अर्थात् वि एवं आ उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से ल्युट् प्रत्यय करके व्याकरण शब्द निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ होता है- "व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः येन इति व्याकरणम्" अर्थात् ऐसा शास्त्र जिसमें शब्दों की व्युत्पत्ति तथा विश्लेषण का विवेचन किया जाए, वह व्याकरण है। शब्द रचना एवं वाक्य रचना विना व्याकरण ज्ञान के सम्भव नही है।

3.5.1 व्याकरण शिक्षण के उद्देश्य

प्रिय छात्रों! जैसा कि आप जानते हैं कि बिना उद्देश्य के संस्कृत शक्षण की किसी भी विधा की रचना नही की गयी है। इसी प्रकार व्याकरण शिक्षण के भी कुछ उद्देश्य होते हैं, जो निम्नवत् हैं-

i. संस्कृत भाषा के ध्वनि तत्त्वों से छात्रों को परिचित कराना।
ii. शब्द तथा धातुओं के विभिन्न रूपों ज्ञान प्रदान करना।
iii. शुद्ध वाक्यों का निर्माण करने की योग्यता प्रदान करना।
iv. छात्रों की संस्कृत- रचना-शक्ति का विकास करना।
v. भाषा के गुण- दोषों को समझने की क्षमता प्रदान करना।
vi. भाषा के शुद्ध लेखन तथा उच्चारण का अभ्यास कराना।
vii. व्याकरण के सिद्धान्तों का ज्ञान कराना तथा भाषा के क्षेत्र में उनका प्रयोग सिखाना।
viii. व्याकरण अध्ययन क्षेत्र में छात्रों की तर्क शक्ति जागृत करना।
ix. संस्कृत गद्य-पद्य के अर्थग्रहण की क्षमता प्रदान करना।
x. भाषा-ज्ञान सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करना।

व्याकरण शिक्षण की आवश्यकता- छात्रों! यह तो आप जान चुके होगें कि यह सत्य हे कि भाषा के निर्माण में व्याकरण का महत्वपूर्ण योगदान है। व्याकरणशिक्षण की आवश्यकता को तीन भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है-

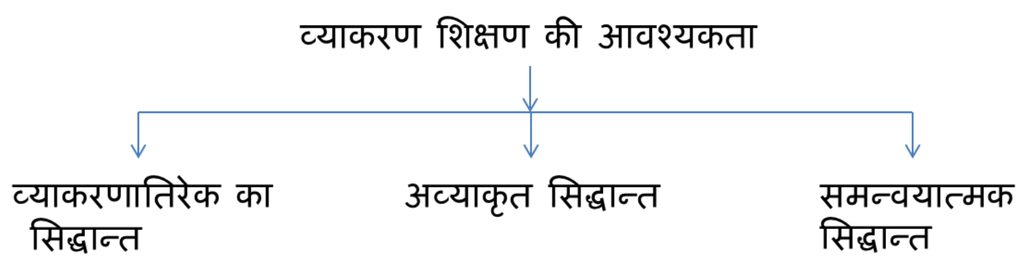

1. व्याकरण का सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार-

i. व्याकरण का शिक्षण मानसिक अनुशासन प्रदान कर सकता है। सूत्रों को याद करने से बालक मानसिक अभ्यास तो करता ही है उसकी स्मरण शक्ति, तर्क शक्ति, सूक्ष्म चिन्तन शक्ति का विकास होता है।

ii. व्याकरण भाषा पर सम्पूर्ण अधिकार प्रदान करता है।

iii. व्याकरण शिक्षण से जो प्रशिक्षण मिलता है उसका स्थानान्तरण जीवन के अन्य पक्षों में भी हो सकता है। जो स्मृति की वृद्धि व्याकरण से होती है उसका प्रयोग अन्य विषयों में भी हो सकता है।

2. अव्याकृत सिद्धान्त-इस सिद्धान्त के अनुसार

i. यदि भाषा को मौखिक विधि या संरचनात्मक उपागम से पढ़ाया जाये और इसकी रचना का अभ्यास कराया जाए तो व्याकरण शिक्षण की आवश्यकता ही नही रहेगी। अतः केवल शुद्ध भाषा का बार-बार अभ्यास किया जाना चाहिए।

ii. भाषा व्याकरण से पहले सीखी जाती है। अतः उत्तरावस्था में व्याकरण शिक्षण केवल एक बौद्धिक विकास समझना चाहिए।

iii. व्याकरण बड़ा दुरूह, नीरस और शुष्क विषय है। संस्कृत के छात्रों को जब आरम्भ में ही नियमों और विभक्ति रूपों को कण्ठस्थ कराया जाता है, तो वे संस्कृत पढ़ने में निरूत्साहित होते जाते हैं। छोटी कक्षाओं में व्याकरण भाषा सीखने में एक व्यवधान बन जाता है।

(3) **समन्वयात्मक सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त में निम्न विन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है-

i. आरम्भ से ही व्याकरण सिखाना नीरसतापूर्ण होगा। व्याकरण से पूर्ण भाषा सिखाना नितान्त आवश्यक है। भाषा का आधारभूत ज्ञान हुए बिना उसके शुद्ध प्रयोग का प्रश्न ही नहीं उठता।

ii. सैद्धान्तिक व्याकरण के स्थान पर व्यावहारिक व्याकरण सिखाने पर बल देना चाहिए।

iii. मातृभाषा में बहुत सारी शब्दावली का प्रयोग होता है, अतः मातृभाषा से तुलना कराते हुए संस्कृत का ज्ञान देना उपयोगी होगा।

3.5.2 व्याकरण शिक्षण की विधियाँ

व्याकरण शिक्षण की विधियाँ- छात्रों! व्याकरणशिक्षण को सुदृढ तरीके से पढ़ने के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया जाता है। यथा-

व्याकरणशिक्षण की विधियाँ

- कण्ठस्थीकरण अथवा सूत्रविधि
- अव्याकृति अथवा भाषा संसर्ग विधि
- व्याख्या विधि
- आगमन विधि
- पाठ्यपुस्तक विधि
- समवाय विधि

1. कण्ठस्थीकरण अथवा सूत्र विधि द्वारा अष्टाध्यायी, सिद्धान्त कौमदी आदि व्याकरण की पुस्तकों में दिए गए सूत्रों को अध्यापक कण्ठस्थ करवाने के बाद स्पष्ट करता है। इस प्रकार सूत्रमें कण्ठस्त की गई संक्षिप्त विषयवस्तु से छात्र उसमें निहित बहुत विस्तृत ज्ञान सुविधा से प्राप्त कर लेता है।
2. **अव्याकृति अथवा भाषा संसर्ग विधि-** संसर्ग भाषा-भाषियों के संसर्ग से, संस्कृत पुस्तकों के निरन्तर पढ़ते रहने से संस्कृत वाक्यों का प्रयोग करते-करते बालक कुछ समय बाद स्वतः ही संस्कृत भाषा सीख लेता है।
3. **व्याख्यविधि-** प्राचीनकाल में पाणिनि व्याकरण प्राथमिक स्तर से ही पढ़ाया जाता था। उस समय सूत्रों के स्पष्टीकरण के लिए व्याख्या पद्धति का अनुसरण किया जाता था। इसके अन्तर्गत सूत्रों के स्पष्टीकरण के लिए उनकी व्याख्या प्रस्तुत की जाती है तथा उदाहरणों की सहायता से उसे पुष्ट किया जाता है।
4. **आगमन विधि-** इस विधि में 'उदाहरण से नियम की ओर' इस शिक्षण सूत्र का अनुसरण किया जाता है। इस विधि में पहले उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं फिर छात्रों को नियम तक ले जाया जाता है तथा अन्त में नियम या सूत्र को स्पष्ट करने के बाद अभ्यास के प्रयोग द्वारा उसे परिपुष्ट किया जाता है।
5. **निगमन विधि-** इस विधि के द्वारा पहले नियम या सूत्र प्रस्तुत किया जाता है तत्पश्चात् उदाहरणों की सहायता से उसे स्पष्ट किया जाता है। जैसे- 'इकोयणचि' इस सूत्र से यदि ह्रस्व या दीर्घ इ,उ,ऋ,लृ इन स्वरों के बाद कोई भिन्न स्वर आये तो क्रमशः य्, व्, र्, ल् हो जाते हैं। जैसे-

   यद्यपि- यदि+अपि,इ+अ=य्

स्वागतम-सु+आगतम्,उ+आ=व्

6. **पाठ्यपुस्तक विधि-** पाठ्यपुस्तक विधि से शिक्षण सरल व प्रभावी हो जाता है। बालक नियमें की सत्यता का प्रत्यक्षीकरण कर लेते हैं। इस विधि से व्याकरण का स्थायी ज्ञान होता है। इसमें रटने की कोई समस्या नही है। अतः यह मनोवैज्ञानिक विधि है।
7. **समवाय विधि-** इस विधि को सहयोग विधि बी करते हैं। इसके अन्तर्गत व्याकरण की शिक्षा पृथक् से न देकर गद्य, पद्य, रचना, कथा, अनुवाद आदि पढ़ाते समय आवस्यकतानुसार व्याकरण के शब्दों, सूत्रों आदि को समझा दिया जाता है। अभ्यासकार्य के लिए पाठ के अन्त में दिए गए प्रश्नों को करवाया जाता है।

व्याकरण शिक्षण के सोपान-

1. सामान्य उद्देश्य
2. विशिष्ट उद्देश्य
3. सहायक सामग्री
4. विशिष्ट सामग्री
5. पूर्वज्ञान
6. प्रस्तावना
7. उद्देश्यकथन
8. प्रस्तुतीकरण- (i)सामान्यीकरण (ii) नियमीकरण (iii) प्रयोग (iv) श्यामपट्ट सारांश
9. पुनरावृत्ति प्रश्न/मूल्याङ्कन प्रश्न
10. कक्ष्याकार्य
11. गृहकार्य

छात्रों! अब हम यह सीखेंगे कि इन सोपानों से कैसे व्याकरण शिक्षण की पाठयोजना तैयार की जाती है। इसके लिए उदाहरण स्वरूप एक पाठयोजना नीचे दर्शायी गयी है-

3.5.3 व्याकरण पाठ योजना

विद्यालय का नामः	वर्गः
कक्षाः	मध्यायुः
छात्रसंख्याः	अवधिः
कालांशः	दिनाङ्क
विषयः	प्रकरणः

छात्रधायपक/छात्रध्यापिका का नामः..

सामान्य उद्देश्य-

i. छात्रों को संस्कृत भाषा के ध्वनि तल से परिचित कराना।
ii. शब्दें के विभिन्न रूपों का ज्ञान प्रदान करना।
iii. शुद्ध वाक्य रचना का ज्ञान प्रदान करना।
iv. छात्रों की तर्क शक्ति एवं रचनात्मक वृत्ति का विकास करना।
v. उनकी भाषा के गुण-दोषों को परखने की क्षमता प्रदान करना, जिससे वे शुद्ध लिख सकें।
vi. सैद्धान्तिक व्याकरण का ज्ञान प्रदान करते हुए सिद्धान्तों के प्रयोग करने का अवसर प्रदान करना।

विशिष्ट उद्देश्य-

i. छात्रों के समस्त कौशलों का विकास यथा-श्रवण-पठन-कथन-लेखन कौशलों का विकास करना।
ii. छात्रों को स्वरसन्धि के द्वितीय भेद 'गुण-सन्धि' अर्थात् अ या आ के परे किसी भिन्न स्वर इ, ई, उ, ऊ या ऋ के होने पर दोनों को मिलकर क्रमशः ए, ओ या अर् हो जाता है- इसका सम्यक् ज्ञान एवं अभ्यास कराना।

सहायक सामग्री- लपेटश्यामफलक, संकेतिका, चॉक, मार्जनी आदि।

विशिष्ट सामग्री- (1) गुणसन्धि का उदाहरण सहित चार्ट।

(2) गुणसन्धि का विवरणात्मक वर्णचित्र।

पूर्वज्ञान-

1. छात्र सन्धि के सामान्य अर्थ और महत्व से परिचित हैं।
2. छात्र स्वरसन्धि का प्रथम भेद 'दीर्घ सन्धि' का अध्ययन और अभ्यास कर चुके हैं।

लक्षिताधिगम	छात्रध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
1. छात्रो में पाठ के प्रति रुचि जागृत करना। 2. छात्रों के पूर्वज्ञान का नवीनज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करना।	**प्रस्तावना** [छात्राध्यापक कक्षा के श्यामपट्ट पर निम्नलिखित पदों को लिखकर छात्रों से प्रश्न करता है।] **विद्यालय नदीश सत्येन्द्र** प्र.1 प्रथमपद का सन्धिविच्छेद करो? प्र.2 इन शब्दों में किन-किन वर्णों की सन्धि हुई	उ. विद्या+आलय उ. आ+आस्वरों की।	छात्र विषय केन्द्रित होते हैं।

	है?		
	प्र.3 ये दोनों स्वर समान हैं या असमान?	उ. दोनों समान	
	प्र.4 नदीश का सन्धि विच्छेद करो?	उ. नदी+ईश	
	प्र.5 'सत्येन्द्र' इसका सन्धिविच्छेद क्या है?	उ. सत्य+इन्द्र	
	प्र.6 यहाँ कौनसी सन्धि होगी?	उ. समस्यात्मक प्रश्न	छात्रों को उद्देश्य का ज्ञान देना।
सन्धि की जानकारी देना।	उद्देश्यकथन आज हम गुणसन्धि के विषय में विस्तृत रूप से पढ़ेगें।	छात्र गुणसन्धि के विषय में जानने के लिए उत्सुक होते हैं।	गुण सन्धि का ज्ञान होता है।
अवबोधन कौशल का विकास	प्रस्तुतीकरण छात्राध्यापक छात्रों से प्रश्न करता जायेगा और श्यामपट्ट पर लिखता जायेगा यथा- 1 सुरेश पुस्तक पढ़ता है। 2 रमेश विद्यालय जाता है। 3 अध्यापक अवधेश को आदेश देता है।	छात्र श्यामपट्ट पर ध्यानपूर्वक देखते हैं और प्रश्नों का उत्तर देते हैं-	
	प्र.1 प्रथम वाक्य में गुणसन्धि युक्त पर कौनसा है?	उ. सुरेश	
	प्र.2 इसका सन्धिविच्छेद करो?	उ. सुर+ईश।	
	प्र.3 प्रथम पद का अन्तिम वर्ण क्या है?	उ. 'अ' यह	
	प्र.4 'अ+इ' इसके स्थान पर कौनसा वर्ण आया है?	उ. 'ए' यह वर्ण	
	[छात्रध्यापक और भी उदाहरण श्यामपट्ट पर लिखता है।]		

लक्षिताधिगम	छात्रध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
	देवेन्द्र=देव+इन्द्र=अ+इ=ए महेन्द्र=महा+इन्द्र=आ+इ=ए भुवनेश=भुवन+ईश=अ+ई=ए अथेति=अथ+इति=अ+इ=ए		
	सामान्यीकरण छात्राध्यापक इसी तरह के उदाहरण श्यामपट्ट पर लिखकर छात्रों से पूछता है।	छात्र प्रस्तुत उदाहरणों का ध्यानपूर्वक अवलोकन करते हैं। एवं परिवर्तन के विषय में सोचते हैं।	
	नियमीकरण छात्राध्यापक नियम करता है कि यदि अ या आ के बाद इ या ई, उ या ऊ अथवा ऋ आये तो उन दोनों स्वरों के मेल से क्रमशः ए, ओ और अर् हो जाते है। यथा- अ/आ+इ/ई=ए अ/आ+उ/ऊ=ओ अ/आ+ऋ=अर्	छात्र ध्यानपूर्वक नियमों को समझते हैं।	
	प्रयोग छात्राध्यापक प्रयोग के लिए श्यामपट्ट पर कुछ सन्धियुक्त पद एवं सन्धि विच्छेद युक्त पद लिखेगा और छात्रों से प्रश्न करेगा। यथा- 1 नरेन्द्र 2.महेश 3. महोदया 4. देवार्षिं 5. सूर्योदय **सन्धि करो-** 1.सर्व+ईश 2. पर+उपकार 3. राजा+ऋषि 4. ग्रीष्म+ऋतु 5. तीर्थ+उदकम		

लक्षिताधिगम	छात्रध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
	श्यामपट्ट सारांश		
	छात्राध्यापक श्यामपट्ट पर लिखे सभी प्रयोगों एवं नियमों का सारांश छात्रों को बताता है।	सभी छात्र निर्धारित नियमों का परीक्षण करते हैं।	
	पुनरावृत्ति/मूल्याङ्कन प्रश्न		
अधीतज्ञान का दृढ़ीकरण	प्र.1 'लोकेच्छा' इसका सन्धिविच्छेद करो?	लोक +इच्छा	छात्रों में परिपक्वता का आना।
	प्र.2 'महर्षि' इसका सन्धिविच्छेद करो?	महा+ऋषि	
	प्र.3 'महोदधि' इसका सन्धिविच्छेद करो?	महा+ऊदधि	
	प्र.4 अ/आ+ऋ वर्णों के मेलन से कौनसा शब्द बनेगा?	'अर्' यह।	
	प्र.5 'कनक+इष्टि' के मेलन से कौनसा शब्द बनेगा?	उ. 'कनकेष्टि' यह।	
	कक्ष्याकार्य		
आभ्यासप्रवृत्ति का विकास और अधिगम ज्ञान का परीक्षण	गज+इन्द्र, अथ+इदानीम, दुर्गा+ईश इनका समस्तपद बनाओ।	छात्र अभ्यासकार्य विचार करके करते हैं।	छात्रों की अभ्यास प्रवृत्ति विकसित होती है।
	गृहकार्य		
स्वाध्याय प्रवृत्ति का विकास अवकाश का सदुपयोग	1 अपनी पाठ्यपुस्तक के प्रथम गद्य पाठ से इस सन्धि के दस उदाहरण छांटिए एवं उनका सन्धिविच्छेद कीजिए। 2 गुण सन्धि के नियमों को कण्ठस्थ करके आइए।	सभी छात्र गृहकार्य करते हैं तथा अवकाश का सदुपयोग करते हैं।	अवकाश का सदुपयोग

3.6 नाटक शिक्षण

प्रिय छात्रों संस्कृत शिक्षण की विविध विधाओं में से गद्य-पद्य- व्याकरण शिक्षण का ज्ञान अब तक आप प्राप्त कर चुकें हैं। अब इस खण्ड में हम नाटकशिक्षण के बारे में चर्चा करेगें। वस्तुतः रसास्वादन का मुख्य साधन है नाटक। नाटक में अनुकर्ता नट में मुख्य पात्र का समानाधिकरण करके सामाजिक रसास्वादन करते हैं और नट स्वयं भी स्वयं में पात्रविशेष (जिसकी भूमिका अदा करते है) का आरोप करके रसानुभव करता है। इस प्रकार कथोपकथन के द्वारा नाटक का प्रारम्भ माना जाता है।

कहा जाता है कि ब्रह्मा ने ऋग्वेद से सम्बाद, सामवेद से गान, यजुर्वेद से अभिनय, अथर्ववेद से रसग्रहण करके पञ्चमवेद के रूप में नाट्यवेद की रचना की। धनञ्जय ने दशरूपक नामक ग्रन्थ में नाटक की परिभाषा इस प्रकार दी है-

''अवस्थानुकृतिर्नाट्यं रूपं दृश्यतयोच्यते।

रूपकं तत्समारोपात् दशधैव रसाश्रयम्।।''

अर्थात् अवस्था का अनुकरण नाट्य कहलाता है। काव्य में वर्णित (नायक की) धीरोदात्त आदि अवस्थाओं का अनुकरण अर्थात् चार प्रकार के अभिनय (अनुकार्य के साथ) एकरूपता प्राप्त कर लेना ही नाट्य है। दृश्य होने के कारण यह 'नाट्यं' भी कहलाता है। भाव यह हे कि जिस प्रकार दृश्य (चाक्षुष ज्ञान का विषय)होने के कारण नील इत्यादि रूप कहलाते हैं उसी प्रकार दृश्य होने के कारण नाट्य भी 'रूप' कहलाता है। आरोप किया जाने के कारण वह (तत्) नाट्य रूपक कहलाता है। जिस प्रकार मुख में चन्द्रमा का आरोप किया जाने के कारण 'मुख-चन्द्र' में रूपक (अलङ्कार) कहलाता है, इसी प्रकार नट में राम आदि की अवस्था (रूप) का आरोप होने के कारण नाट्य को भी 'रूपक' कहते हैं। इस प्रकार रस पर आश्रित होने वाला यह रूपक दस प्रकार के होते हैं जिनके नामक नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, वीथी, अङ्क, प्रहसन आदि हैं।

नाटक शब्द की व्युत्पत्ति 'नट्' धातु से हुई है जिसका अर्थ है- अभिनय, अनुकरण। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में नाटक का उद्देश्य इस प्रकार बताया है-

''उत्तमाधममध्यानां नराणां कर्मसंश्रयम्।

द्वितोपदेशजननं धृतिक्रीडासुखादिकृत्।।

दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।

विश्रान्तिजनने काले नाट्यमेतद् भविष्यति।।

लोकोपदेशजननं नाट्यमेतद् भविष्यति।।''

भरतमुनि जी को नाटक के क्षेत्र में प्रमुख स्थान प्राप्त है। उन्होंने बताया सभी श्रेणियों के मनुष्यों के लिए हितकारी उपदेश देने में नाटक सहायक होगा। दुःखी, श्रमी, तपस्वी लोगों को आराम दिलाने में अरथात मनोरञ्जन करने में नाटक सहायक होगा। धर्म को बढ़ावा देने, यश प्रसारित करने व व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने में नाटक उपकारी होगा।

इसलिए छात्रों के पाठ्यक्रम में नाटकों का संयोजन भी किया जाता है और उन नाटकों का शिक्षण आपको कैसे करना है इसके लिए कुछ उद्देश्य निर्धारित किये गये है-

3.6.1 नाटक शिक्षण के उद्देश्य

i. छात्रों में उचित आरोह- अवरोह तथा उचितभावभङ्गिमा के साथ नाटक अभिनय की योग्यता विकसित करना।
ii. उन्हें अभिनय कला का परिचय प्रदान करना।
iii. छात्रों को भावाभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करना।
iv. छात्रों को मानवीय स्वभाव व मानवचरित्र से परिचित कराना।
v. छात्रों के भाषा ज्ञान में वृद्धि करना
vi. उन्हें स्वयं की प्रतिभा प्रदर्शित करने के अवसर प्रदान करना
vii. छात्रों को अनुकरण करने के अवसर प्रदान करना

नाटक शिक्षण के महत्त्व के बारे मे चर्चा करें तो प्रिय छात्र तो नाट्यशास्त्र का यह श्लोक याद आता है-

न तच्छास्त्रं न तत्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
न स योगो न तत्कर्म नाट्येस्मिन् यन्नदृश्यते।। (1/116)

अर्थात ऐसा कोई शास्त्र, शिल्प, विद्या, कला योग या कर्म नहीं है जो नाटक में विद्यमान न हो/ इसलिए नाटक शिक्षण अनिवार्य है। नाटक शिक्षण द्वारा छात्रों का शारीरिक-मानसिक-सामाजिक-चारित्रिक-नैतिक विकास होता है। इसके द्वारा छात्र किसी भी घटना को सरलता से समझ सकते हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अन्यविधाओं की अपेक्षा नाटक शिक्षण अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि ज्ञानेन्द्रियों की सक्रियता के कारण इसका प्रभाव मानसपटल पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। इससे छात्र मौखिकाभिव्यक्ति मे सक्षम होते हैं।

नाटक शिक्षण की विशेषताएँ

i. नाटकों में लोकहित वा लोकनुरञ्जन की भावना अधिक होते है।
ii. नाटक को गद्य-पद्य के मिश्रित रूप में लिखा जा सकता है।
iii. नाटक में कल्पना व वास्तविकता दोनों को स्थान प्राप्त होता है।
iv. नाटक में मानवजीवन की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन होता है।
v. नाटक भिन्नरूचि वाले लोगों की सन्तुष्टि का भी एकमात्र साधन है।

vi. इससे मानसिक शान्ति मिलती है।

vii. नाटक में कथावस्तु अथवा इतिवृत्त प्रधान होता है।

3.6.2 हम नाटक शिक्षण की विधियां

नाटक शिक्षण के सामान्य स्वरूप, उद्देश्य, महत्त्व, विशेषताओं को जानने के बाद अब हम नाटक शिक्षण की विधियों को जानेगें। नाटक शिक्षण की प्रमुख विधियाँ हैं-

(i) आदर्शनाट्यविधि 2. व्याख्याविधि

(ii) रङ्गमञ्चाभिनयविधि 4. कक्षाऽभिनयविधि

आदर्शनाट्यविधि में अध्यापक स्वयं नाटक के सभी पात्रों का वाचिक अभिनय करता है। अध्यापक नाटक के संवादों को इस प्रकार से पढ़ता है कि प्रत्येक पात्र में छात्रों की रूचि जाग्रत हो। अध्यापक का स्वर पात्रानुकूल एवं भावानुकूल होता है। यह विधि प्राथमिक स्तर के लिए उपयुक्त होती है क्योंकि नाटक बोधगम्य व आकर्षक होते हैं।

आदर्शनाट्यविधि में नाटके तत्त्वों की व्याख्या के लिए अध्यापक को पूर्ण समय नहीं मिल पाता है और छात्र मूकश्रोता के समान निष्क्रिय होते हैं। यह इस विधि का सबसे बड़ा दोष है।

व्याख्या विधि में अध्यापक के द्वारा नाटक की कथा वस्तु-पात्र-कथोपकथन-भाषा-शैली इत्यादि की व्याख्या की जाती हैं। व्याख्या कथन व प्रश्नोत्तर दोनों रूपों में की जाती है। यह विधि उच्चकक्षाओं के लिए उपयोगी है।

इसमें छात्र प्रायः निष्क्रिय रहते हैं, यह इस विधि का भी सबसे बड़ा दोष है।

रङ्गमञ्चाभिनय विधि में छात्र सम्पूर्ण नाटक को रङ्गमञ्च पर प्रस्तुत करते हैं। जिस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए नाटक लिखा जाता है। उनकी प्राप्ति पूर्णतः इस विधि में की जा सकती है। इस विधि में छात्र रङ्गमञ्चसज्जा, नाटकसञ्चालन आदि के अवसर प्राप्त करते हैं। इस विधि में समय-धन व शक्ति तीनों की आवश्यकता होती है।

कक्षा अभिनय विधि में कक्षा में ही अध्यापक छात्रों को पात्र वितरण करता है और छात्र स्व-स्व पात्रानुसार नाटक में वाचिकाभिनय करते हैं। इस विधि से नाटकशिक्षण रुचिकर होती है। वस्तुतः यह विधि रङ्गमञ्चाभिनयविधि की बराबर प्रभावशाली नहीं होती है क्योंकि नाटक वास्तविक रूप से प्रस्तुत नहीं किया जाता है।

सभी विधियों कुछ गुण हैं एवं कुछ दोष हैं, ऐसी परिस्थिति में छात्रों सभी विधियों का समवाय करके यदि नाटकशिक्षण किया जाये तो हम नाटकशिक्षण के सभी उद्देश्यों को प्राप्त कर सकेगें।

आधुनिक विधि से पढ़ाने के लिए नाटक शिक्षण के सोपानों को जानना जरूरी है।

i. सामान्य उद्देश्य
ii. विशिष्ट उद्देश्य
iii. सहायक सामग्री
iv. विशिष्ट सामग्री
v. पूर्वज्ञान
vi. प्रस्तावना
vii. उद्देश्यकथन
viii. आदर्शवाचन
ix. अनुवाचन
x. भावविश्लेषणात्मक प्रश्न
xi. सम्पूर्ण नाटक का अभिनय
xii. गृहकार्य

अब हम नाटक की पाठ योजना के उदाहरणद्वारा नाटक पाठयोजना का निर्माण करना सीखेगें।

3.6.3 नाटक पाठ योजना

छात्राध्यापक/छात्रध्यापिका का नाम

सामान्य उद्देश्य-

i. छात्रों को उचित आरोह-अवरोह तथा उचित भावभंगिमा के साथ संवाद करने का ज्ञान देना।
ii. छात्रों को अभिनय की कला का ज्ञान देना।
iii. विविध परिस्थितियों के अनुकूल मानवीय व्यवहार से छात्रों को परिचित कराना।
iv. मानव-प्रकृति एवं मानव-चरित्र से उन्हें परिचित होने का अवसर देना।
v. छात्रों के भाषा-ज्ञान की वृद्धि करना।
vi. छात्रों की चिन्तन, प्रश्नोत्तर, वार्तालाप, भाषण, कथोपकथन आदि अवसरों पर प्रभावोत्पादक ढंग से अपने भावों को व्यक्त करने की कला का ज्ञान देना।

विशिष्ट उद्देश्य-

i. 'श्रवण-पठन-कथन-लेखन' छात्रों के समस्त कौशलों का विकास करना।

ii. छात्रों को पन्ना धात्री के चरित्र से अवगत कराते हुए साहस, शूरता और स्वामिभक्ति के भावों से ओतप्रोत करना।

iii. उन्हें देशभक्ति के लिए आत्मोत्सर्ग करने की प्रेरणा देना।

iv. उन्हें क्रोध एवं करुणा के प्रसंगों में संवाद करने का ढंग बताना।

सहायक सामग्री- लेपटश्यामफलक, संकेतिका, चॉक, मार्जनी आदि।

विशिष्ट सामग्री- चेतक पर आरूढ़ महाराणा प्रताप का एक चित्र एवं अन्य कथोपयोगी सामान्य उपकरण।

पूर्वज्ञान- छात्र भारतीय इतिहार के ख्यातनामा देशभक्तों और स्वामिभक्तों की कथाओं से परिचित हैं।

लक्षिताधिगम	छात्रध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
1. छात्रों में पाठ के प्रति रुचि जागृत करना। 2. छात्रों के पूर्ण ज्ञान का नवीन ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करना।	[छात्राध्यापक महाराणाप्रताप और चेतक का चित्र दिखाते हुए उनकी कथा सुनायेगा]... "मुगल सम्राट अकबर के अधिकार से........वास्तव में ऐसे स्वामिभक्त वन्दनीय हैं।"	छात्र सावधानीपूर्वक कथा को सुनते हैं।	छात्र विषय केन्द्रित होते हैं।
	प्र.1 तुम किसी स्वामिभक्त मनुष्य का नाम बताओ?	उ. बीरबल आदि।	
	प्र.2 किसी स्वामिभक्त नारी का नाम बताओ?		
	प्र.3 पन्नाधाय के विषय में और आप क्या जानते हो?	उ. पन्नाधाय आदि।	
	उद्देश्यकथन		
	आज हम पन्नाधाय के विषय में 'स्वामिभक्त पन्ना	समस्यात्मक प्रश्न	
पाठ का अवबोधन कराना	धात्री' इस प्रकरण को नाटक के रूप में पढ़ेगें।	छात्र विशिष्टज्ञानप्राप्ति के लिए उत्सुक होते हैं।	छात्रों को उद्देश्य का ज्ञान होता है।
	आदर्शवाचन		
	छात्राध्यापक द्वारा सम्पूर्ण नाटक का उचित आरोह-		

श्रवण-वाचन कौशल का विकास पठन कौशल का विकास	अवरोह युक्त स्वर एवं समुचित भाव-भंगिमा के साथ वाचन किया जायेगा **अनुवाचन** कतिपय छात्रों द्वारा छात्राध्यापक पृथक्-पृथक् पात्र देकर नाटक का अनुवाचन कराता है।	छात्र सम्पूर्ण नाटक को ध्यानपूर्वक सुनते हैं। छात्र पात्रानुसार अनुवाचन करते हैं।	छात्रों को दोनों कौशलों की जानकारी प्राप्त होती है।

लक्षिताधिगम	छात्राध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
अधीतज्ञान का परीक्षण विषय के प्रति ध्यानाकर्षण नूतन पदों का परिचय अधीतज्ञान का दृढ़ीकरण	**बोध प्रश्न** 1. पन्ना किसका लालन-पालन करती है? 2. उदय के स्थान पर किसका बलिदान कर दिया गया? 3. बनवीर उदय की हत्या क्यों करना चाहता था? **काठिन्य निवारण या व्याख्या** [छात्राध्यापक निम्नलिखित पदों का अर्थ पूछेगा तथा व्याख्या करेगा]	छात्र प्रश्नो का उत्तर देते हैं। छात्र अपनी उत्तरपुस्तिका में कठिन शब्दों का अर्थ लिखते हैं।	अधीतज्ञान परीक्षण

पद	अर्थ	प्रणाली
किमद्यजातमम्	क्या हो गया आज	किम्+अद्यजातम् (सन्धिविच्छेद)
त्वर्यताम्	शीघ्रता कीजिए	शीघ्रता कुरु (पर्यायकथन)
रक्षोपायः	रक्षा का उपाय	रक्षा+उपाय(सन्धविच्छेद)
निर्दिश	बताओ	अर्थकथन द्वारा

अधीतज्ञान का दृढ़ीकरण	**भावविश्लेषण एवं चरित्र-चित्रण सम्बनधी प्रश्न** (1) रामल कौन थी? (2) उसने पन्नाधाय को क्या सूचना दी? (3) पन्ना ने क्या युक्ति सोच ली थी? (4) वह उदय के स्थान पर किसको सुलायेगी। (5) पन्नाधाय का हृदय अपने निर्णय के प्रति कैसा था? (6) बनवीर किस रूप में पन्ना के समीप आया? (7) बनवीर कैसे स्वभाव का व्यक्ति था? (8) किसके प्रति घृणा का भाव उत्पन्न होता है?	छात्र सभी प्रश्नों का उत्तर ध्यानपूर्वक देते हैं।	छात्रों के ज्ञान में परिपक्वता।

लक्षिताधिगम	छात्राध्यापक क्रिया	छात्रक्रिया	शिक्षणप्रतिफल
वाचिक-आंगिक कौशलों का विकास	**सम्पूर्ण नाटक का अभिनय** नाटक के पात्रानुसार वाचिक अभिनयपूर्वक छात्रों द्वारा सम्पूर्ण नाटक का अभिनय कक्षा में किया जायेगा।	छात्र उत्सुक्ता पूर्वक नाटक का अभिनय करते हैं।	वाचिका के साथ आंगिक कौशल की प्राप्ति होती है।
स्वाध्याय प्रवृत्ति का विकास समय का सदुपयोग	**गृहकार्य** पन्ना एवं बनवीर के चरित्र की विशेषताएँ बताते हुए दोनों के चरित्र की रचना कीजिए।	छात्र गृहकार्य घर पर करते है। और समय का सदुपयोग करते हैं।	अपनी रचना कौशल का विकास होता है।

3.7 सारांश

इस इकाई को पढने के बाद आप यह जान चुकें हैं कि संस्कृत भाषा तथा संस्कृत साहित्य की विभिन्न विधाओं का शिक्षण कैसे किया जाता है। किस विधा में किन-किन विधियों के माध्यम से अध्यापन किया जा सकता है। प्रत्येक विधा शिक्षण के उद्देश्य क्या हैं? प्रत्येक विधा का स्वरूप क्या है? और सबसे महत्वपूर्ण बात प्रत्येक विधा की पाठयोजना कैसे बनानी है।

छात्रों! आप प्रत्येक विधा की पाठयोजना में अन्तर्भूत सोपानों को इस इकाई के माध्यम से समझ चुके है और उदाहरण के तौर पर एक-एक आदर्श पाठयोजना का प्रतिरूप भी पढ़ चुके हैं। अब आपको शिक्षणाभ्यास अवधि में विधा अनुरूप सोपानों को याद रखते हुये पाठयोजनाओं का निर्माण करना है। प्रत्येक विधा के महत्त्वपूर्ण अंशों का अध्ययन कर उनके सूक्ष्म तत्त्वों से अवगत होना है।

3.8 शब्दावली

1. विधा-प्रकार
2. वृत्त-छन्द
3. कौशल-चार भाषायी कौशल हैं (श्रवण-भाषण-पठन-लेखन)
4. स्मृतम्- माना गया है। जाना जाता है।
5. अनुकृति- अनुकरण करना
6. उज्झित- मुक्त/रहित
7. आगमन- उदाहरण से सूत्र की ओर
8. निगमन- नियम से उदाहरण की ओर

अभ्यास प्रश्न

1. सही उत्तर का चयन कीजिए-
   (i) छन्दोबद्ध_______। (गद्यम्/पद्यम्)
   (ii) वृत्तबन्धोज्झितं_______। (पद्यम्/गद्यम्)
   (iii) मुखं_______स्मृतम्। (नाटकम्/नाटकरणम्)
   (iv) अवस्थानुकृतिः_______। (गद्यम्/नाटकम्)
2. सुमेलन कीजिए

1. गद्य शिक्षण	A. सस्वर वाचन
2. पद्य शिक्षण	B. आगमन विधि
3. व्याकरण शिक्षण	C. खण्डान्वय विधि
4. नाटक शिक्षण	D. मौन वाचन

3. भरतमुनि जी किस विधा से सम्बन्धित है
   a. गद्य शिक्षणम्
   b. पद्य शिक्षणम्
   c. नाटक शिक्षणम्
   d. व्याकरण शिक्षणम्
4. अनुकरण वाचन किस सोपान के बाद आता है
   a. उद्देश्य कथन
   b. आदर्श वाचन
   c. प्रस्तावना
   d. गृहकार्य

5. पद्यशिक्षण में किस सोपान का प्रयोग नहीं किया जाता है
    a. मौनवाचन
    b. गृहकार्य
    c. अशुद्धिसंशोधन
    d. विशिष्ट उद्देश्य
6. पंचमवेद किसको माना गया है
    a. साहित्य
    b. रस
    c. नाटक
    d. ध्वनि

3.9 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. पाण्डेय, डॉ रामकल, (2007) संस्कृत शिक्षण, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
2. सफाया, डॉ. रघुनाथ,(1997) संस्कृत शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला।
3. शर्मा, डॉ. नन्दराम, (2007) संस्कृत शिक्षण, साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन, जयपुर
4. शर्मा रीटा, जैन अमिता (2005) संस्कृत शिक्षण, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर
5. वत्स,डॉ बी एल, (2009) संस्कृत शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
6. शर्मा, डॉ. च. ल. ना, डॉ फलेहसिंह (1996) संस्कृतशिक्षणम्, आदित्यप्रकाशनम्, जयपुरम्।
7. मित्तल, डॉ. (श्रीमती) सन्तोष, (2006)संस्कृतशिक्षणम् संस्कृतशिक्षणम्, नवचेतना पब्लिकेशन्स, जयपुरम्।
8. झा, डॉ. उदयशंकर (2011) संस्कृतशिक्षणम् चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
9. एन्., डॉ. लता, (2007) साहित्यशिक्षणविद्ययः संस्कृतशिक्षणम् साष्ट्रियसंस्कृतविद्यापीठम्, तिरुपतिः।
10. मिश्र, प्रो. लोकमान्य, (2013) साहित्यशिक्षणविधिः, मृगाक्षी प्रकाशनम्, लखनऊ

3.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. पद्य शिक्षण की विधियों का वर्णन कीजिए।
2. नाटक शिक्षण की विधियों का वर्णन कीजिए।
3. गद्य शिक्षण के उद्देश्य लिखिए।
4. नाटक शिक्षण की विधियों का उल्लेख कीजिए।
5. संस्कृत की इकाई में पठित प्रत्येक विधा पर एक-एक पाठयोजना बनाइए।

इकाई 4- शिक्षण में सूचना एवं तकनीकी का उपयोग-संस्कृत भाषा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संस्कृत भाषा शिक्षण एवं कम्प्युटर
    4.3.1 कम्प्युटर तथा शिक्षण प्रक्रिया
    4.3.2 कम्प्युटर की उपयोगिता
    4.3.3 कम्प्युटर के उपयोग के क्षेत्र
    4.3.4 कम्प्युटर के लाभ
    4.3.5 कम्प्युटर की साक्षरता एवं संस्कृत शिक्षण में कम्प्युटर
4.4 संस्कृत भाषा शिक्षण एवं इंटेरनेट
    4.4.1 इंटेरनेट का अभिप्राय
    4.4.2 शिक्षा में इंटेरनेट का योगदान एवं संस्कृत शिक्षण में इंटेरनेट की भूमिका
4.5 सारांश
4.6 शब्दावली
4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
4.8 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

शिक्षा का एक व्यापक अध्ययन क्षेत्र है। इसका सम्बन्ध मुख्य तीन प्रक्रियाओं-शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अनुदेशन से है। शिक्षा की विषयवस्तु इन प्रक्रियाओं अन्तःविषयक आयाम का उपयोग करके सही उत्तर ज्ञात करने का प्रयास करती हैं।

इसका ही परिणाम शिखा के विभिन्न आधार हैं - दार्शनिक सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आदि। शिक्षा के आधार उपरोक्त मूल प्रश्नों का उत्तर देने में सहायक होते हैं। यह उत्तर ही शिक्षा विषय का अध्ययन क्षेत्र है तथा विषयवस्तु है।

शिक्षा की आज की आवश्यकता है कि इसकी प्रक्रियाओं को प्रभावशाली एवं दक्ष बनाया जा सकता है। दक्षता का अर्थ होता है- कि शिक्षा प्रक्रिया प्रभावशाली होने के साथ समय, धन एवं ऊर्जा की दृष्टि से मितव्ययी हो। आधुनिक युग तकनीकी के विकास एवं क्रान्ति का युग है। प्रतिदिन नई-नई तकनीकियों तथा माध्यमों का विकास किया जा रहा है। माध्यमों के विकास ने विश्व की भौतिक दूरी को कम कर दिया अथवा विश्व को बहुत विश्व को बहुत छोटा कर दिया है। इसमें वृहद् तकनीकी प्रवृत्तियों का विशेष योगदान है।

शिक्षण का अभिप्राय

शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है इसलिए शिक्षण की व्यापक परिभाषा देना कठिन है। जो भी परिभाषाएँ दी गई हैं, वे किसी न किसी सन्दर्भ मे दी गई है। यहाँ शिक्षण की परिभाषाओं को शिक्षण क्रियाओं तथा अनुभव के सन्दर्भ में दिया जा रहा है। शिक्षण में शिक्षणशास्त्र के उपयोग तथा शिक्षक के दो प्रमुख योगदानों को सम्मिलित किया जाता है। शिक्षक के दो योगदान इस प्रकार हैं-

1. अधिगम का स्वरूप- इसमें छात्र के कार्यों एवं क्रियाओं को व्यक्त किया जाता है शिक्षक इनका सृजन करता है।
2. मध्यस्थता - इसमें छात्रें के अनुभवों सम्बन्धी शिक्षक की मध्यस्थता की सार्थकता होती है। (पृ-सं- 337, शिक्षा के तकनीकी आधार)

सूचना एवं तकनीकी

प्रदत्तों के विश्लेषण में विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किसी मशीन या हार्डवेयर उपकरण अथवा कम्प्यूटर द्वारा विश्लेषण करके जो सम्प्रेषण किया जाता है, उसे सूचना तकनीकी कहते हैं।

4.2 उद्देश्य

संस्कृत भाषा-शिक्षण के व्यावहारिक उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. **भावाभिव्यक्ति करना** – मानव की भावाभिव्यक्ति का मूल आधार भाषा है। भाषा शिक्षण में भावाभिव्यक्ति बिल्कुल व्यावहारिक विषय है इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से इस तत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। इसकी सन्तुष्टि हेतु छात्रों में सरल वाक्य निर्माण, शुद्ध गठन, शब्द प्रयोग, प्रासंगिकता का ध्यान, प्रवाहिकता का समावेश, विषयवस्तु क्रमबद्धता एवं अभीष्ट सामग्री का प्रस्तुतीकरण व्यवहारगत परिवर्तन अपेक्षित होते हैं। इसलिए संस्कृत शिक्षण से छात्रों के मन में संस्कृत के प्रति भावाभिव्यक्ति व्याप्त होती है।
2. **मानव जीवन मूल्यों की प्राप्ति** – संस्कृत भाषा-शिक्षण के माध्यम से अनेक जीवन मूल्यों की प्राप्ति हेतु अपेक्षा की जाती है। अनिवार्य संस्कृत शिक्षण के माध्यम से भी छात्र मानव जीवन मूल्यों को ग्रहरण करता है। जिनके अन्तर्गत छात्र सभ्यता एवं संस्कृति से सम्बन्धित, समाज से

सम्बन्धित राष्ट्रभावना से सम्बन्धित नवीन मूल्यों से समावेशित होता है। छात्र इन मानव जीवन मूल्यों को ग्रहण करके अपने जीवन के व्यवहार के रूप में परिणित कर सकता है।

3. **साहित्य के प्रति संवेदनशील अभिरुचि** – संस्कृत शिक्षण के माध्यम से छात्र के मन में भाषा के प्रति रुचि भावना जाग्रत होती है। वह विषयवस्तु की विशेषता के आधार पर साहित्य में रुचि उत्पन्न करता है। अपनी अभिरुचि के आधार पर ही व्यावहारिक ज्ञान की वृद्धि करता है और समज के प्रति संवेदनशील होता है क्योंकि इसी कारण से ही विद्यार्थी में सद्वृत्तियों का विकास होता है, उसी के अन्तर्गत क्रियाकलाप करता है तथा समाज के वातावरण के अनुसार संवेदनशील या सहृदयी बनता है।
4. **पाठ्येत्तर सहगामी प्रवृत्तियां और अभिवृत्तियां** – अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण विधि के कारण सहगामी पाठ्येतर प्रवृत्तियों एवं अभिवृत्तियों का विशेष महत्व व्यावहारिक दृष्टिकोण से मूल्यांकन का सापेक्षी कहा जा सकता है। इन विचारधाराओं एवं अभिवृत्तियों के अनुसार छात्रों में मौखिक वार्तालाप, संवाद, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद, भाषण, प्रवचन आदि का व्यावहारिक उपयोग आवश्यक है।
5. **शुद्ध वाचन एवं शुद्ध लेखन** – अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण के माध्यम से का प्रथम उद्देश्य यह है कि शुद्ध पढ़ा जाये क्योंकि जैसा पढ़ेगा वैसा ही लिखेगा। यदि छात्र का उच्चारण अशुद्ध है तो अशुद्ध ही लिखेगा। पढ़ने लिखने के कार्य में व्यावहारिक दृष्टि से धैर्य, मनोयोग एवं ग्रहणशीलता की आवश्यकता है, क्योंकि पठन व लेखन दोनों का ही व्यवहार में महत्व होता है।

इस प्रकार विभिन्न स्तरों पर संस्कृत शिक्षण के विभिन्न उद्देश्य हैं। संस्कृत भारत की धरोहर है इसकी रक्षा करना, संस्कृत साहित्य की रक्षा करना हमारा उद्देश्य है। संस्कृत के प्रति बालकों में रुचि उत्पन्न करना, साहित्यकारों व लेखकों के प्रति सम्मान व आदर भाव उत्पन्न करना, संस्कृत साहित्य के प्रति अनुसंधानात्मक दृष्टिकोण अपनाना संस्कृत में पत्र, निबन्ध, संवाद प्रश्नोत्तर लेखन की योग्यता का विकास करना आदि। संस्कृत भाषा के विद्यार्थियों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे इस भाषा से परिचित होकर संस्कृत में शुद्ध लिखित व मौखिक अभिव्यक्ति में सक्षम हो जायें।

संस्कृत भाषा शिक्षण के उद्देश्य

1. **भाषा तत्वों का ज्ञान** – वैकल्पिक संस्कृत भाषा के अन्तर्गत भाषा का तात्विक ज्ञान प्राथमिक उद्देश्य होता है। चूंकि अनिवार्य संस्कृत भाषा-शिक्षण के माध्यम से माध्यमिक स्तर पर शिक्षार्थी जो भाषा अध्ययन करता है, उससे वह भाषा का केवल स्वरूपगत ज्ञान ही कर सकता है। उसको यह समझने की अपेक्षा बची रहती है कि वस्तुतः मेरे द्वारा किया गया भाषा अध्ययन सामान्य है, इसको गहनता क्या है? उच्च स्तर पर पहुँचकर अध्येता अपने इस उद्देश्य ही प्रथम आवश्यकता समझता है अतः इस उद्देश्य का सर्वाधिक महत्व भी सुस्पष्ट ही है।
2. **विषय वस्तु के तत्वों का मूल्यांकन** – विषय वस्तु का मूल्यांकन वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण का उद्देश्य है। अनिवार्य स्तर पर संस्कृत की विषयवस्तु का सामान्य ज्ञान ही पाता है।

उच्च स्तर पर जब वह वैकल्पिक अध्ययन करता है तो उस विकल्प या विधा के अन्तर्गत पाठ विशेष की विषयवस्तु का और मूलतः वर्ण्य का सार्वत्रिक मूल्यांकन जिसमें विषय विशेष की उपयोगिता भी एक चिन्तनीय तथ्य है। इस प्रकार वह स्वयं अध्ययन के महत्वपूर्ण विषयों को समझ पाता है। विषयवस्तु का मूल्यांकन इस दृष्टि से भी आवश्यक है कि इसके बिना छात्र पाठ्यक्रम को एक जंजाल समझेगा वह अपने परीक्षणीय विषयों को तय नहीं कर पायेगा।

3. **शुद्ध वाचन एवं लेखन क्षमता** – अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण के अन्तर्गत शिक्षार्थी शुद्ध वाचन एवं शुद्ध लेखन का अभ्यास करता है। उच्च स्तर पर पहुँचकर वह वाचनिक एवं लेख्य शुद्धता की दृष्टि से इतना अभ्यस्त हो जाता है कि वह किसी भी वाक्य को पढ़ने-सुनने या लिखते समय अशुद्धि संशोधन कर सकता है। इस उद्देश्य का महत्व इसलिए है कि इससे भविष्य में सम्भाव्य अशुद्धियों से वह बच सकेगा। इसका एक लाभ यह भी है कि रचना कार्य में वह अधिकाधिक सफलता हासिल कर पायेगा।
4. **अभिवृत्तियों एवं अभिरुचियों की क्षमता** – यद्यपि अनिवार्य संस्कृत, भाषा शिक्षण के स्तर पर भी शिक्षार्थी को सम्बन्धित सहगामी पाठ्येतर प्रवृत्तियों व अभिवृत्तियों में प्रवेश का अवसर मिलता है तथा वहां केवल इनमें सामान्य विद्यार्थियों के रूप में इसकी भूमिका होती है। इस स्तर पर शिक्षार्थी इस विषय में दक्षता की अपेक्षा करता है तथा वह अपने को सामान्य विद्यार्थी न समझकर प्रतियोगी समझता है।
5. **हिन्दी व संस्कृत भाषा में अनुवाद की क्षमता** – वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण अनुवाद जैसे विषयों के सम्बन्ध में एकाधिकार का पक्षपाती कहा जा सकता है चूंकि अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण के अन्तर्गत वह सामान्य वाक्यों का ही अनुवाद सीखता है, वहाँ उसका उद्देश्य सीखना मात्र होता है जबकि यहाँ सीखने की अपेक्षा अधिकारिक चेतना मुख्य उद्देश्य होता है।
6. **संदर्भ ग्रन्थों एवं विषयवस्तु की सहायक पुस्तकों का अध्ययन** – वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण में शिक्षार्थी को एक ही विषय की पूर्ण विवेचना का अवसर प्राप्त होता है। अतएव उस विषय विशेष की पूर्ण जानकारी हेतु उसका जो मूल उद्देश्य होता है संस्कृत ग्रन्थों एवं विषयवस्तु की सहायक पुस्तकों का अध्ययन इस उद्देश्य का महत्व शिक्षार्थी के ज्ञान वृद्धि की दृष्टि से अपेक्षित बढ़ जाता है।
7. **सामयिक विचारधारा एवं निरन्तर वैचारिक विकास का प्रयास** – वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण के स्तर पर विषय का विशेष अध्ययन शिक्षार्थी को सामयिक विचारधारा बनाने हेतु प्रेरित करता है। अपने इस विशेष महत्वपूर्ण उद्देश्य के अनुवर्द्धन उद्देश्यों के रूप में वह अपने विचारों को निरन्तर विकसित करने का प्रयास करेगा। इस उद्देश्य से व्यक्तित्व विकास की सम्पूर्ति हो जाती है।
8. **भाषा तत्वों का शोधन कार्य करना** – वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण के अन्तर्गत विद्यार्थी वैषयिक तथ्यों के पूर्ण ज्ञान हेतु शोधकार्य की ओर प्रवृत्त होता है तथा उसे ज्ञान पिपासु बनाने का अवसर भी मिलता है तथा वह अपने ज्ञान को प्रामाणिक बनाने के सभी सम्भव प्रयास करता है।

9. **संस्कृति को ग्रहण करने की योग्यता** – संस्कृत भाषा में ही हमारी संस्कृति के तत्व विद्यमान हैं। अनिवार्य संस्कृत भाषा शिक्षण में वह केवल संस्कृत का ही अध्ययन कर पाता है। उसमें सनिहित संस्कृति को नहीं ग्रहण कर पाता। वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण में उसके अध्ययन का एक विकल्प यह भी होती है कि उस भाषा में निहित संस्कृतिपूर्ण परिचय करे।

इस प्रकार वैकल्पिक संस्कृत भाषा शिक्षण के मुख्य उद्देश्यों के बारे में बताया गया है। अब इसके अन्तर्गत अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तनों का उद्देश्य स्पष्ट किया है कि हममें वैकल्पिक संस्कृत में अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन होंगे।

4.3 संस्कृत भाषा शिक्षण एवं कम्प्युटर

आधुनिक युग की महत्वूपर्ण देन कम्प्यूटर है। वर्तमान युग कम्प्यूटर का युग कहा जाता है। इसका उपयोग अधिक व्यापक है। कम्प्यूटर के उपयोग ने मानव जीवन को अधिक तीव्र तथा शुद्ध बना दिया है। विश्व का रूप भी छोटा कर दिया है। कम्प्यूटर समय, शक्ति एवं धन की दृष्टि से अधिक मितव्ययी आविष्कार है। इसमें मानव की सक्षमता की वृद्धि हुई है।

4.3.1 कम्प्युटर तथा शिक्षण प्रक्रिया (Computer and Teaching Process)

लारेंस स्टोलुरो तथा डेनियल डेविज (1965) ने सबसे जटिल शिक्षण प्रतिमान का विकास किया है, उसमें शिक्षक के स्थान पर कम्प्यूटर को अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण के लिये प्रयोग किया गया है। स्टोलुरो तथा डेविज ने कम्प्यूटर की शिक्षण प्रक्रिया को दो पक्षों में विभाजित किया है –

i. पूर्व-अनुवर्ग शिक्षण पक्ष (Pre-Tutorial Phase) तथा
ii. अनुवर्ग शिक्षण पक्ष (Tutorial Phase) ।

पहले पक्ष में कम्प्यूटर अनुदेशन के विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये विशिष्ट छात्र का चयन करता है। यह चयन छात्र के पूर्व व्यवहार के आधार पर किया जाता है। दूसरे पक्ष में कम्प्यूटर अनुदेशन का प्रस्तुतीकरण करता है और अनुदेशन के बाद छात्रों की निष्पत्तियों का मापन करता है।

4.3.2 कम्प्युटर की उपयोगिता

कम्प्यूटर का उपयोग उद्योग, व्यापार, सेना तथा शिक्षा में किया जाता है। कम्प्यूटर ने मनुष्य की जटिल समस्याओं को सरल एवं सुगम बना दिया है। शिक्षा के क्षेत्र ने कम्प्यूटर का प्रयोग प्रमुख रूप से चार क्षेत्रों में अधिक किया जाता है-

(1) शिक्षण तथा अनुदेशन में,
(2) शिक्षा के शोध कार्यों में,
(3) शिक्षा निर्देशन व परामर्श में
(4) परीक्षा प्रणाली में

i. **शिक्षण तथा अनुदेशन में -** व्यक्तिगत अनुदेशन के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। एक कम्प्यूटर पर एक समय में कई प्रकार के छात्र एक पाठ्यवस्तु के कई अनुदेशनों का अध्ययन करते हैं। इस प्रकार कम्प्यूटर अनुदेशन की व्यवस्था करता है। शिक्षक अपने कक्षा-शिक्षण में अनुदेशन के समुचित रूप में चयन के लिये कम्प्यूटर की सहायता ले सकता है। प्रस्तुतीकरण के साथ-साथ इसके द्वारा छात्रों की अनुक्रियाओं का भी अवलोकन किया जाता है। कम्प्यूटर शिक्षण के उद्देश्यों, छात्रों के पूर्व-ज्ञान तथा प्रस्तुतीकरण के संबंध् में निर्णय लेता है।

ii. **शोध कार्य-** कम्प्यूटर का प्रयोग अनुदेशन के प्रस्तुतीकरण की अपेक्षा शोध कार्यों में अधिक किया जाता है। भारतीय परिस्थितियों में भी कम्प्यूटर का प्रयोग शोध कार्यों में किया जाने लगा है परन्तु यहाँ पर इसका प्रयोग अनुदेशन के लिये संभव नहीं हो पाया है। इसके द्वारा विशाल प्रदत्तों के संकलन के पश्चात प्रदत्तों के विश्लेषण के लिये कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है। इसके द्वारा विशाल प्रदत्तों का विश्लेषण छः घण्टों में हो जाता है। कम्प्यूटर द्वारा प्राप्त परिणाम शुद्ध होते हैं।

iii. **शैक्षिक निर्देशन तथा परामर्श -** कम्प्यूटर का प्रयोग अन्तःनिर्देशन तथा परामर्श के लिये भी किया जाता है। शैक्षिक निर्देशन के लिये छात्रों का निदान किया जाता है और उनकी कमजोरियों के उपचार के लिये अनुदेशन दिया जाता है। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक निर्देशन के लिये छात्र की क्षमताओं तथा योग्यताओं को कार्ड पर अंकित करके कम्प्यूटर को दे दिया जाता है। कम्प्यूटर उनकी क्षमताओं के आधार पर निर्देशन तथा परामर्श का सम्प्रेषण विद्युत टंकन मशीन द्वारा करता है। इस प्रकार कम्प्यूटर की सेवायें अब भारतवर्ष में उपलब्ध की जा रही हैं।

iv. **परीक्षा प्रणाली -** शिक्षा की प्रमुख दो क्रियायें होती हैं – शिक्षण तथा परीक्षण। इन दोनों क्रियाओं के लियेकम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है। परीक्षाफल तैयार करने में अधिक समय लगता था। अतः अब भारतवर्ष में भी विश्वविद्यालय तथा परीक्षा-परिषदें अपने परीक्षाफलों को तैयार करने में कम्प्यूटर की सहायता लेने लगी हैं।

इस प्रकार भारतवर्ष में परीक्षा तथा शोध के प्रदत्तों के विश्लेषण में कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाने लगा है। शिक्षण तथा निर्देशन में इसका प्रयोग अभी पश्चिमी देशों तक ही सीमित है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष में कम्प्यूटर की सेवाओं का उपयोग अन्य उद्योग, व्यापार, प्रशासन तथा सेवा आदि में भी किया जाने लगा है।

4.3.3 कम्प्युटर के उपयोग के क्षेत्र

दूरवर्ती अधिगम के लिये कम्प्यूटर की पारस्परिक क्रिया की कुछ मुख्य विशेषतायें हैं, कुछ विशेषतायें निम्नलिखित हैं, जो कम्प्यूटर के उपयोग के क्षेत्र को प्रगट करती हैं-

i. विशेषज्ञों द्वारा अधिगम की प्रशंसा करना।
ii. एकांकी एवं बहुमुखी सम्प्रेषण करना।
iii. शिक्षार्थी का क्रियात्मक योगदान रहता है।
iv. कार्यक्रम की समस्याओं से सम्बन्धित करना।

v. सदस्यों एवं विशेषज्ञों द्वारा अनुसरण, पृष्ठपोषण एवं क्रियान्वयन करना।
vi. स्वःनिर्देशित आदि एवं अन्त पर नियन्त्रण समय, स्थान एवं गति के अनुसार सम्प्रेषण करना।

4.3.4 कम्प्युटर के लाभ

यहाँ पर दिये गये विवरण में कम्प्यूटर के लाभ तथा कुछ उपयोग पारम्परिक मुद्रित अनुदेशनात्मक माध्यम के हैं। इन लाभों का यहाँ पर उल्लेख किया गया है-

i. नवीन कम्प्यूटर के साथ काम करने के कुछ उपयोग प्रेरणा प्रदान करते हैं।
ii. सजीव रंगीन चित्रण छात्रों को अभ्यास करने के लिए वास्तविक प्रेरणा प्रदान करता है।
iii. उच्च कोटि की व्यक्तित्व की क्रियायें छात्रों की प्रतिक्रियाओं को उच्च कोटि का पुनर्बलन प्रदान करती हैं।
iv. छात्रों की स्मरण-शक्ति उनके अतीत के ज्ञान को अभिलेखित करने के लिए परवर्ती पदों को प्रदान करती है।
v. निम्न कोटि के शिक्षार्थी को व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशनात्मक कार्यक्रम द्वारा धनात्मक एवं प्रभावी वातावरण तैयार किया जाता है। उसके लिए इसको विभिन्न पदों में व्यक्त किया जाता है।
vi. अभिलेखों को सुरक्षित रखने की क्षमता कम्प्यूटर के द्वारा सरल बनाई जा सकती है। इसके द्वारा छात्रों को दिशा-निर्देशित किया जा सकता है एवं उनके द्वारा व्यक्तिगत प्रकार के अनुदेशन भी दिए जा सकते हैं।
vii. शिक्षक के नियन्त्रण के क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है और अधिक सूचनाप्रद बनाया जा सकता है। इससे शिक्षक की व्यवस्था के अनुसार छात्रों के मध्य सीधा सम्पर्क बनाया जा सकता है।

4.3.5 कम्प्युटर की साक्षरता एवं संस्कृत शिक्षण में कम्प्युटर

इस प्रकार की योजना (1983-84) में भारत में मानव संसाधन विकास मन्त्रालय द्वारा आरम्भ किया गया। इस प्रकार का मुख्य उद्देश्य छात्रों एवं शिक्षकों को कम्प्यूटर की प्रणाली से परिचित करना तथा इसके माध्यम से अधिगम की प्रक्रिया को सम्पादित करना है।
इस कार्यक्रम को 248 चुने हुए माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में प्रयोग किया गया। प्राथमिक रूप से इसको राजकीय विद्यालयों के लिए प्रयोग किया गया, जिसमें सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से गरीब छात्रों को सम्मिलित किया गया, ऐसे संस्थान सीमित साधनों से युक्त थे। इसके बाद (1987-88) के मध्य 500 विद्यालयों को और सम्मिलित करने का प्रस्ताव किया गया।

इस परियोजना के लिए हार्डवेयर एवं सॉफटवेयर आयामों को ब्रिटेन से प्राप्त किया गया है। इस परियोजना के लिए विभिन्न केन्द्रों पर 3180 अध्यापकों को प्रशिक्षण दिया गया था।

अहमदाबाद के स्पेस एप्लीकेशन केन्द्र ने 250 विद्यालयों में एक अध्ययन किया, जिसके द्वारा इस कार्यक्रम में प्रभावशीलता के लिये नये वातावरण की तैयारी की गई। राष्ट्रीय शिक्षा परिषद् ने भी यह पाया

कि इस प्रकार का कार्यक्रम छात्रों एवं शिक्षकों में अधिक उत्सुकता उत्पन्न करता है तथा उन्हें उत्साहित करता है।

4.4 संस्कृत भाषा शिक्षण एवं इंटेरनेट

आधुनिक युग में कंप्यूटर के साथ- साथ इंटेरनेट की भी प्रासंगिकता हो गयी है आजकल विद्यालयों में इंटेरनेट का अध्ययन-अध्यापन किया जाता है । अन्य विषयों की भांति संस्कृत विषय में भी इंटेरनेट अत्यधिक योगदान रहा है ।

4.4.1 इंटेरनेट का अभिप्राय

भारत में इंटरनेट का प्रवेश अभी हाल के ही वर्षों में हुआ है। इस दृष्टि से अभी भारत में इंटरनेट के विस्तार की काफी सम्भावनाएँ हैं। हमारे देश में इंटरनेट की उपलब्ध सुविधाओं को प्रचलित करने के लिए नित्य नई वेबसाइटें आ रही हैं। भारत में कई हजार डॉटकाम कम्पनियाँ रजिस्टर्ड हैं। इन कम्पनियों की संख्या में अभी काफी वृद्धि होने का अनुमान है।

नवम्बर 1998 में भारत में निजी इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर (ISP) के आने से पूर्व देश में 1,70,000 इंटरनेट उपभोक्ता थे। वर्ष 1999 मई तक उपभोक्ताओं की संख्या में 1,30,000 की वृद्धि हुई। मई (1999) में ही 5,00,000 अन्य लोग इंटरनेट से जुड़ने के लिए प्रतीक्षारत थे। इन्हें ढाँचागत सुविधाओं की कमी के कारण कनेक्शन नहीं दिया गया। नासकाम (National Association of Software and Service Companies–NASSCOM) द्वारा कराये गये सर्वेक्षण के अनुसार देश में वर्तमान में इंटरनेट कनेक्शनों की कुल संख्या 6.10 लाख है, जिसके मार्च 2012 तक बढ़कर एक करोड़ हो जाने की सम्भावना है।

4.4.2 शिक्षा में इंटेरनेट का योगदान एवं संस्कृत शिक्षण में इंटेरनेट की भूमिका

इंटरनेट विभिन्न तकनीकी के संयुक्त रूप के कार्य (Convergence) का उदाहरण है। इंटरनेट का आधार, राष्ट्रीय सूचना स्वरूप (National Information Infrastructure) होता है, यहाँ विभिन्न सम्पर्क लाइनें, कम्प्यूटरों को जोड़ती हैं, जिन्हें गृह कम्प्यूटर कहते हैं। ये (Host Computer) विश्वविद्यालयों या अन्य संस्थानों से जुड़े रहते हैं और उन्हें इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर (Internet Service Provider {I.S.P.}) कहा जाता है। ये कम्प्यूटर्स विशेष संचार लाइनों या इंटरनेट कनेक्शन (Internet Connection) द्वारा साधारण टेलीफोन या मॉडम के जरिए उपभोक्ता व्यक्ति के गृह कम्प्यूटर (PC) से जुड़े रहते हैं। यह सम्पर्क डायलअप कनेक्शन कहलाता है। एक सामान्य उपभोक्ता निश्चित राशि का भुगतान करके (I.S.P.) इंटरनेट से जुड़ा रहता है।

इंटरनेट द्वारा शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के साथ-साथ कक्षाओं के लिए श्रेष्ठ तथा अत्याधुनिक शैक्षिक सामग्री की उपलब्धता भी सुनिश्चित हो रही है। यदि कोई छात्र शिक्षा का सर्वश्रेष्ठ लाभ उठाना चाहता है तो साइबर-कैफे में जाकर इंटरनेट द्वारा ज्ञान की विविधता प्राप्त करता है। सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा

21वीं शताब्दी में बौद्धिक, गत्यात्मक, युगान्तकारी परिवर्तन हो रहे हैं। छात्र इंटरनेट से प्रत्येक विषय से सम्बन्धित नवीनतम घटना के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकता है।

अधिगम में आने वाले समय एवं स्थान और सामाजिक आर्थिक बाधाओं को इंटरनेट समाप्त कर देता है। उस पर दुनिया के किसी भी पक्ष से वांछित विषय पर नवीनतम सूचना उपलब्ध रहती है। भारत में इग्नू (IGNOU) विश्वविद्यालय एवं आई.आई.टी. (IIT) जैसे संस्थानों ने इंटरनेट आधारित कार्यक्रम शुरू कर दिये हैं। इंटरनेट से निम्नलिखित सुविधाएँ प्राप्त की जा रही हैं-

i. **ई-मेल (Electronic Mail)** – ई-मेल सूचना सम्प्रेषण का एक रूप है। इस प्रणाली में नेटवर्क द्वारा एक कम्प्यूटर को दूसरे कम्प्यूटर से जोड़कर तत्काल सूचना को सम्प्रेषित करने की सुविधा प्राप्त की जाती है। एक कम्प्यूटर से भेजी गयी सूचना को दूसरे कम्प्यूटर पर पढ़ा जा सकता है। ई-मेल प्रणाली में मॉडम का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जब एक कम्प्यूटर सुदूरवर्ती भण्डारित डिजीटल सूचना को टेलीफोन लाइन द्वारा एनलॉग रूप में परिवर्तित कर दूसरे कम्प्यूटर तक भेजता है। दूसरी ओर दूसरे कम्प्यूटर से संलग्न मॉडम इस सूचना को अपने से संलग्न टेलीफोन से प्राप्त कर दूसरे कम्प्यूटर में डिजीटल रूप् में बदल कर भण्डारित करता है। इस प्रणाली में एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर में संदेश भेजने के लिए दूसरे कम्प्यूटर तक प्रेषित करता है, तो उनके पते की जानकारी होनी जरूरी है। ई-मेल का महत्व व्यावसायिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों में सर्वाधिक है। इसके प्रयोग से कम व्यय में ही संदेशों का आदान-प्रदान हो जाता है। एक पृष्ठ ई-मेल का व्यय लगभग 5 रुपया आता है, जो फैक्स, टेलेक्स, एस.टी.डी. अथवा कोरियर से सस्ता है।

   भारत में ई-मेल का सर्वाधिक प्रयोग ऑटोमोबाइल, इंजीनियरिंग के क्षेत्र में होता है। भारत में ई-मेल से अधिक तीव्रगति से संदेश पहुँचाने वाली वर्तमान में कोई सेवा नहीं है। ई-मेल माध्यम से ध्वनि रूप में संदेश भेजने की सुविधा देने वाले 'टाओटाक' नामक सॉफटवेयर का विकास ब्रिटेन की एशपूल टेलीकॉम कम्पनी द्वारा किया गया है। इसे सॉफटवेयर के साथ एक साउण्ड कार्ड माइक्रोफोन तथा स्पीकर्स की आवश्यकता होती है। भारत में वर्तमान में 8 कम्पनियाँ ई-मेल सुविधा उपलब्ध करा रही हैं। इनमें विप्रो, तवीटीमेल, एक्ससेस, ग्लोबमेल, एक्स ई-मेल तथा स्प्रिंट मेल प्रमुख हैं।

ii. **वेबसाइट (WEBSITE)** – वेबसाइट का सम्बन्ध विश्व फाइलों के संकलन से होता है। जिसे WWW = World Wide Web कहते हैं। इसे आरम्भ की फाइल अथवा होम पेज कहते हैं। एक संस्थान या व्यक्ति यह कहता है कि उनके वेब साइट को किस प्रकार प्राप्त किया जाए, उनके पते का होम पेज देते हैं। होम पेज से तुम्हें उसके सभी अन्य पेजों की साइट प्राप्त हो जायेगी। उदाहरण के लिए IBM के लिए वेबसाइट के होम पेज का पता http:/www.ibm.com के रूप में दिया जाता है होम पेज के अन्तर्गत वास्तव में विशिष्ट फाइलों का नाम एक इंडेक्स के रूप में html के रूप में सम्मिलित किया जाता है। IBM के होम पेज के पते के अन्तर्गत हजारों पृष्ठ सम्मिलित होते हैं।

साइट का अर्थ भौगोलिक स्थान होता है। वेबसाइट और वेब सर्वर में अन्तर होता है। एक विशाल वेबसाइट का विस्तार अधिक होता है उसमें अनेक सर्वर विभिन्न भौगोलिक स्थानों से जुड़े रहते हैं। IBM का एक उत्तम उदाहरण है। इसकी वेबसाइट में हजारों फाइलें निहित हैं तथा विश्वव्यापी स्थानों के सर्वर कार्यशील रहते हैं। वेबसाइट का पर्याय 'वेब प्रजैन्स' (Web Presence) कहलाता है। इस शब्द का अर्थ अधिक सार्थक है, क्योंकि भौगोलिक स्थानों से सम्बन्धित न होकर कम्प्यूटर में स्थान है। परन्तु वेबसाइट पद का उपयोग अधिक किया जाता है।

वेबसाइट की उपलब्धता एवं विश्वसनीयता (Website Availability and Reliability) – इन शब्दों के अर्थ से प्रगट होता है कि उपलब्धता से तात्पर्य वेबसाइट में प्रवेश करना और उससे अपेक्षित सूचना प्राप्त करना है। इस अर्थ में वेब का उपयोग करना है। आवश्यकता के समय वेबसाइट से सूचना उपलब्ध हो जाना है। वेबसाइट को फाइल से जो सूचनाएँ उपलब्ध होती हैं वे विश्वसनीय होती हैं। फाइलों में अधिकृत स्रोतों का भी उल्लेख किया जाता है। अधिकृत सूचनाओं का ही भण्डारण किया जाता है। इसमें सर्वर प्रदत्तों पर आधारित होते हैं। वेब सर्वर अन्य सर्वर पर निर्भर होते हैं। सर्वर ही व्यवहारिकता रूप प्रदान करते हैं।

वेबसाइट की उपयोगिता एवं विशेषताएँ (Uses & Features of Website) – वेबसाइट की विशेषताएँ तथा उपयोगिताएँ इस प्रकार हैं-

i. वेबसाइट की विशेषतायें होती हैं, परन्तु वेबसाइट का पता तथा इंडेक्स (Index) ज्ञान होना चाहिए।
ii. वेबसाइट से प्राप्त/उपलब्ध सूचनाएँ विश्वसनीय होती हैं।
iii. वेबसाइट की फाइलों में प्रदत्तों/सूचनाओं को अधिकृत स्रोतों से प्राप्त किया जाता है।
iv. वेबसाइट में सर्वर द्वारा प्रस्तुत सूचनाएँ प्रदत्तों पर आधारित होती हैं और उन्हें व्यवहारिक रूप दिया जाता है।
v. होस्ट व्यापारिक वेबसाइट तकनीकी की सहायता ली जाती है और इंटरनेट की सेवाएँ प्रदान करता है।
vi. सूचनाओं की विश्वसनीयता और उपलब्धता की सार्थकता सर्वर पर निर्भर करती है।
vii. वेबसाइट की फाइलों में प्रदत्तों, सूचनाओं का भण्डारण अधिकृत स्रोतों से किया जाता है तथा वेब सर्वर इन्हीं फाइलों को प्रदान करते हैं।

वेबसाइट को डिजाइन करना भी महत्वपूर्ण है। निश्चित वेबसाइटें डेटा एंट्री में सहयोग के लिए फॉर्म के साथ शहर व राज्यों की सूची भी देती है। इससे डेटा एंट्री का कार्य आसान हो जाता है और अधिक सूचना स्टोर होती हैं। कुछ वेबसाइटें कुकी का इस्तेमाल करती हैं जो कि इन्फॉरमेशन और कार्ड के बिट्स होते हैं जो ब्राउजर द्वारा आदान-प्रदान होकर कस्टमर के कम्प्यूटर में स्टोर होते हैं। जब अगली बार कस्टमर उस

साइट पर विजिट करता है तो दोनों मशीनों के बीच आदान-प्रदान होता है और कस्टमर का पुराना डेटा वेबसाइट पर आ जाता है।

जो सूचना कस्टमर द्वारा एण्टर्ड होती है अथवा भीतरी सिस्टम द्वारा पकड़ी जाती है, आमतौर पर सम्बन्धित डेटाबेस में स्टोर हो जाती है।

इंटरनेट पर अपने सबसे महत्वपूर्ण विज्ञापन के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं तथा इस जानकारी को अपनी वेब साइट पर एड भी कर सकते हैं। यदि भविष्य में आप भूले तो यह जानकारी अपनी वेब साइट से प्राप्त कर सकते हैं। यह वह स्थान है जहाँ सर्वर आपकी कम्पनी, उत्पादन या एप्लीकेशन के बारे में जानने के लिए विजिट करते हैं। इसकी रचना सावधानी से विशेषतः इंटरनेट को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। वेब पेज को एक आकर्षक विज्ञापन बनाने के लिए सभी पहलुओं पर विशेषज्ञों की राय लेनी आवश्यक है। प्रथम आपका विज्ञापन लक्षित मार्किट को फौरन ही अपनी ओर आकर्षित करने वाला हो। गहरे वेब पेज पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को कम आकर्षित करते हैं। ज्यादा एनिमेशन पेज को समझने में कठिनाई पैदा करते हैं। अव्यवसायिक डिजाइन मन को नहीं भाता और ढेर सारी सूचना अर्थव्यवस्था और भ्रम पैदा करती है। वस्तुतः वेब पेज की डिजाइनिंग पत्र-पत्रिकाओं के विज्ञापनों से सर्वथा पृथक चिंतन की मांग करती है।

वेब पेज बनाने से दूसरी महत्वपूर्ण बात है पेज की लोडिंग तथा ऑपरेशन की गति। दर्शक प्रायः कम गति वाली वेब साइटों की ओर कम ध्यान देते हैं। वे तो जल्दी से जल्दी तीव्र गतिशीलता की ओर बढ़ने को उतावले होते हैं। वेब पेज के तकनीकी पहलुओं जैसे ग्रॉफिक में कलर की विविधता, वेब पेज की गति एप्लीकेशन आदि के बारे में डिजाइनिंग के समय सावधानीपूर्वक विचार करना आवश्यक है। प्रदर्शन से पूर्व विभिन्न ब्राउजरों से वेबसाइट को चलाकर देख लेना चाहिए। सफलता की गति कुछ अन्य बातों पर भी निर्भर करेगी जैसे कि इंटरनेट ट्रेफिक का लेवल, जो कि आपके नियन्त्रण से बाहर की बात है।

वेबसाइट के निर्माण में सूचना की सूची का निर्धारण करना भी एक महत्वपूर्ण तथ्य है। सूची में यह स्पष्ट होना चाहिए कि साइट पर सूचना कहां दी गई है। आमतौर पर उपयोगी सूचना साइट के होम पेज पर ही दी जाती है जबकि निवेशक सम्बन्धी कम उपयोगी सूचना पीछे के पेजों पर। सूची इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होती है कि वही कस्टमरों तक सही संदेश पहुँचाने वाली होती है। कुल मिलाकर वेबसाइट की सूची एक छपी पुस्तिका की भाँति होनी चाहिए, जो कि कस्टमरों को सीधे-सीधे आपकी ओर आकर्षित कर सके। सभी सूचियों की ध्यानपूर्वक प्रूफ रीडिंग हो, क्योंकि त्रुटियाँ आकर्षण कम करती हैं।

अन्य वेबसाइटों से जुड़ना क्रय-विक्रय विज्ञापन देने वालों के लिए लाभदायक व प्रभावकारी मार्ग है। ये छोटे-छोटे लिंक, बॉक्स बैनर एड के समान ही आकर्षक होते हैं। जब GIF या अन्य तरह की कोई इमेज वेब पेज पर लोड की जाती है, वह उसी वेबसाइट पर पहुँच जाता है। जो कम्पनियाँ वेब पेजों पर स्थान बेचती हैं, बदले में माइक्रोपेमेंट या कमीशन में हिस्सेदारी पाती है। विज्ञापनदाता को बदले में एक डाइरेक्ट लिंक मिलता है जो ट्रैफिक उसकी ओर मोड़ने में योगदान करता है।

iii. **साइट माध्यम (Site Media)** – भारत में उपग्रह टेक्नोलॉजी से सम्बन्धित पहला प्रयोग था – सेटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टेलीविजन एक्सपेरिमेंट, (साइट) जो (1975-76) में किया गया। संयोग से सामाजिक शिक्षा के लिए इस प्रकार की आधुनिक प्रौद्योगिकी उपयोग करने का विश्व में यह पहला प्रयास था। वर्ष 1982 में दिल्ली और अन्य ट्रांसमीटरों के बीच उपग्रह द्वारा नियमित सम्पर्क के साथ राष्ट्रीय प्रसारण शुरू हुआ तथा दूरदर्शन का रंगीन प्रसारण शुरू किया। इन परिवर्तनों को जल्दी लागू करने की मुख्य प्रेरणा उस वर्ष दिल्ली में आयोजित एशियाई खेलों से मिली थी।

iv. **ई-कॉमर्स (Electronic Commerce)** – ई-कॉमर्स इंटरनेट आधारित उपभोक्ता बाजार की एक नई कार्य-प्रणाली है, जिसके अन्तर्गत इंटरनेट पर ठीक उसी प्रकार वस्तुओं का क्रय-विक्रय किया जाता है। भारत में ई-कॉमर्स अभी प्रारम्भिक अवस्था में है। फिर भी इस वर्ष ई-कॉमर्स द्वारा भारत में किया जाने वाला कुल व्यापार 500 करोड़ रुपये तक पहुँच जाने की आशा है। ई-कॉमर्स के माध्यम से सेवाएँ देने वाली भारतीय कम्पनियों में मुख्य हैं – अमूल, आई.सी.आई. तथा राष्ट्रीय स्टॉक एक्सचेंज। भारत में ई-कॉमर्स से सम्बन्धित विनियमों तथा कानूनों का अत्यधिक अभाव है जिसके कारण इस माध्यम का विस्तार नहीं हो पा रहा है। हाल ही में केन्द्र सरकार द्वारा ई-कॉमर्स को विस्तार देने की दिशा में कुछ ठोस पहल की गयी है तथा प्रयास किये जा रहे हैं।

ई-कॉमर्स प्रणाली का मुख्य आधार इलेक्ट्रॉनिक डाटा-इंटरचेंज है, जिसके अन्तर्गत आँकड़ों को परिवर्तित करने तथा स्थानान्तरित करने की सुविध होती है। इस प्रणाली के अन्तर्गत ग्राहक जब वेबसाइट पर उपलब्ध सामान को पसंद करके क्रय करता है, तो उसे भुगतान के लिए कम्प्यूटर पर उपलब्ध एक फॉर्म भरना होता है। इस फॉर्म में अपना क्रेडित कार्ड नम्बर, देय राशि, पाने वाली फर्म का नाम इत्यादि सूचनाएँ अंकित करनी होती हैं। फॉर्म के भरते ही ग्राहक के खाते से धनराशि निकलकर विक्रेता के खाते में स्थानान्तरित हो जाती है। इलेक्ट्रॉनिक डाटा इंटरचेंज के अन्तर्गत अभी हाल में एक नई प्रणाली का सूत्रपात हुआ है। इस प्रणाली के अन्तर्गत क्रेता कम्प्यूटर पर अपने डिजिटल हस्ताक्षर द्वारा चेक काट सकता है। यह प्रणाली उन्हीं देशों में लागू है, जहाँ डिजिटल हस्ताक्षर को कानूनी मान्यता मिली हुई है।

4.5 सारांश

कम्प्यूटर सहायक शिक्षा या इण्टरनेट सहायक शिक्षा का अभिप्राय यह है कि जिसके अन्तर्गत कम्प्यूटर की कार्यप्रणाली तथा विद्यार्थी विशेष के बीच अनुदेशन के दौरान एक ऐसी प्रयोजनपूर्ण अंतःक्रिया चलती रहती है जिसके माध्यम से विद्यार्थी को अपनी क्षमताओं तथा अधिगम गति का अनुसरण करते हुए निर्धारित-अनुदेशनात्मक उद्दश्यों की प्राप्ति में यथेष्ट सहयोग मिलता रहता है। शिक्ष के क्षेत्र में कम्प्यूटर विविध प्रकार की ऐसी अमूल्य भूमिका निभा सकते है जिसके माध्सम से शिक्षा जगत विविध प्रकार की

गतिविधियों का अच्छी विषयों का अध्ययन-अभ्यापन किया जा सकता है चाहे वह विज्ञान हो, अंग्रेजी हो या संस्कृत। शिक्षण में भी अन्य विषयों की भांति संगणक एवं इण्टरनेट का अत्यधिक योगदान रहा है। जैसे- शिक्षण कार्यों की सूची, विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण, संस्कृत पाठों को आकर्षक एवं रुचिपूर्ण बनाना, सभी कौशलों का विस्तारपूर्वक पावरपॉइन्ट (P.P.T) द्वारा विश्लेषित करना इत्यादि। इण्टरनेट, ई-मेल की सुविधा से भी संस्कृत शिक्षण को लाभ प्राप्त हुआ है। इण्टरनेट, ई-मेल, टेलीकांफ्रेसिंग, कम्प्यूटर सहाय अनुदेशन, भाषा प्रयोगशाला व शिक्षण के माध्यम के रूप में कम्प्यूटर का उपयोग शिक्षण में किया जा सकता है।

4.6 शब्दावली

1. संस्कृत भाषा शिक्षण- मानव की भावाभिव्यक्ति का मूल आधार भाषा है। भाषा शिक्षण में भावाभिव्यक्ति बिल्कुल व्यावहारिक विषय है इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से इस तत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। इसकी सन्तुष्टि हेतु छात्रों में सरल वाक्य निर्माण, शुद्ध गठन, शब्द प्रयोग, प्रासंगिकता का ध्यान, प्रवाहिकता का समावेश, विषयवस्तु क्रमबद्धता एवं अभीष्ट सामग्री का प्रस्तुतीकरण व्यवहारगत परिवर्तन अपेक्षित होते हैं। इसलिए संस्कृत शिक्षण से छात्रों के मन में संस्कृत के प्रति भावाभिव्यक्ति व्याप्त होती है।
2. कम्प्युटर- कम्प्यूटर के उपयोग ने मानव जीवन को अधिक तीव्र तथा शुद्ध बना दिया है। विश्व का रूप भी छोटा कर दिया है। कम्प्यूटर समय, शक्ति एवं धन की दृष्टि से अधिक मितव्ययी आविष्कार है। इसमें मानव की सक्षमता की वृद्धि हुई है।
3. इंटेरनेट- इंटरनेट विभिन्न तकनीकी के संयुक्त रूप के कार्य (Convergence) का उदाहरण है। इंटरनेट का आधार, राष्ट्रीय सूचना स्वरूप (National Information Infrastructure) होता है, यहाँ विभिन्न सम्पर्क लाइनें, कम्प्यूटरों को जोड़ती हैं, जिन्हें गृह कम्प्यूटर कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षण का क्या अभिप्राय है?
2. संस्कृत शिक्षण के व्यवहारिक पक्ष का विश्लेषण करें।
3. कम्प्यूटर की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?
4. शिक्षा में कम्प्यूटर की उपयोगिता क्या है?
5. इण्टरनेट से आप क्या समझते है?
6. संस्कृत शिक्षण में इण्टरनेट की आवश्यकता क्यों है?

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. शर्मा, आर-ए-, शिक्षा के तकनीकी आधार, आर-लाल बुक डिपो,
2. मंगल, एस-के- एवं मंगल, उषा, शिक्षा तकनीकी, विनोद पुस्तक, (2013)
3. कुलक्षेष्ठ, एस-पी- शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
4. यादव, डी-एस-शिक्षण तकनीकी के मूल तत्व, नेहा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स (2008)
5. झा, डॉ- नागेन्द्र, प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षा-पद्धति, अभिषेक प्रकाशन, दिल्ली, 2013
6. शर्मा, डॉ- उषा, संस्कृत शिक्षण, स्वाति पब्लिकेशन्स, जयपूर
7. शर्मा, डॉ- नन्दराम, संस्कृत शिक्षण, साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन, 2007

4.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. शिक्षा एवं शिक्षण की अवधारणा बताते हुए संस्कृत शिक्षण के व्यवहारिक उद्देश्यों का उल्लेख करें।
2. सूचना एवं तकनीकी के सम्प्रत्यय का विस्तारपूर्वक व्याख्या करें।
3. ‘‘वर्तमान में संस्कृत भाषा की प्रासंगिकता’’ इस तर्क से क्या आप सहमत है? व्याख्या करें।
4. कम्प्यूटर की व्याख्या करते हुए संस्कृत शिक्षण में कम्प्यूटर की उपयोगिता का उल्लेख करें।
5. इण्टरनेट से आप क्या समझते है। संस्कृत शिक्षण में इण्टरनेट की क्या भूमिका है? वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इण्टरनेट की प्रासंगिकता को दर्शाए।

इकाई 5 - भाषा-शिक्षक संस्कृत भाषा के विशेष सन्दर्भ में

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 भाषा शिक्षक से आशय
 5.3.1 भाषा शिक्षक का महत्व
 5.3.2 संस्कृत भाषा शिक्षक
5.4 संस्कृत भाषा शिक्षक के गुण
5.5 भाषा शिक्षक की योग्यता
5.6 संस्कृत भाषा शिक्षक तथा भाषायी कौशल
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
5.11 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप भाषा शिक्षक के रुप में संस्कृत भाषा शिक्षक के विषय में अध्ययन करेंगे। भाषा शिक्षक से आशय, विविध भाषा के शिक्षक/भाषा शिक्षक व अन्य शिक्षक । प्रथमभाषा (मातृभाषा) शिक्षक तथा अन्य भाषा (संस्कृत भाषा) शिक्षक ।

संस्कृत भाषा शिक्षक के गुणों के विषय में विशेष रुप से वैयक्तिक गुण, सामाजिक गुण, मनोवैज्ञानिक गुण, नैतिक गुण एवं अन्य गुण किस प्रकार भाषा शिक्षक के व्यक्तित्व को एक प्रभावी भाषा शिक्षक के रुप में स्थापित करता है, के विषय में अध्ययन कर एक सफल भाषा शिक्षक के रुप अपने-आप को स्थापित कर सकेंगे।

भाषा शिक्षक की अपेक्षित योग्यताओं के अन्तर्गत संस्कृत भाषा व साहित्य का ज्ञान तथा शिक्षणशास्त्र का ज्ञान, शिक्षण सम्बन्धी अन्य क्रिया-कलापों का ज्ञान किस तरह शिक्षार्थियों को संस्कृतभाषा के प्रति रुचि उत्पन्न कर संस्कृत भाषा को सीखने के प्रति अभिप्रेरित करता है ।

विभिन्न भाषा कौशलों यथा-श्रवण-वाचन-पठन व लेखन के साथ-साथ निदानात्मक व उपचारात्मक शिक्षण एवं क्रियात्मक अनुसंधान सम्बन्धित ज्ञान शिक्षार्थियों को पहचानने एवं उनके दोषो को दूर करने में भाषा शिक्षक के लिए किस प्रकार मददगार सिद्ध होता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

1. भाषा शिक्षक का आशय बता सकेंगे।
2. भाषा शिक्षक तथा अन्य विषय शिक्षक में अन्तर कर सकेंगे।
3. मातृभाषा-शिक्षक एवं अन्य भाषा शिक्षक में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
4. संस्कृत भाषा शिक्षक के गुणों का उल्लेख कर सकेंगे।
5. संस्कृत भाषा शिक्षक के शैक्षिक एवं शिक्षणशास्त्रीय योग्यताओं का वर्णन कर सकेंगे।
6. भाषा शिक्षण के विविध कौशलों का ज्ञान प्राप्त कर, अपने शिक्षण कौशलों का संवर्धन कर सकेंगे।
7. भाषा शिक्षक के अन्य कार्यों का मूल्यांकन कर सकेंगे।

5.3 भाषा शिक्षक से आशय

शिक्षक का स्थान भारत में ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में सर्वोपरि है। शिक्षक को भारतीय समाज में उपाध्याय, शास्त्री, आचार्य एवं गुरू कहा जाता है। भारतीय शास्त्रों में शिक्षक को साक्षात् परम् ब्रह्म के रुप में स्वीकार किया गया।

वर्तमान परिदृश्य में शिक्षक को राष्ट्र निर्माता कहा जाता है। समाज की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति में सबसे बड़ा योगदान शिक्षक का होता है। एक शिक्षक राष्ट्र के नागरिक से राष्ट्र प्रमुख तक का निर्माण करता है। विद्यालय में कार्य के आधार पर शिक्षकों के कई प्रकार हैं-कक्षा शिक्षक एवं विषय शिक्षक। विषय शिक्षक यथा- विज्ञान शिक्षक, समाजिक शिक्षक, गणित शिक्षक, हिन्दी शिक्षक, अंग्रेजी शिक्षक, संस्कृत शिक्षक आदि। विद्यालय के स्तर के आधार पर- प्राथामिक शिक्षक-माध्यमिक शिक्षक तथा उच्चतर माध्यमिक शिक्षक। आप माध्यमिक शिक्षक के रुप में भाषा शिक्षक के अन्तर्गत अन्य भाषा(संस्कृत भाषा) शिक्षक के रुप में कार्य कर रहें हैं।

भारतीय विद्यालयों में माध्यमिक स्तर तक प्रायः दो या तीन भाषाएँ पढ़ाने का प्रवाधान हैं। जहाँ प्रथम भाषा के रुप में मातृभाषा तथा द्वितीय भाषा या अन्य भाषा के रुप में संस्कृत पढने-पढ़ाने की व्यवस्था है।

शिक्षा व्यवस्था में सम्प्रेषण का मुख्य साधन भाषा है। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया संचालन का मुख्य आधार भी भाषा है। इस दृष्टि से भी भाषा शिक्षक का दायित्व और बढ़ जाता है। जैसा कि ऊपर कहा गया है भाषा का शिक्षण दो रुपों में किया जाता है। संस्कृत भाषा, द्वितीय अथवा अन्य भाषा के रुप में पढ़ाने

की व्यवस्था है। जो प्रायः पाँचवीं व छठी कक्षा से प्रारम्भ होती है। संस्कृत को प्राचीनतम एवं शास्त्रीय भाषा का दर्जा प्राप्त है, जो विशेष रुप से व्यक्ति को संस्कारवान् बनाती है। अतः संस्कृत भाषा शिक्षक के गुण, योग्यता तथा कुशलता के प्रति आम लोगों की धारणा पृथक् है।

भाषा शिक्षक होने के नाते संस्कृत भाषा शिक्षक से समाज की अपेक्षा और बढ़ जाती है। उनका व्यक्तित्व, आकर्षक, धर्मपरायण, चरित्रवान, समन्वयवादी, स्पष्टवादी व शिक्षार्थी तथा समाज के लिए एक आदर्श होता है।

अभ्यास प्रश्न

1. शिक्षक के किन्हीं तीन नामों का उल्लेख करें?
2. मातृभाषा शिक्षक एवं संस्कृत भाषा शिक्षक में अन्तर स्पष्ट करें।

5.3.1 भाषा शिक्षक का महत्त्व

विचार का संचार भाषा के माध्यम से होता है। सामान्य बोलचाल की भाषा बच्चे माता से परिवार तथा समाज से सीखता है। जबकि मानक भाषा का ज्ञान एक सुयोग्य भाषा शिक्षक ही करा सकता है, जिन्हें सम्बद्ध भाषा पर अधिकार तथा उस भाषा के साहित्य में रूचि तथा उसका ज्ञान पर्याप्त हो।

एक भाषा शिक्षक मुख्य रुप से भाषिक क्षमता जैसे-श्रवण-वाचन-पाठन व लेखन में निष्णात हों, तभी वह एक शिक्षार्थी में उचित भाषा कौशलों का विकास करने के साथ-साथ उसके साहित्य में भी विविध भाषायी क्रियाकलापों के माध्यम से रुचि जागृत कर सकता है। अपनी भाषा की कुशलता के आधार पर ही कोई व्यक्ति या शिक्षार्थी अपने भावों व विचारों को भलीभाँति अभिव्यक्त करने में समर्थ होता है। दूसरे के भावों व विचारों को सहजतापूर्वक ग्रहण करने में समर्थ होता है। अतः विद्यालय परिवेश में शिक्षण अधिगम का मुख्य साधन भाषा होने से भाषा शिक्षक का महत्त्व सर्वाधिक है। क्योंकि गणित, विज्ञान, सामाजिक व अन्य विषयों को भाषा के अभाव में सीखना-सिखना संभव ही नहीं है। अतः ज्ञानार्जन का मुख्य माध्यम भाषा ही है।

5.3.2 संस्कृत भाषा शिक्षक

संस्कृत भाषा भारोपीय परिवार के शतम् वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। यह श्लिष्टात्मिका अर्थात् योगत्मिका भाषा है। भारतीय भाषायों की जननी है। इसका स्वरूप पूर्णतः वैज्ञानिक है तथा इसका साहित्य समृद्ध व नवीन प्राचीन वैज्ञानिक ज्ञान का अक्षुण भण्डार है।

संस्कृत भाषा शिक्षक का स्थान भारतीय प्राचीन परम्परा में-"आचार्य देवो भव" के रुप में मान्य था। संस्कृत भाषा शिक्षक को संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार अर्थात् सुनने, पढने, बोलने व लिखने में समर्थ होना चाहिए। वर्णो का शुद्ध व स्पष्ट उच्चारण कौशल में निपुणता होने से शिक्षार्थियों के लिए आदर्श होता है। श्लोक के छन्दबद्ध गायन द्वारा शिक्षार्थियों व श्रोताओं में अनुराग उत्पन्न करता है, शास्त्रीय सूक्तियों के

दैनिक प्रयोग द्वारा लोगों में नैतिक ज्ञान के साथ-साथ शिक्षार्थियों में संस्कृत भाषा साहित्य के प्रति अभिप्रेरित करता है। इस प्रकार संस्कृत भाषा शिक्षक संस्कृत भाषा का तथा इसमें निहित ज्ञान का संरक्षण एवं सम्वर्द्धन करता है। समाज को अपने ज्ञान से प्रकाशित करता है।

अभ्यास प्रश्न

3. विद्यालय में संस्कृत भाषा शिक्षक का स्थान निर्धारित करें। चार वाक्यों में उत्तर लिखें।

5.4 संस्कृत भाषा शिक्षक के गुण

शिक्षक के गुणों का वर्णन महाकवि कालिदास ने **'मालाविकाग्निमित्रम्'** नाटक में इस प्रकार किया है-

"श्लिष्टा क्रिया कस्यचिदात्मसंस्था,
संक्रान्तिरन्यस्य विशेषयुक्ता।
यस्योभयं साधु स शिक्षकाणां,
धुरी प्रतिष्ठापायितव्य एव।।"

अर्थात् कुछ विद्याग्रहण में प्रवीण होते हैं तथा अन्य विद्यार्थियों को विद्याप्रदान करने में कुशल होते हैं। जिन शिक्षकों में ये दोनों ही गुण होते हैं, वही कुशल शिक्षक होते हैं।

संस्कृत शिक्षक में शिक्षकों के सभी सामान्य गुण होना अपेक्षित है जिसकी समाज प्रत्येक शिक्षक से आशा करता है यथा- आकर्षक एवं अभिप्रेरक व्यक्तित्व, आदर्श वेशभूषा, उत्तम स्वास्थ्य, मृदुभाषी, कुशाग्रबुद्धि, सांवेगिक संतुलन, सामाजिक व्यवहार कुशलता, उत्तमचरित्र, सकारात्मकता, दृढ़संकल्पी, कुशल नेतृत्व, हँसमुख, मित्रता एवं सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार आदि। इन गुणों को वैयक्ति, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, नैतिक एवं अन्य गुणों के रुप में विभक्त कर विशिष्ट रुप से आगे पढ़ेंगे।

वैयक्तिक गुण

शिक्षक को प्रभावी और कार्यकुशल होने मे उनका वैयक्तिक गुण तथा शिक्षणशास्त्री गुणों की अहं भूमिका होती है। आइए प्रभावी शिक्षक निर्माण के कुछ प्रमुख वैयक्तिक गुणों पर दृष्टिपात करें।

शिक्षक का शारीरिक एवं मानसिक गुण उत्तम हो । वह जितना बाहर से (शारीरिका रुप से) सुन्दर हो उतना मानसिक (आन्तरिक) रुप से भी स्वस्थ्य हो। सादा जीवन उच्च विचार को चरितार्थ करता हो।

प्रत्येक व्यक्ति अपेक्षा करता है कि शिक्षक का अपना सुदृढ़ मूल्यतंत्र हो। यदि शिक्षक आलसी है, उसमें उत्साह और परिश्रम करने की इच्छा का अभाव है, तो वह अपने विद्यार्थियों के मन में इन मूल्यों को नहीं स्थापित कर पाएगा। विद्यार्थियों की प्रेक्षण दृष्टि तीव्र होती है। उनमें इतनी समझदारी होती है कि शिक्षक की कथनी और करनी मे अन्तर को पहचान सकें। यदि शिक्षक स्वयं अशुद्ध व अशोभनीय भाषा

का प्रयोग करता है तो उन्हें अपने विद्यार्थियों को शुद्ध व शोभनीय भाषा बोलने के लिए कहने का अधिरकार नहीं है। इसी तरह वह स्वयं कक्षा में विलम्ब से आये और विद्यार्थियों को कहे कि समय से आओ तो इसका प्रभाव नहीं पड़ता। ईमानदारी, सच्चाई, निष्ठा, स्वच्छता, समर्पण भावना, स्नेह आदि मूल्य दूसरों के व्यवहार के अवलोकन से आत्मसात होते हैं न कि पढ़ाए जाने से । तात्पर्य यह है कि विद्यार्थियों के चरित्र व व्यक्तित्व में इन गुणों को उतारने के लिए शिक्षक स्वतः अपने विद्यार्थियों के समक्ष ऐसे आदर्श व्यक्ति के रुप में प्रस्तुत करना होगा जो उनके लिए सदैव प्रेरणा का स्रोत बना रहे।

यदि दुर्भाग्य से शिक्षक के व्यक्तित्व में ऐसा कोई दुर्गुण हो भी तो उसे स्वीकार करते हुए विद्यार्थियों में उसके दोषों के प्रति सावधान रहने की प्रेरणा भी देनी होगी। संस्कृत भाषा शिक्षक के रुप में आप में भाषाज्ञान के साथ-साथ स्नेह, दया, प्रेम, लगाव, सहानुभूति, सत्यनिष्ठा, सहयोग, समर्पण भावना, विनोद प्रियता आदि गुणों का होना आपको प्रतिष्ठित अध्यापक के रुप में स्थापित करेगा ।

सामाजिक गुण

शिक्षक संस्कृति को संशोधित कर संवर्धित करता है। इस प्रकार वह एक सामाजिक अभियन्ता अथवा चिकित्सक होता है जो समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर कर समाज की पुनर्रचना में सहायक होता है। उन्हें विद्यार्थियों के साथ-साथ सम्पूर्ण समाज के धार्मिक अन्धविश्वासों, कुप्रथाओं के दुर्गुणों से परिचित कराकर उससे छुटकारा दिलाने के लिए स्वयं आगे बढ़ना चाहिए।

जातिय, धार्मिक कट्टरता, दहेज, जनसंख्या वृद्धि, जादू-टोना, अशिक्षा आदि के दुष्परिणाम से परिचित करा कर शिक्षक समाज में समानता, समरसता,भाईचारा, शिक्षा, स्वच्छता आदि के लिए लोगों को अभिप्रेरित कर सकता है।

शिक्षक कक्षा-कक्ष में तथा कक्षा-कक्ष से बाहर भी उक्त सामाजिक गुणों का विकास करने का बीजा-रोपण कर सकता है। जिससे उनकी छवि विद्यार्थियों एवं लोगों के मन मे एक आदर्श शिक्षक के रुप में स्थापित हो सकेंगे।

मनोवैज्ञानिक गुण

शिक्षण पहले जन्मजात गुण माना जाता था। परन्तु वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व में शिक्षक, शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के सशक्त कड़ी के रुप में स्थापित हो चुके हैं। एक शिक्षक के समक्ष अनके कक्षा-कक्ष में विभिन्न सामाजिक वर्गों के तथा विभिन्न बौद्धिक व सांवेगिक स्तर के विद्यार्थियों का समूह होता है। ऐसे में शिक्षक को अपने-आपको सांवेगिक रुप से सबल बनाने की आवश्यकता है। इसके लिए उन्हें बालमनोविज्ञान (शिक्षा मनोविज्ञान) का ज्ञान होना अनिवार्य है।

शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य ठीक हो जिससे कि शिक्षार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का ध्यान रख सकें। शिक्षक में बालक के वृद्धि-विकास,आयु के अनुरूप भाषायी विकास, शारीरिक, बौद्धिक व सांवेगिक विकास के क्रमों को समझने तथा बालक के व्यवहार को समझकर अपने सकारात्मक सोच के अनुरूप अपने शिक्षण प्रक्रिया निश्चित करनी चाहिए।

कक्षा-कक्ष में कुछ विद्यार्थी प्रतिभा सम्पन्न, कुछ मन्द बुद्धि के भी हो सकते हैं, प्रायः देखा गया है कि 60% शिक्षार्थी औसत बुद्धि वाले होते हैं। ऐसे में शिक्षक का उन सबकों साथ लेकर चलना किसी चुनौती से कम नहीं है। इस स्थिति में वह शिक्षक जो मनोविज्ञान के ज्ञाता है अर्थात् जिसमें क्रोध, भय आदि पर नियन्त्रण कर अपने सांवेगिक संतुलन द्वारा विविध प्रकार के आवश्यकता वाले शिक्षार्थियों, अभिभावकों तथा अधिकारियों व सहकर्मियों से अपनी सूझ-बूझ से व्यवहार करने में समर्थ हो सकता है।

नैतिक गुण

भाषा शिक्षक ही नहीं किसी भी शिक्षक में नैतिक गुणों का होना अनिवार्य है।क्योंकि एक बालक माता-पिता के बाद शिक्षक के सान्निध्य में सर्वप्रथम आता है। बालक सर्वाधिक अनुकरण से सीखता है। अतः शिक्षक विविध नैतिक गुणों जैसे-नियमितता, समयबद्धता, सत्य भाषण. ईमानदारी, सच्चरित्रता, बंधुता आदि का उदाहरण प्रस्तुत कर बालाकों के लिए प्रेरणा स्त्रोत हो सकता है।

आप माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों के संस्कृत भाषा शिक्षक हैं। आप का प्रथम कर्त्तव्य है शुद्ध उच्चारण करना, संस्कृत साहित्य के सूक्तियों, सुभाषितों का संकलन करना, जो नैतिक गुणों से युक्त हो, अपने बोलचाल में उसका प्रयोग करना, भित्ति पत्रों के रुप में विद्यालय कक्ष में लगाना, छोटी-छोटी पञ्चतन्त्र की कहानियों के माध्यम से छात्रों में संस्कृत भाषा व साहित्य में रुचि जगाने के साथ नैतिक गुणों की शिक्षा प्रदान करना, इस से पहले सभी गुण आप में हों।

अभ्यास प्रश्न

4. शिक्षक के वैयक्तिक गुण कितने प्रकार के हैं ? एक वाक्य में उत्तर दें।
5. आप अपने छात्र जीवन के समय आपके संस्कृत शिक्षक के गुणों की सूची तैयार करें। पाँच वाक्यों में उत्तर दें।

5.5 भाषा शिक्षक की योग्यता

'भाषा शिक्षक' का दायित्व अन्य शिक्षकों की अपेक्षा अधिक होता है। भाषा शिक्षक अर्थात् भाषा और शिक्षक ये दो शब्दों का संयोग है। भाषा अर्थात् शिक्षण में सशक्त/भाषा में निष्णात के साथ ही शिक्षण के विविध कलाओं से सम्पन्न व्यक्ति ही भाषा शिक्षक के योग्य होते हैं। यहाँ मुख्य रुप से दो प्रकार की योग्यताओं की चर्चा की गयी हैं-1. भाषा(शिक्षा) एवं 2. व्यावसायिक (शिक्षणशास्त्रीय) । यहाँ क्रमशः दोनों का विशेष रुप से अध्ययन करेंगे।

शैक्षिक योग्यता

भाषा शिक्षक से सबसे पहली अपेक्षा समाज को रहती है कि उनका व्यक्तित्व कैसा है? व्यक्तित्व शारीरिक एवं मानसिक रुप से संतुलित हों, दोनों रुप से संतुलित व्यक्ति ही उत्कृष्ट प्रतिभा का पर्याय होता है। उत्कृष्ट प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति होने के साथ-साथ उनमें आवश्यक शैक्षिक योग्यता हो। माध्यमिक स्तरीय विद्यालय में शिक्षण के लिए अनिवार्य शैक्षिक योग्यता सम्बद्ध भाषा अथवा विषय में कम से कम मुख्य रुप से स्नातक हो। विशेषकर भाषा शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि सम्बद्ध भाषा के साथ मातृभाषा का भी ज्ञान हो।

संस्कृत भाषा शिक्षक की शैक्षिक योग्यता न्यूनतम स्नातक अथवा शास्त्री उत्तीर्णता की डिग्री तथा प्रशिक्षण(बी.एड./शिक्षाशास्त्री) निर्धारित है। जिससे कि विषय ज्ञान को सही तरीके से शिक्षार्थियों को सम्प्रेषित कर सके। वर्तमान में उपाधि तथा योग्यता दोनो का समेकित रुप से होना निश्चित किया जाता है।

- **संस्कृत भाषा का ज्ञान-** संस्कृत भाषा शिक्षक में उपाधि तो हो साथ ही उसकी भाषा पर पूर्ण अधिकार भी हो। उन्हें भाषा के सभी तत्वों का ज्ञान हो।
- **संस्कृत व्याकरण का ज्ञान-** मानक भाषा का मुख्य आधार व्याकरण होता है। इसलिए संस्कृत भाषा शिक्षक को व्याकरण का पूर्ण ज्ञान हो, जिससे कि भाषा के शुद्ध रुप का प्रयोग कुशलता पूर्वक कर सकें।
- **संस्कृत साहित्य का ज्ञान-** भाषिक पक्ष के साथ-साथ संस्कृत शिक्षक को संस्कृत के साहित्य का भी ज्ञान होना चाहिए, जिससे वह छात्रों को पाठ्यपुस्तक में निर्धारित लेखकों व कवियों के सम्बन्ध में पढ़ाते समय उनके व्यक्तित्व व कृतित्व की जानकारी प्रदान कर संस्कृत में रुचि उत्पन्न कर सके।

संस्कृत के छन्द व अंलकार का सामान्य ज्ञान की अपेक्षा शिक्षक से रहती है। आप से आशा की जाती है कि आप संस्कृत से सम्बद्ध विभिन्न पाठ्य सहगामी क्रियाओं के आयोजन द्वारा शिक्षार्थियों के भाषा संवर्धन में योगदान करेंगे।

व्यावसायिक योग्यता

शिक्षण एक सेवा है, जो अन्य सेवा व व्यवसाय से भिन्न है। पूर्व में शिक्षक प्रायः उससे कहा जाता था, जिस की वाक् चातुर्य अच्छी होती थी। भले ही उसमें विषय का गम्भीर ज्ञान हो या नहीं । पर वर्तमान परिदृश्य इसके विपरीत है सर्वप्रथम उसमें विषय का गम्भीर ज्ञान हो साथ ही व्यवसायिक कुशलता अर्थात् शिक्षण विज्ञान के ज्ञान व उपाधि दोनों अनिवार्य है। जिससे कि कुशलता पूर्वक, अल्प समय में गम्भीर विषय को भी शिक्षार्थियों को बोध कराया जा सके। संस्कृत अध्यापक के लिए व्यवसायिक कुशलता प्रदान करने हेतु संस्कृत शिक्षण विज्ञान (शास्त्र) में उपाधि विभिन्न विश्वविद्यालयों के शिक्षाशास्त्र विभाग द्वारा शिक्षा स्नातक(बी.एड.) तथा मानव संसाधन विकास मंत्रालय (एम.एच.आर.डी.)भाषा विभाग, भारत सरकार द्वारा स्थापित श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत

विद्यापीठ, नई दिल्ली, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली तथा राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति, संस्कृत अध्यापकों के लिए व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान करती है।

शिक्षण के तीन चरण होते है-शिक्षण पूर्व, संपादन तथा शिक्षणोत्तर। एक प्रशिक्षित शिक्षक को उन तीनों चरणों का पूर्ण ज्ञान होने से वह पाठ तथा शिक्षार्थी दोनों के साथ न्याय करता है। शिक्षण पूर्व की प्रक्रिया में शिक्षक सोच समझकर पाठ को नियोजित करता है। सम्पादन में पाठ को प्रस्तुत करता है, व्याख्या करता है एवं बोध कराने के लिए उचित उदाहरण का सहारा लेता है। शिक्षणोत्तर क्रिया(चरण) में शिक्षक शिक्षार्थियों से अधिगम प्रतिफल की अपेक्षा रखता है। इसके लिए कई प्रविविधियों जैसे-प्रश्नोत्तर, भाषण, लेखन आदि का उपयोग करता है।

एक ओर जहाँ शिक्षक में अपने विषय पर पूर्ण अधिकार होना आवश्यक है वहीं दूसरी ओर शिक्षण कौशल का ज्ञान एवं प्रयोग दोनों ही शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को सुगम एवं सरल बनाता है।

अन्य योग्यताएँ

अन्य अपेक्षित योग्यताओं में शिक्षक में शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए निम्नांकित सहायक शिक्षण कौशलों तथा सहायक सामाग्रियों के प्रयोग की योग्यता भी अन्यतम हैं, यथा –

(क) प्रस्तावना

(ख) प्रश्न पूछना

(ग) सूक्ष्म रुप से जाँच करना

(घ) पुनर्बलन करना

(ङ) स्पष्ट करना

(च) उदाहरण देकर समझाना

(छ) अध्येताओं के अवधानात्मक व्यवहार को पहचाना

(ज) दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग करना।

(झ) श्यामपट्ट उपयोग करना

(ञ) मौन तथा अशाब्दिक संकेत देना।

(ट) उद्दीपन में विविधता लाना।

(ठ) समापन करना।

अभ्यास प्रश्न

6. माध्यमिक स्तर के संस्कृत शिक्षक की अनिवार्य योग्यता क्या है?
7. व्यावसायिक योग्यता का अर्थ लिखें।

5.6 संस्कृत शिक्षक एवं भाषायी कौशल

संस्कृत शिक्षक एक भाषा शिक्षक होता है। संस्कृत शास्त्रीय भाषा है जो आम लोगो के बोलचाल से दूर है। यहाँ तक की संस्कृत जानने वाले या उपाधि धारकों का एक वर्ग ऐसा है जो संस्कृत को अन्य भाषा के माध्यम से पढ़ते-लिखते हैं। ऐसे वर्ग संस्कृत में निहित ज्ञान को ही ग्रहण करते हैं ना कि संस्कृत भाषा को। आपको संस्कृत शिक्षक होने के कारण संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार होना चाहिए ताकि आपने शिक्षार्थियों, भाषा के विविध तत्त्वों को विविध भाषाई कौशल के माध्यम से विकसित कर सके। संस्कृत शिक्षक को श्रवण-वाचन-पठन तथा लेखन कौशल के साथ-साथ 'निदानात्मक एवं उपचारात्मक' तथा क्रियात्मक अनुसंधान का पर्याप्त ज्ञान हो। जिससे कि भाषा अधिगम में आने वाली कठिनाईयों को दूर कर शिक्षण को बोधगम्य बना सकें।

श्रवण कौशल

भाषा अधिगम सिद्धान्त का प्रथम चरण है श्रवण करना। श्रवण से अभिप्राय है सुनना तथा समझना, मौखिक भाषा में श्रवण का सर्वाधिक महत्त्व है।

श्रवण तथा वाचन में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। श्रवण के लिए श्रवणेन्द्रिय का ठीक होना शारीरिक कारण है वहीं मानसिक कारण चित्त का एकाग्र होना अर्थात् अवधान का दूसरा स्थान है, तीसरा उद्देश्य केन्द्रित होना। एक भाषा शिक्षक में उक्त क्रियाविधियों का ज्ञान जरूरी है। क्योंकि जैसा सुनता है व्यक्ति ठीक वैसा ही बोलता है। अतः क्या, कितना और कैसे? सुने इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए। भारतीय श्रुति परम्परा प्राचीन एवं समृद्ध है।

वाचन कौशल

वाचन अथवा बोलना शिक्षक का प्रमुख कौशल है। कहा भी गया है- "ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय औरन कौ शीतल करे आपहु शीतल होय।" अर्थात् आपकी वाणी श्रोता को प्रभावित करने वाली हो। इसमें भाषा-शिक्षक की सबसे बड़ी भूमिका है। सर्व प्रथम भाषा शिक्षक उच्चारण पर ध्यान देकर, शुद्ध उच्चारण का अभ्यास करें। क्योंकि भाषा शिक्षक का सर्वश्रेष्ठ गुण उनका शुद्धोच्चारण है। आप समझ चुके हैं कि संस्कृत एक संश्लिष्टात्मिका भाषा है। इसमें शब्दों के अशुद्ध उच्चारण से अर्थ का अनर्थ हो जाता है। संधि तथा समासिक पदों के विच्छेद व विग्रह गलत होने से उसका अर्थ भी विपरीत हो सकता है। इस तरह अशुद्ध उच्चारण के दो कारण हो सकते है- उच्चारण स्थान का दूषित होना तथा अशुद्ध अनुकरण।

आपने देखा कि शुद्ध उच्चारण के लिए प्रथम उत्तरदायी पक्ष है -उच्चारण स्थान से सम्बन्धित अवयव जैसे-नाक, कान, जिह्वा, ओष्ठ, कण्ठ, दन्त आदि का दोष रहित होना। दूसरा पक्ष है- अशुद्ध तथा अपूर्ण अनुकरण। इसके लिए शैक्षिक वाता वरण का न होना एवं क्षेत्रिय प्रभाव। इन सभी दोषों को दूर करने का दायित्व एक भाषा शिक्षक का होता है । अतः उचित पर्यवेक्षण, भाषा प्रयोगशाला, वर्णविच्छेद तथा निर्देशित अभ्यास के माध्यम से शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कर, अपने दिनचर्या तथा कक्षा-कक्ष में उसका उपयोग कर शिक्षार्थी में उच्चारण/शुद्ध वाचन कौशल का विकास कर सकते हैं।

पठन कौशल

पठन तो सभी शिक्षकों का कर्तव्य है, अपितु भाषा शिक्षक का इस क्रिया में निष्णात होना अनिवार्य है। पठन क्रिया लेखक व श्रोता(बोद्धा) के अन्तःकरण को जोड़ता है। लेखक के भावों तथा विचारों से श्रोता(बोद्धा) को अवगत करता है।

पठन क्रिया के सम्पादन में आंगिक अवयव यथा- आँख, नाक,ओष्ठ, जिह्वा, दन्त आदि का सब से बड़ा योगदान है। साथ ही शुद्ध व सस्वर पाठ के लिए उचित प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है, जिससे कि विविध विराम चिह्नों, गति तथा लय के अनुरुप पाठ किया जा सके। विराम चिह्नों का पूर्ण ज्ञान ही लेखक के विचारों को अभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है, वहीं गति तथा लय कवि के भावों, सौन्दर्य तथा रसानुभूति में सहायक होता है। अतः संस्कृत भाषा शिक्षक को संस्कृत के ध्वनि-चिह्नों, विरामचिह्नों एवं छन्दों का ज्ञान योग्य शिक्षक से प्राप्त कर अपने पठन कौशल को कुशल बनाना चाहिए। ताकि शिक्षार्थी को विभिन्न प्रकार के पठन में दक्ष बनाया जा सके।

लेखन कौशल

लिखित भाषा में लेखन का महत्त्व सर्वाधिक है। लेखन से अभिप्राय लिपि ज्ञान से सृजनात्मक लेखन पर्यन्त है। इसके लिए सर्वाधिक दायित्वपूर्ण व्यक्ति भाषा शिक्षक है। जो शिक्षार्थी को लिपि ज्ञान (ध्वनि संकेत), शब्द निर्माण, वाक्य निर्माण तथा सृजनात्मक लेखन का ज्ञान प्रायःअनुलेख, सुलेख, श्रुतलेखक तथा रचना (पत्र एवं अनुवाद) के माध्यम से कराता है।

अनुलेख व सुलेख द्वारा शुद्ध वर्तनी व मात्राओं का ज्ञान दृढ़ होता है, आँख और हाथ का समन्वय होता है। वहीं श्रुतलेख द्वारा लेखन में गति तथा कान और हाथ में समन्वय होता है। जबकि रचनात्मक (पत्र, निबंध व कविता) लेखन(रचना) द्वारा मन के विचार, चिन्तन व अनुभव को एक सकारात्मक आकार/स्वरूप प्रदान किया जाता है। अर्थात् संस्कृत शिक्षक उक्त लेखन क्रियाओं द्वारा शिक्षार्थियों को लेखन कौशल में दक्ष बनाने का प्रयत्न करेंगे।

निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण एवं क्रियात्मक अनुसंधान का ज्ञान

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में शिक्षक का स्थान एक चिकित्सक का होता है। सिखाना सरल कार्य है परन्तु सीखने में आने वाली कठिनायों तथा अशुद्ध अधिगम को बतलाना कठिन कार्य है। शिक्षक वही सफल

माना जाता है जो उक्त क्रिया सम्पादन में समर्थ हो। विशेष रुप से संस्कृत भाषा शिक्षक के लिए यह दायित्वपूर्ण कार्य है, क्योंकि शिक्षार्थियों में वर्ण तथा शब्दों का सम्प्रत्यय पाँचवी कक्षा तक मातृभाषा के माध्यम से बन चुका होता है जो सही तथा गलत दोनो हो सकते हैं। सही तो सही है परन्तु जिन गलत सम्प्रत्ययों का विकास हो चुका होता है उसे ठीक कराना, नाकों चने चबाने से कम नहीं है। इसके लिए भाषा शिक्षक में निदानात्मक एवं उपचारात्मक शिक्षण के साथ क्रियात्मक अनुसंधान का ज्ञान अपेक्षित है।

देखा गया है कि शिक्षार्थी -विसर्ग(:) का उच्चारण अह के जगह एह अथवा अहा करता है। इसी प्रकार से- . (अं), ँ (अनुनासिक), ऋ का रि, रु/र, 'न' का ण तथा ण का न, र का ड़ तथा ड़ का र, व का ब तथा ब का व, द् य(द्य) का ध, श, ष, स का ष, श, स एवं स, ष, श, क्ष का छ अथवा च्छ आदि दोषों के साथ मात्राओं की गलतियाँ ह्रस्व ि, ु के जगह दीर्घ ी, ू तथा दीर्घ के जगह ह्रस्व तथा विरामचिह्नों का भी दोषपूर्ण ज्ञान होता है। अतः संस्कृत शिक्षकों के पास इन दोषों का पता लगाना तथा उसका उपचार करने के लिए क्रियात्मक अनुसंधान ही कारगर उपाय है। जिनके प्रयोग द्वारा भाषा शिक्षक शिक्षार्थियों के भाषा दोषों को दूर करने का प्रयत्न करता है।

अभ्यास प्रश्न

8. प्रमुख भाषायी कौशलों के नाम लिखें।
9. भाषा दोषों को दूर करने के लिए प्रमुख साधनों का उल्लेख करें।

5.7. सारांश

आप ने प्रस्तुत इकाई में शिक्षक के विभिन्न नाम-शिक्षक, शास्त्री, उपाध्याय, आचार्य, गुरू इत्यादि का परिचय प्राप्त किया है। विद्यालय में अर्थ के आधार पर कक्षा शिक्षक तथा विषय शिक्षक एवं भाषा शिक्षक पुनः प्रथम(मातृ) भाषा शिक्षक एवं द्वितीय(अन्य) भाषा शिक्षक में अन्तर करना सीखा है।

भाषा शिक्षक के रुप में संस्कृत भाषा शिक्षक का आशय़ एवं भाषा अधिगम में भाषा शिक्षक की भूमिका एवं महत्व तथा कर्त्तव्य का अध्ययन किया है।

संस्कृत भाषा शिक्षक के गुणों को जैसे- व्यक्तित्व अर्थात् वैयक्तिक गुण के अन्तर्गत शिक्षक का स्वभाव, कर्त्तव्य, संस्कृत भाषा पर अधिकार, शिक्षार्थि के प्रति व्यवहार, सामाजिक गुण, शिक्षक सर्वप्रथम एक सामाजिक प्राणी है। अतः समाज की उनसे आशा तथा समाज के प्रति उनके दायित्व, मनोवैज्ञानिक गुण, भय, क्रोध, चिन्तन, स्मृति तथा संवेदना तथा नैतिक गुणों के रुप में नियमबद्धता,समयबद्धता, ईमानदारी, कर्त्तव्यनिष्ठता जैसे गुण भाषा शिक्षक को किस तरह एक आदर्श शिक्षक के रुप में प्रतिष्ठित करता है।

भाषा शिक्षक की योग्यता के अन्तर्गत शैक्षिक तथा व्यावसायिक योग्यता पुनः उपाधि एवं भाषा एवं साहित्य दोनो पक्षों के ज्ञान का विवेचन किया गया है। व्यावसायिक योग्यता के अन्तर्गत अनिवार्य प्रशिक्षण तथा शिक्षणशास्त्र की अनिवार्यता को स्पष्ट किया गया है साथ ही अन्य भाषा का ज्ञान एवं अन्य योग्यता का भी परिचय कराया गया है।

संस्कृत भाषा शिक्षक में उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त तथा अनिवार्य भाषायी कौशल श्रवण-वाचन-पठन एवं लेखन कौशल के महत्व के साथ-साथ निदानात्मक व उपचारात्मक शिक्षण में सहायक क्रियात्मक अनुसंधान किस तरह शिक्षार्थियों के भाषायी दोषों के दूर करने में सहायक हो सकता है का वर्णन किया गया है।

5.8.अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1. उपाध्याय, शास्त्री, आचार्य
2. मातृभाषा शिक्षक प्रारम्भिक अर्थात् बोलचाल की भाषा के मानक रुप का शिक्षण करता है। जहाँ शिक्षार्थियों में मौखिक भाषा का विकास हो चुका होता है। मातृभाषा शिक्षण में शिक्षक के अतिरिक्त, परिवार तथा मित्रमण्डली से भी सीखता है। जबकि संस्कृत भाषा अन्य भाषा के रूप में कक्षा छठी से पढ़ाई जाती है तथा यह शिक्षक तथा पाठ्यपुस्तक पर आधारित है।
3. विद्यालय में कक्षा शिक्षक तथा विषय शिक्षक होते हैं। विषय शिक्षक, गणित, विज्ञान, सामाजिक तथा भाषाशिक्षक होते हैं। भाषाशिक्षक में मातृभाषा तथा अंग्रेजी भाषा के बाद संस्कृत भाषा शिक्षक का स्थान होता है। कहीं वैकल्पिक रुप में तो कहीं एक भाषा के रूप में कुछ छात्रों द्वारा सीखे जाने से संस्कृत भाषा शिक्षक का स्थान सम्मान जनक है।
4. वैयक्तिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा नैतिक।
5. समय से कक्ष में आते थे। प्रत्येक दिन एक छोटे संस्कृत वाक्य सिखाते थे। अनुवाद करने का कार्य देते थे तथा अगले दिन संशोधन करते थे। श्लोक को छन्द में गाने का अभ्यास कराते थे। शब्द रुप या धातुरुप प्रयोग के आधार पर सिखाते थे।
6. संस्कृत स्नातक तथा बी.एड. या शिक्षाशास्त्री।
7. शिक्षणशास्त्र का ज्ञान।
8. श्रवण कौशल, वाचन कौशल, पठन कौशल एवं लेखन कौशल।
9. भाषादोषों को दूर करने के लिए निदानात्मक तथा उपचारात्मक शिक्षण तथा क्रियात्मक अनुसंधान के क्रियाविधियों के साथ-साथ शिक्षक की भाषायी अभिरूचि प्रमुख साधन है।

5.9 उपयोगी पुस्तकें

1. शिक्षण और अधिगम की सृजनात्मक पद्धतियाँ, सन्तोष शर्मा, एन.सी.ई.आर.टी, नई दिल्ली।

2. शिक्षण कौशल- प्रो. कृष्ण कुमार- एजुकेशन मीरर।
3. Models of the Knowledge Base of Second language Teacher Education- Richard Day, University of Hawai.
4. Language Teacher Education: An Integrated Program for ELT Teacher Training- Roger Bowens. CFILTR London-1987.
5. संस्कृत शिक्षण-डा. रामशकल पाण्डेय-विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
6. संस्कृत शिक्षण- डा. संतोष मित्तल- आर.लाल.बुक. डिपो, मेरठ।
7. हिन्दी शिक्षण- प्रो. रमन बिहारी लाल- रस्तोगी बुक, मेरठ।
8. Teaching of Social Science: Dr. R.A Sharma, R. Lal B.D. Meerut.

5.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भाषा शिक्षण में शिक्षक की भूमिका की समीक्षा करें।
2. संस्कृत भाषा शिक्षक के कर्त्तव्यों का वर्णन करें।
3. संस्कृत भाषा शिक्षक के विभिन्न गुणों को उदाहरण देकर समझाएँ।
4. संस्कृत भाषा शिक्षण क्रम में आने वाले कठिनाईयों का उल्लेख करें।
5. संस्कृत शिक्षण में रुचि उत्पन्न करने वाले क्रियाकलापों की उपयोगिता का वर्णन करें।
6. शिक्षार्थियों के भाषाई दोषों को पता लगाने वाले क्रियाविधियों का उल्लेख करें।
7. शिक्षक के लिए क्रियात्मक अनुसंधान के महत्त्व का वर्णन करें।